ekuuh; vftr dqekj flUgk] U;k;efrZ

रिझू पहान एवं अन्य

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) संख्या 5844 वर्ष 2002. 22 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

(क) छोटोनागपुर भूधृति अधिनियम, 1908—धारा 71(A)–उप-समाहर्त्ता की शक्ति–उप-समाहर्ता में निहित शक्ति एक ''अर्ध-न्यायिक'' शक्ति है और एक विधायी शक्ति नहीं है–उसे न्यायिक रूप से यह तथ्य परीक्षित करना होता है कि क्या अधिनियम के प्रावधानों के उल्लंघन करते हुए या एक कपटपूर्ण तरीके से जमीन का हस्तांतरण हुआ है। (पैरा 9)

(ख) छोटोनागपुर भूधृति अधिनियम, 1908—धारा 71—कब्जे का प्रत्यावर्तन–सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71 अनुसूचित जनजाति से संबंधित एक रैयत के हित का संरक्षण करती है जिसे अवैधानिक साधनों द्वारा बलपूर्वक कब्जे से वंचित किया गया है–पुत्री को उसके पति की सम्पति या पिता की सम्पति पर पैतृक अधिकार नहीं होता है–पुरूष वंशजों की अनुपस्थिति में सम्पत्ति विधिक उत्तराधिकारयों या नजदीकी गोत्रज (agnates) के पास वापस जाएगी और 'घर दामाद' को नहीं। (पैरा 10 एवं 11)

अधिवक्तागण.–Mr. B.K. Pandey, For the Petitioners; Mr. Surendra Kumar, For the Respondents.

अजित कुमार सिन्हा, न्यायमूर्ति.–एस॰ ए॰ आर॰ पुनरीक्षण केस संख्या 78/99 में आयुक्त, दक्षिणी छोटानागपुर प्रमंडल, राँची, द्वारा पारित दिनांक 26.6.2002 आदेश के अभिखंडित करने हेतु प्रत्यर्थीगण के विरूद्ध एक रिट, आदेश या निर्देश के निर्गत करने के लिए याचीगण ने इस रिट याचिका को दाखिल किया है जिसके माध्यम से कब्जे को पुर:स्थापित किया गया था और उप-समाहर्ता के आदेश को अपास्त कर दिया गया था।

2. तथ्य, संक्षेप में निम्नांकित रूप से है:–

ग्राम–गुरेगैन, पुलिस थाना–ओरमांझी, जिला–राँची के पुनरीक्षण सर्वेक्षण खाता संख्या 51 एवं 79 के अन्तर्गत लगभग 21.61 एकड़ माप की एक भूमि से वर्तमान मामला संबंधित है और अधिकारों के पुनरीक्षण सर्वेक्षण अभिलेखों में यह सुकर पहान के नाम से अभिलिखित है। याची के अनुसार सुकर पहान का एक भाई बैजा पहान था जो अलग रह रहा था। भाई एवं प्रत्यर्थी संख्या 5 के बीच संबंध को इंगित करने के लिए याची ने एक वंशावली तालिका दी है और इसे निम्नांकित रूप से उत्कथित किया गया है:-

खिरूआ पहान

सुकर पहान	बैजा पहान
रोगन पहान	भूक्खन पहान
(सुलेखी पति-किशा पहान (पुत्री)	बल्लू पहान

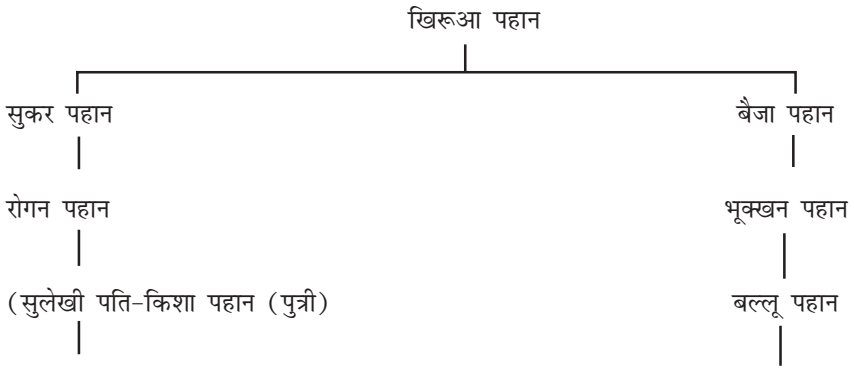

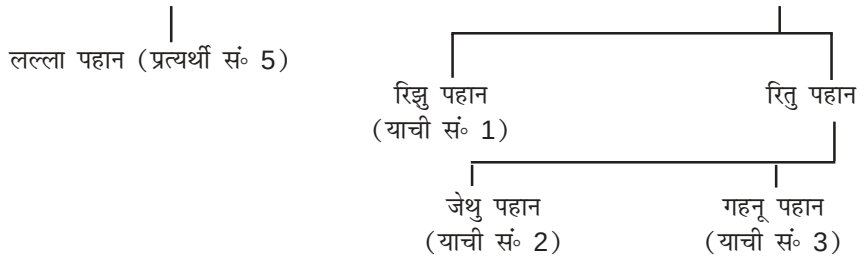

3. याचीगण के अनुसार प्रत्यर्थी संख्या 5 ने अनुसूचित क्षेत्र विनियमन, 1969 के अधीन विशेष पदाधिकारी के समक्ष छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71-A के अधीन उपरोक्त भूमि की पुनर्बहाली के लिए वर्तमान याची संख्या 1 एवं याची संख्या 2 एवं 3 के पिता के विरूद्ध एक आवेदन इस आधार पर दाखिल किया कि छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम का उल्लंघन करते हुए भूमि याची के अवैध कब्जे में थी। मामला दर्ज किया गया और इसे एस॰ ए॰ आर॰ केस संख्या 51/87 संख्या दी गई। याचीगण ने यह कहते हुए अपनी कारण-पृच्छा दाखिल किया कि वे अभिलिखित अभिधारियों सुकर पहान के विधिक उत्तराधिकारी एवं गोत्रज थे और प्रश्नाधीन जमीन पर उनका कब्जा वारिस एवं उतराधिकारियों के तौर पर था और जमीन का कोई हस्तांतरण नहीं हुआ था। याची की ओर से यह तर्क भी दिया गया कि प्रत्यर्थी संख्या 5 विधिक वारिस नहीं था और इस प्रकार उसे जमीन की पुनर्बहाली इप्सित करने का कोई अधिकार नहीं है। विद्वान विशेष पदाधिकारी ने दिनांक 21.12.1991 के अपने आदेश के माध्यम से प्रत्यावर्तन के लिए आदेश किया। दिनांक 21.12.1991 के आदेश को चुनौती देते हुए अपर समाहर्ता, राँची के समक्ष याची संख्या सं॰ 1 एवं याची सं॰ 2 एवं 3 द्वारा एक अपील दाखिल की गई और इसे पंजीकृत किया गया और इसे एस॰ ए॰ आर॰ अपील संख्या 156/89 के तौर पर अंकित किया गया एवं विद्वान अपर समाहर्ता ने दोनो पक्षों की सुनवाई के उपरांत विशेष पदाधिकारी द्वारा पारित आदेश को अपास्त कर दिया और दिनांक 25.11.1998 के आदेश के माध्यम से अपील को अनुज्ञात कर दिया।

4. प्रत्यर्थी संख्या 5 ने व्यथित होने के कारण आयुक्त, दक्षिणी छोटानागपुर प्रमंडल, राँची के विद्वान न्यायालय के समक्ष दिनांक 25.11.1998 के आदेश को चुनौती देते हुए एक पुनरीक्षण दाखिल किया और इसे दर्ज किया गया एवं एस॰ ए॰ आर॰ पुनरीक्षण संख्या 78/99 के तौर पर अंकित किया गया। विद्वान आयुक्त, दक्षिणी छोटानागपुर प्रमंडल, राँची ने पक्षों की सुनवाई करने के उपरांत पुनरीक्षण को अनुज्ञात किया और विशेष पदाधिकारी द्वारा पारित दिनांक 21.12.1991 के आदेश का प्रत्यावर्तन करते हुए उप-समाहर्ता द्वारा पारित दिनांक 25.11.1998 के आदेश को अपास्त कर दिया। पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 26.6.2002 के आदेश को चुनौती देते हुए वर्तमान रिट याचिका को दाखिल किया गया है।

5. याची द्वारा उठाया मुख्य तर्क यह है कि पुनरीक्षण प्राधिकार सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71-A के धारकों पर विचार करने में विफल रहा और वैसा आदेश पारित कर दिया जो उसकी अधिकारिता के बाहर था। यह भी तर्क दिया गया है कि पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा निर्णीत घर-दामाद का मुद्दा सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71-A के अधीन यथा अधिकथित पुनरीक्षण प्राधिकारी की पुनरीक्षण शक्ति और अधिकारिता के कार्य-क्षेत्र के भीतर नहीं था। याची के अधिवक्ता यह भी निवेदन करते हैं कि ऐसा कोई हस्तांतरण नहीं था जो पक्षों के बीच हुआ हो और वर्तमान याचीगण का कब्जा था क्योंकि वे अभिलिखित अभिधारियों के वारिस और नजदीकी गोत्रजें थे और उनकी मृत्यु के बाद उन्होंने अभिलिखित अभिधारी का स्थान ग्रहण किया और इस प्रकार प्रत्यर्थी आयुक्त द्वारा पारित प्रत्यावर्तन का आदेश अपास्त किए जाने के लायक है। यह भी तर्क दिया गया है कि मुण्डा परम्परागत विधि के अनुसार प्रत्यर्थी संख्या 5 न तो एक रैयत था और न ही एक बारिस था और इसलिए उसे सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71-A के अधीन प्रत्यावर्तन इप्सित करने का कोई अधिकार नहीं है।

6. निजी प्रत्यर्थी संख्या 5 के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि सुकर पहान के पुत्र रोगन पहान को कोई पुरूष संतान नहीं थी और केवल सुलेखी नामक एक पुत्री थी। रोगन पहान किशा पहान को उसके बचपन में ले आया और अपने घर में रखा जो मवेशी चराया करता था और भूमि की जुताई में रोगन पहान की सहायता किया करता था और जब किशुन पहान और सुलेखी ने विवाह की आयु प्राप्त कर ली तो उक्त रोगन पहान ने सुलेखी एवं किशुन का विवाह करा दिया और किशुन पहान को अपने घरदामाद के तौर पर रख लिया और इस प्रकार किशुन पहान गुरगैन गाँव स्थित अपनी ससुराल में रह गया। उक्त विवाह संबंध से प्रत्यर्थी संख्या 5 उत्पन्न हुआ। प्रत्यर्थी संख्या 5 द्वारा उठाया मुख्य तर्क यह है कि उसका पिता किशुन पहान रोगन पहान के साथ उसके घरदामाद के तौर पर रहा और घरदामाद के सारे कार्य किए और उसका खाता संख्या 51 & 79 की जमीन पर कब्जा भी रहा और भूमि की जुताई करके उसने कब्जे का सारे कार्य किए और उसका एक पुत्र है जिसने उसकी मृत्यु के उपरांत अपने नाना रोगन पहान की चल एवं अचल सम्पत्ति समेत सारी सम्पदा का उत्तराधिकार से प्राप्त किया। प्रत्यर्थी संख्या 5 के अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि उनका लम्बे समय से प्रश्नाधीन जमीन पर कब्जा था और इसे याचीगण ने भी प्रश्नाधीन जमीन के ऊपर अभिधान को स्वीकार किया और यह अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य में भी आया है।

7. मैने प्रतिद्वंदी निवेदनों, अभिवाकों और पक्षों द्वारा उठाए गए तर्क पर विचार किया है और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आक्षेपित आदेश पर भी विचार किया है। जिसे चुनौती देने का इप्सित किया गया है। विचार के लिए मुख्य मुद्दा यह है कि क्या घर-दामाद (इसमें प्रत्यर्थी संख्या 5) अभिलिखित अभिधारियों के विधिक वारिस एवं गोत्रजों के विरूद्ध प्रश्नाधीन जमीन के प्रत्यावर्तन के लिए सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71-A का आलम्ब ले सकता है।

8. प्रधान विचारण के लिए निम्नांकित प्रश्न उद्भूत होते हैं।

(i) क्या सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71-A के अधीन आक्षेपित आदेश पारित करने की अधिकारिता पुनरीक्षण प्राधिकारी को है?

(ii) क्या आक्षेपित आदेश में निष्कर्ष इस आधार पर अनुचित है कि मुण्डा जनजाति समुदाय के परम्परागत अधिकारों के अन्तर्गत अगर एक रैयत कोई पुरूष संतान पीछे छोड़े बगैर मृत्यु को प्राप्त होता है तो उसकी विधवा अपने पति की सम्पत्तियों को उत्तराधिकार से प्राप्त नहीं करती है और इसलिए क्या ऐसी सम्पत्तियाँ मृतक पति के गोत्रजों को वापस चली जाएगी?

(iii) क्या विवादित जमीन को विधिवत रूप से प्रत्यर्थी संख्या 5 को वापस नहीं किया जा सकता था इस तथ्य के बावजूद कि वह खतियानी रैयत का विधिक वारिस नहीं है।

9. सी॰ ए॰ टी॰ अधिनियम, 1908 की धारा 71 के अधीन केवल अनुसूचित जनजाति के ही एक रैयत को संरक्षण प्रदान किया जा सकता है जिसे अवैधानिक साधनों द्वारा बलपूर्वक कब्जा-विहीन कर दिया गया है। वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी संख्या 5 न तो एक रैयत है और कोई हस्तांतरण या बलपूर्वक कब्जा छिना गया है और इस प्रकार सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71-A का न तो आलम्ब लिया जा सकता है और न ही वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर यह लागू होती है। पुनरीक्षण प्राधिकारी वर्त्तमान मामले में यह समझने में विफल रही कि किसी भी प्राधिकारी को आनुषंगिक या अधीनस्थ विधायी प्रकार्यों तक के इस्तेमाल से निहित नहीं किया गया है। अधिनियम की धारा 71-A उप-समाहर्ता में शक्ति निहित करती है परन्तु वह शक्ति स्पष्ट यह निर्धारित करने की शक्ति है कि अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए या कपटपूर्ण रूप से जमीनों का हस्तांतरण हुआ है। प्रदत शक्ति एक अधिनिर्णयन संबंधी शक्ति, एक न्यायिक या अर्ध-न्यायी शक्ति है और एक विधायी शक्ति नहीं है।

10. इस तथ्य के संबंध में कोई विवाद नहीं है कि मुण्ड जनजाति समाज में परम्परागत विधि के अनुसार, एक खतियानी रैयत की विधवा, इसी प्रकार पुत्री को उसके पति की सम्पत्ति पर या पिता

की सम्पत्ति को उत्तराधिकार से प्राप्त करने का कोई अधिकार नहीं होता है, और पुरूष वंशजों की अनुपस्थिति में सम्पत्ति विधिक उत्तराधिकारियों या निकट गोत्रजों के पास वापस चली जाएगी। यह तथ्य रह जाता है कि पक्षों के बीच कोई हस्तांतरण नहीं हुआ है और याचीगण स्वीकार्यत अभिलिखित अभिधारियों के विधिक उत्तराधिकारी और निकटतम गोत्रज होने के कारण उनका कब्जा है और इस प्रकार अभिलिखित अभिधारी की मृत्यु के उपरांत वर्तमान याचीगण ने अभिलिखित अभिधारियों का स्थान ग्रहण किया और सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71-A के अधीन घरदामाद की निशानदेही पर प्रत्यावर्तन का आदेश अवैधानिक और अधिकारिता रहित है।

11. यह निर्दिष्ट करना सुसंगत होगा कि अपीलीय प्राधिकारी, अर्थात्, अपर समाहर्ता, राँची द्वारा साक्ष्य पर विस्तार से विचार किया गया है जिसमें दोनों पक्षों के साक्ष्य को अभिलिखित करने के उपरांत यहां इस स्वीकृत मामले के बारे में निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचा है कि प्रत्यर्थी संख्या 5 (घर–दामाद) प्रश्नाधीन जमीन पर रह भी नहीं रहा था और वह इसकी जगह बड़तुआ में रह रहा था। इस प्रकार उसका अन्यथा रूप से पूर्वजों की सम्पत्ति पर कब्जा भी नहीं था। विद्वान अपर समाहर्ता समूचे साक्ष्य और गवाहों के बयान पर विचार करने के उपरांत इस निष्कर्ष पर भी पहुँचे है कि प्रत्यर्थी संख्या 5 का पिता किशा पहान एक घरदामाद भी नहीं था अन्यथा वह अपने श्वसुर की प्रश्नाधीन जमीन पर रह रहा होता और इस संबंध में कोई दस्तावेज पेश नहीं किया गया था और यह तथ्य कि वह अपने स्वयं के गाँव बड़तुआ में रह रहा था, उसी के गवाहों एवं साक्ष्यों से भी सिद्ध हुआ था।

12. मामले के पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करके वर्तमान रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। और व्ययों के संबंध में किसी आदेश के बिना पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 26.6.2002 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

---

ekuuh; vej'oj lgk; ,oa t;k jk;] U;k;efrx.k

शिव शंकर साह

बनाम

बिहार राज्य (अब झारखंड)

दाण्डिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 428 वर्ष 1990 (P). 20 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

सत्र केस सं॰ 173 वर्ष 1988 में चतुर्थ अपर सत्र न्यायाधीश, दुमका, श्री राम व्यास राम द्वारा पारित दिनांक 1.9.1990 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दण्डादेश के आदेश के विरूद्ध।

भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 302/34—हत्या–यह अभिकथन कि अपीलार्थी ने अपनी पत्नी की हत्या कारित किया है–यह बचाव कि उसकी पत्नी की मृत्यु आग लगने की दुर्घटना में हो गयी जब वह खाना बना रही थी–यह साक्ष्य कि अपीलार्थी या उसके किसी पारिवारिक सदस्य ने मृतक की चीख-पुकार, सुनकर आग बुझाकर उसे बचाने की कोशिश नहीं किया–अभिनिर्धारित, दोषसिद्धि बरकरार रखा गया। (पैरा 15 से 17)

अधिवक्तागण.–Mr. Bhupal Krishna Prasad, For the Appellant; Mr. Binod Singh, For the State.

न्यायालय द्वारा.–वर्तमान अपील सत्र केस सं॰ 173 वर्ष 1988 में चतुर्थ अपर सत्र न्यायाधीश, दुमका द्वारा पारित दिनांक 1.9.1990 के उस निर्णय के विरूद्ध एकमात्र अपीलार्थी शिव शंकर साह द्वारा दाखिल किया गया है, जिसके द्वारा विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने अपीलार्थी को रेणु देवी की हत्या कारित करने के लिए भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/34 के अधीन अपराध हेतु दोषसिद्ध किया था एवं इस प्रकार, उसे आजीवन कठोर कारावास भुगतने का आदेश दिया। यद्यपि विचारण न्यायालय द्वारा

तीन अन्य अभियुक्त अर्थात्, मदन लाल साह, बीना देवी एवं भूली देवी, जिन्हें वर्तमान अपीलार्थी के साथ विचारित किया गया था, को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/34 के अधीन आरोपों से दोषमुक्त किया गया है।

2. किसी नारायण कुमार मुखर्जी (अ॰ सा॰ 3), जो बासुकीनाथ में स्थित एक ''यग शाला'' के पुजारी हैं, ने 5.9.1986 को जारमुंडी थाने के O/C को एक फर्दबयान, इसमें यह अभिकथित करते हुए दिया कि उनका ''यग शाला'' जहाँ वह रहा करते थे, अपीलार्थी के पिता बालगोविन्द साह के मकान के बिल्कुल विपरीत में स्थित था एवं वे उक्त बालगोविन्द साह के पारिवारिक सदस्यों से घनिष्ठता से परिचित थे। उन्होंने अभिकथित किया कि बालगोविन्द साह की बहू, अपीलार्थी की पत्नी, रेणु देवी का अपने ससुरालवालों से मधुर सम्बन्ध नहीं थे एवं उसे अपने पति शिवशंकर साह (अपीलार्थी) द्वारा यातना दिया एवं प्रताड़ित किया जा रहा था जिसके कारण पिछले छः महीने से अपने मायके में ठहरी थी। उन्होंने आगे अभिकथित किया कि बालगोविन्द साह की बहू अर्थात् रेणु देवी एक काफी आदर्श महिला थी एवं वह पिछले शनिवार को ही अपने पिता द्वारा अपने ससुराल स्थान पहुँचायी गयी थी। उसी रात को रेणु देवी के ससुराल वालों ने उसके पिता से झगड़ा किया। यद्यपि रेणु देवी ने अपने माता-पिता से ससुराल में न छोड़े जाने का आग्रह किया था क्योंकि वह भयभीत थी कि उसके ससुराल वाले उसे मार डालेंगे परन्तु उसके माता-पिता ने उसे उसके ससुराल में छोड़ दिया एवं अगली सुबह लौट गए। सूचनादाता को ये सभी तथ्य बालगोविन्द साह की पुत्री अर्थात् गुड्डी से पता चला था। यह भी अभिकथित किया गया था कि उसके बाद से रेणु देवी को उसके ससुरालवालों द्वारा प्रताड़ित एवं उसके साथ दुर्व्यवहार किया जा रहा था।

सूचनादाता ने आगे अभिकथित किया कि बृहस्पतिवार की रात्रि में लगभग 11.00 बजे उसने अभियुक्त व्यक्तियों के घर के बाहर से आ रही झगड़ने की शोरगुल को सुना परन्तु उस समय बालगोविन्द साह अपने घर में नहीं था क्योंकि वह हरिद्वार गया था। देर रात्रि में लगभग 3.00 बजे, उसने रेणु देवी की ''मत मारो-मत मारो'' एवं माँ पानी दो-तेल डालकर जला दिया'' की चीख-पुकार भरी आवाज सुनी। सूचनादाता ने दो अन्य महिलाओं की भी आवाज सुनी, जो रेणु देवी को गाली दे रही थी एवं उसे चुप रहने को कह रही थी। अचानक, उसने अपीलार्थी के घर के मुख्य दरवाजे से धुआँ आते देखा एवं तब उसने अपीलार्थी शिव शंकर साह को पुकारा एवं पूछा कि उसके घर से धुआँ बाहर क्यों आ रहा है एवं क्या उसके घर में आग लग गयी है? इस पर, अपीलार्थी ने उत्तर दिया कि कुछ भी नहीं हुआ है। परन्तु इस बीच, हल्ला सुनकर, पड़ोसी लोग वहाँ इकट्ठा हो गए एवं अपीलार्थी को दरवाजा खोलने को कहा परन्तु अपीलार्थी ने दरवाजा नहीं खोला। तत्पश्चात्, कुछ लोगों ने दरवाजे पर पैरों से धक्का दिया परन्तु अपीलार्थी का साला अर्थात् मदन छत पर आया एवं पड़ोसियों से कहा कि यह उनलोगों को पारिवारिक मामला था एवं, इसलिए, उनलोगों को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। यह कहा गया है कि कुछ समय के बाद, अपीलार्थी अपने घर के बाहर आया एवं कहीं गया। बाद में सूचनादाता ने देखा कि अपीलार्थी ने एक मैक्सी वाहन लाया एवं इसे अपने दरवाजे के सामने खड़ा करवाया एवं रेणु देवी को बुरी तरह से जली स्थिति में जल्दबाजी में उक्त वाहन पर बैठाया एवं तब चला गया। तत्पश्चात, सूचनादाता को यह जानकारी हुई कि रेणु देवी की मृत्यु अस्पताल में हो गयी। सूचनादाता ने फर्दबयान में आगे अभिकथित किया कि वह बालगोविन्द साह के परिवार के साथ सुपरचित था। अपीलार्थी साथ ही बालगोविन्द साह की पुत्री अर्थात् बीना देवी अच्छे चरित्र की नहीं थी एवं यह तथ्य सभी पड़ोसी लोगों को ज्ञात था। उसने आगे अभिकथित किया कि मृतक रेणु देवी पर अपीलार्थी एवं उसके पारिवारिक सदस्यों द्वारा नियमित रूप से प्रताड़ित एवं यातना दी जा रही थी एवं यद्यपि सूचनादाता ने उनलोगों से दुर्व्यवहार न करने का आग्रह किया परन्तु उनलोगों ने ध्यान नहीं दिया एवं अंततः रेणु देवी को उनलोगों द्वारा जलाकर मार दिया गया।

3. सूचनादाता नारायण कुमार मुखर्जी की रिपोर्ट पर, F.I.R. दर्ज किया गया था एवं तब पुलिस हरकत में आयी एवं मामले का अन्वेषण प्रारंभ किया। 6.9.1986 को थाने के प्रभारी अधिकारी ने रेणु देवी के पिता अर्थात् मोतीलाल साह को एक कॉन्स्टेबल के माध्यम से यह सूचित करते हुए एक पत्र भेजा कि उसकी पुत्री जलकर मर गयी है। इस सूचना पर, मृतक रेणु देवी के पिता दुमका आए एवं प्रभारी अधिकारी से मिले एवं, तब, शव के परीक्षण के पश्चात्, इसका दाह-संस्कार कर दिया गया। तत्पश्चात्, वह बासुकीनाथ गया एवं सूचनादाता से मिला, जिसने उसे सम्पूर्ण कहानी सुनायी कि उसकी पुत्री को किस प्रकार से अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा जलाकर मार दिया गया।

4. मृतक रेणु देवी के पिता ने अन्वेषण अधिकारी को लिखित रूप से यह अभिकथित किया कि अभियुक्त व्यक्तिों ने दहेज की मांग कर रहे थे, जो उसके द्वारा पूरा नहीं किया जा सका था एवं उसने अपनी पुत्री को अपीलार्थी के घर 30 अगस्त, 1986 को लाया परन्तु उसी दिन, उसकी सास ने उनकी उपस्थिती में रेणु देवी को गाली देना प्रारंभ किया। यद्यपि, उसने अपनी पुत्री को वहीं छोड़ दिया एवं वापस अपने गाँव आ गया। मृतक रेणु देवी के पिता द्वारा लिखित रूप में, किये गये उक्त परिवाद, प्रदर्श 1 के रूप में साक्ष्य में पेश किया गया था। इसे स्वयं मोतीलाल साह (अ॰ सा॰ 1) द्वारा प्रमाणित किया गया था।

5. पुलिस ने अन्वेषण की समाप्ति के पश्चात् आरोप-पत्र सौंपा एवं, तत्पश्चात, सभी अभियुक्त व्यक्तियों को विचाराधीन रखा गया।

6. आरोपों को प्रमाणित करने के क्रम में, विचारण के दौरान, कुल 9 अभियोजन साक्षीयों को परीक्षित किया गया एवं साक्ष्य में कई दस्तावेजों को भी पेश किया गया एवं उन्हें प्रदर्शों के रूप में चिन्हित किया गया था।

7. विद्वान विचारण न्यायालय ने, अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य एवं सामग्रियों के आधार पर, वर्तमान अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/34 के अधीन आरोपों का दोषी पाया एवं आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दण्ड दिया जबकि अन्य तीन अभियुक्त व्यक्तियों, जिन्हें अपीलार्थी के साथ विचारित किया गया था, को इस आधार पर दोषमुक्त किया गया था कि अभियोजन पक्ष उनलोगों के विरूद्ध आरोप प्रमाणित करने में असफल था।

विचारण न्यायालय के उक्त निर्णय के विरूद्ध, एकमात्र अपीलार्थी शिव शंकर साह द्वारा वर्तमान अपील दाखिल किया गया है।

8. सम्पूर्ण मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है क्योंकि घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है।

9. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी के विरूद्ध पारित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश को चुनौती देते हुए निवेदन किया है कि परिस्थितियों की श्रृंखला, जिसपर विचारण न्यायालय द्वारा भरोसा किया गया है ऐसी नहीं है जो स्पष्ट रूप से अपीलार्थी का दोष इंगित करता है एवं वे परिस्थितियाँ, जो साक्ष्य पर लाये गए हैं, वह भी पूर्ण नहीं है ताकि इस तार्किक निष्कर्ष पर पहुँचा जा सके कि अपीलार्थी ने ही अपनी पत्नी रेणु देवी की हत्या आग में जलाकर कारित किया था।

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी अभिकथित किया गया था कि वास्तव में, मृतक को अचालक आग लग गयी जब वह बच्चों के लिए खाना पका रही थी एवं इस प्रभाव का कोई साक्ष्य नहीं है कि वह अपीलार्थी या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा जलाकर मार दी गयी थी।

10. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के तर्क का मूल्यांकन करने के क्रम में, हमलोगों ने अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्य को सूक्ष्मता से संवीक्षा की है।

11. अ॰ सा॰–1 मोतीलाल साह मृतक रेणु देवी के पिता हैं। इस साक्षी ने विशेष रूप से यह अभिकथित किया है कि उसकी पुत्री रेणु देवी को दहेज की पूर्ति न किए जाने के कारण उसके पति एवं ससुराल वालों द्वारा यातना दिया एवं दुर्व्यवहार किया जा रहा था। उसे उनलोगों द्वारा नियमित रूप से गाली दिया एवं प्रताड़ित किया जा रहा था। उसके साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि रेणु देवी की दो पुत्रियाँ थी। इस साक्षी के साक्ष्य में यह तथ्य आया है कि जून 1986 के महीने में अभियुक्त व्यक्तियों ने रेणु देवी को अपने पिता के घर अकेले बस से भेजा एवं 2-3 दिनों के बाद दामाद अर्थात्, वर्तमान अपीलार्थी अपने ससुराल अर्थात् रेणु देवी के माता–पिता के घर गया एवं उसने अपनी पत्नी को वापस ले जाने से इनकार किया बल्कि उसने साक्षी अ॰ सा॰–1 अपनी पुत्री को उसके घर में पहुँचाने को कहा। तद्नुसार, अ॰ सा॰ 1 अपीलार्थी के घर पर 30.8.1986 को अपनी पुत्री के साथ गया जहाँ उसे उसकी उपस्थिति में अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा गाली दिया गया था। अ॰ सा॰ 1 के साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि पति एवं पत्नी के बीच का सम्बन्ध एवं ससुराल वालों एवं बहू के बीच का सम्बन्ध काफी अधिक तनावपूर्ण था एवं वह सहानुभूतिपूर्ण बिल्कुल नहीं था। यहाँ यह उल्लेख करना यथार्थ है कि अ॰ सा॰ 1 ने अपनी पुत्री को 30 अगस्त, 1986 को अपीलार्थी के घर में पहुँचा दिया एवं तुरन्त 5 दिनों के बाद घटना घटित हुआ एवं मृतक को जला कर मार दिया गया।

12. अ॰ सा॰–2 नौरंगी साह को पक्षद्रोही घोषित किया गया है। अ॰ सा॰ 3 नारायण कुमार मुखर्जी सूचनादाता है। उसे अन्वेषण के दौरान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन परीक्षित किया गया था एवं उसके अभिकथन को प्रदर्श 1/1 के रूप में चिन्हित किया गया है। यह साक्षी अ॰ सा॰–3 अभियोजन पक्ष का मुख्य साक्षी है, जो अपनी यज्ञ शाला, जो अपीलार्थी के घर के विपरीत 10-12 क्यूबिट्स की दूरी पर स्थिति था, में रहा करते थे। यह अभिकथित किया गया है कि घटना की तिथि एवं समय पर अपीलार्थी के घर के निचले तल से धुआँ आ रहा था यद्यपि, अपीलार्थी का सम्पूर्ण परिवार उपरी तल पर रहा करता था। इस साक्षी ने F.I.R. में किए गए अभिकथनों को एवं दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन उसके द्वारा किए गए अभिकथन को पूर्ण रूप से सम्पुष्ट किया है। उसने स्पष्ट रूप से अभिकथित किया है कि उसने रेणु देवी, जो ''बचाओ–बचाओ'' एवं ''पानी पिलाओ–पानी पिलाओ'' कहकर चिल्ला रही थी, की पुकार सुनी। यह अ॰ सा॰–3 पहला व्यक्ति था जो घटना–स्थल पर पहुँचा। उसने देखा कि रात में लगभग 3.00 बजे अपीलार्थी के घर से धुआँ आ रहा था एवं दरवाजा अंदर से बन्द था एवं कहे जाने के बावजूद अपीलार्थी या उसके किसी पारिवारिक सदस्यों द्वारा दरवाजा नहीं खोला गया था बल्कि इस साक्षी को वापस जाने को कहा गया था क्योंकि यह उनलोगों का पारिवारिक मामला था।

13. इस साक्षी का अभिकथन पूर्णतया संगत है एवं अपीलार्थी की ओर से विनिर्दिष्ट रूप से कुछ भी इंगित नहीं किया गया है ताकि उसका साक्ष्य अविश्वसनीय एवं गैर–भरोसेमंद बनाया जा सके बल्कि हमलोग यह पाते हैं कि यह साक्षी एक सत्यनिष्ठ साक्षी है एवं उस घटना के बारे में विस्तार से अभिकथित किया है, जो उसने देखा है।

14. अन्वेषण अधिकारी (अ॰ सा॰ 8) ने अपने साक्ष्य में अभिकथित किया है कि घटना–स्थल अपीलार्थी का घर था। निचले तल पर उन्होंने कुछ अधजले कपड़े पाए एवं एक कमरे के कोने में उन्होंने एक छोटा बोतल पाया जिससे किरासन तेल की गंध आ रही थी। उन्होंने एक सलाई एवं एक स्टोव भी पाया। उन्होंने धुएँ के कारण दीवाल पर काले धब्बे पाए। उन्होंने स्टोब, किरासन तेल बोतल, सलाई एवं अधजले कपड़ों का अभिग्रहण किया, जिसे तात्विक प्रदर्श (i) (ii) (iii) एवं (iv) के रूप में चिन्हित किया गया था। अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य एवं उन तात्विक प्रदर्शों के साक्ष्य जो अन्वेषण अधिकारी द्वारा घटना–स्थल पर अभिग्रहण किए गए थे, पूर्ण रूप से अ॰ सा॰ 3 के साक्ष्य को पूर्ण रूप से सम्पुष्ट करता है एवं यह इस तथ्य का समर्थन करता है कि सुसंगत समय पर मृतक को बोतल में रखे किरासन तेल का उपयोग कर जला दिया गया था एवं घटना–स्थल पर पाया गया।

15. अपीलार्थी का यह अभिवाक् कि मृतक अचानक आग लगने से मर गयी जब वह बच्चों के लिए खाना पका रही थी, यह मात्र इस कारण से विश्वसनीय नहीं है कि कोई भी व्यक्ति यह विश्वास नहीं करेगा कि मृतक 3.00 बजे रात्रि में बच्चों के लिए खाना पका रही थी एवं वह भी घर के निचले तल पर जबकि प्रत्येक सदस्य उपरी तल पर रहा करते थे। यदि रेणु देवी को अचानक आग लग गयी जब वह भोजन बना रही थी तो अपीलार्थी या उसके किसी अन्य पारिवारिक सदस्य ने रेणु देवी की चीख पुकार सुनकर आग बुझाकर उसे बचाने की कोशिश क्यों नहीं की। ऐसी स्थिति में सामान्य मानवीय आचरण आग बुझाकर पीड़ित के प्राण की रक्षा करने का प्रयास होता है, यदि अचानक उसे आग लग गयी तब उसके द्वारा शोर मचाये जाने पर अपीलार्थी ने उसे बचाने का प्रयास क्यों नहीं किया। यदि अपीलार्थी ने अपनी पत्नी को बचाने की कोशिश की होती तब उसके हाथों या हथेली पर जलने की कुछ उपहतियाँ हुई होती परन्तु बिल्कुल विचित्र ढंग से अपीलार्थी के शरीर पर ऐसी कोई उपहित नहीं पायी गयी थी। मृतक के गम्भीर रूप से जलने की उपहति होने के बाद ही एवं जब वह मृत्यु के कगार पर थी एवं जब वह बोलने की स्थिति में नहीं थी तभी उसे अपीलार्थी द्वारा अस्पताल ले जाया गया परन्तु उसके अस्पताल पहुँचते समय तक उसकी मृत्यु हो गयी। इसलिए, अपीलार्थी द्वारा घायल रेणु देवी को अस्पताल ले जाने की कार्रवाई कुछ और नहीं बल्कि स्वयं को बचाने के लिए प्रतिरक्षा उत्पन्न करने के लिए था।

16. इस प्रकार, साक्ष्य से, जिसपर उपर चर्चा की गयी है, निस्संदेह हमारे विचार में है कि अपनी पत्नी रेणु देवी की हत्या करने के क्रम में अपीलार्थी ने उसे किरासन तेल डालकर आग लगा दिया एवं जलने की गम्भीर उपहतियों के कारण, वह मर गयी। हमलोग पाते हैं कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को अपनी पत्नी की हत्या के अपराध के लिए उचित रूप से ही दोषसिद्ध एवं दंडित किया है।

17. उक्त चर्चाओं एवं निष्कर्षों की दृष्टि में, हमलोग इस अपील में कोई बल नहीं पाते हैं। तदनुसार, इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है। अपीलार्थी, जो जमानत पर हैं, उसके बंध-पत्रों को एतद् द्वारा रद्द किया जाता है एवं उसे अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष दण्डादेश की तामीला करने के लिए अभ्यर्पण करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ dñ f lUgk] U;k;efrZ

न्यायालय स्वयं अपने समावेदन पर

बनाम

मुख्य सचिव, झारखंड सरकार के माध्यम से झारखंड राज्य एवं एक अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (क्रि॰) सं॰ 22 वर्ष 2004. 23 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 439—जमानत का रद्दकरण–जमानत न्यायिक आयुक्त, I/C द्वारा प्रदान किया गया–उच्च न्यायालय ने स्वयं अपने समावेदन पर अभियुक्तों को यह नोटिस निर्गत किया कि उसका जमानत क्यों नहीं रद्द किया जाए–अभिनिर्धारित किया गया, एक बार जमानत प्रदान किए जाने के बाद इसे सामान्य अनुक्रम में रद्द नहीं किया जा सकता है जबतक कि अभियुक्त के आचरण या उस आदेश के सम्बन्ध में सम्बन्धित न्यायालय को कोई अड़चन दर्शाया नहीं जाता है जो न्यायालय से छल करके अन्यथा उपाप्त हुआ पाया जाता है। (पैरा 8 एवं 10)

निर्णयज विधि.–(1995)1 SCC 349; AIR 1996 SC 2176

अधिवक्तागण.–Mr. R.R. Mishra, For the Respondent-State; Mr. Chandrajit Mukherjee, For the Respondent No.2.

डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति.–इस न्यायालय ने स्वयं अपने समावेदन पर भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत अधीक्षण/हस्तक्षेप की असाधारण अधिकारिता का प्रयोग किया एवं प्रत्यर्थी सं॰ 2 संतोष कुमार सिंह एवं प्रत्यर्थी–राज्य को नोटिस भेजा। प्रत्यर्थी संतोष कुमार सिंह, जिसे प्रधान अभियुक्त होना अभिकथित किया गया है, को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के अधीन B.P. सं॰ 913 वर्ष 2003 में न्यायिक आयुक्त I/C, राँची (श्री एच॰ पी॰ चक्रवर्ती जैसा कि–वह तब थे) द्वारा 4.11.2003 को जमानत मंजूर किया गया था। राज्य एवं प्रत्यर्थी संतोष कुमार सिंह, दोनों ही प्रत्यर्थीगण उपस्थित हुए एवं अपने–अपने शपथपत्र दाखिल किए।

2. राँची कोतवाली थाना केस सं॰ 442 वर्ष 2003 को उद्‌भूत करने वाले, मामले के तथ्यों को इस अभिकथन पर भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 420/120B के अधीन अपराध हेतु अभिलिखित किया गया था कि पुलिस छापा दल द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 2 संतोष कुमार सिंह के कब्जे से 3,00,000/- रु॰ की धनराशि बरामद की गयी थी जब वह सह–अभियुक्तों के साथ होटल में ठहरा था। अभियोजन पक्ष ने ये तथ्य एकत्रित किए थे कि अभियुक्त लोग प्रवेश की चयन प्रक्रिया में कार्यरत एवं इससे जुड़े लोगों को प्रभावित करके भारी धनराशि लेकर अवैध साधनों के माध्यम से विभिन्न मेडिकल एवं इंजीनियरिंग कॉलेजों में छात्रों को प्रवेश दिलाने में स्वयं को लिप्त करके एक गिरोह में कार्यरत थे। अभियोजन पक्ष ने आगे अभिकथित किया कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 संतोष कुमार सिंह के कब्जे से यथा बरामद 3,00,000/- रु॰ तक की सीमा की धनराशि को वास्तविक रूप से किसी आलोक कुमार से मेडिकल कॉलेज में प्रवेश के लिए वसूल किया गया था एवं 3,50,000/- रु॰ की तय राशि के यथा विरूद्ध 50,000/- रु॰ का भुगतान अभियुक्त व्यक्तियों को किया जाना अभी बाकी था। प्रत्यर्थी सं॰ 2 संतोष कुमार सिंह को गिरफ्तार किया गया था एवं 7.9.2003 को न्यायिक हिरासत में रिमांड पर लिया गया था। यद्यपि, उसे यथा पूर्वोक्त न्यायिक आयुक्त I/C, राँची द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के अधीन 4.11.2003 को जमानत दिया गया था।

3. दिनांक 4.11.2003 के आक्षेपित आदेश के सतही पठन से मैं पाता हूँ कि विद्वान न्यायिक आयुक्त I/C ने जमानत याचिका पर विचार करते समय, मामले के तथ्यों पर अपने न्यायिक दिमाग का प्रयोग किया था एवं निम्नलिखित प्रकार से सम्प्रेक्षित किया था:–

> ''मैने इस मामले की केस डायरी का काफी सावधानीपूर्वक अवलोकन किया है एवं यह पाया है कि अभियुक्त व्यक्तियों का संस्वीकारात्मक अभिकथन के अतिरिक्त, इस प्रकार के गंभीर अपराध, जो घटित हुई थी को सम्पुष्ट करने के लिए केस डायरी में कोई अन्य सामग्री नहीं है। यहाँ तक कि विश्वविद्यालय प्राधिकारी, या विश्वविद्यालय, या इंजिनियरिंग कॉलेज या किसी मेडिकल कॉलेज के शिक्षण या गैर–शिक्षण कर्मचारी या उन परीक्षाओं के नियंत्रक, जो परीक्षायें संचालित कर रहे थे, या उन छात्रों जो मेडिकल एवं इंजिनियरिंग परीक्षाओं हेतु अभ्यर्थी थे, का प्रवेश दर्शाने वाले किसी साक्ष्य को केस डायरी पर लाया गया है। केस डायरी इस बिन्दु पर बिल्कुल चुप है। इसलिए, इस मामले के अन्वेषण में भारी त्रुटि है। अभियुक्त/याची 7.9.03 से एवं आज 4.11.03 से अभिरक्षा में है।
>
> ऐसी परिस्थितियों में, याची संतोष कुमार @ संतोष कुमार सिंह को विद्वान C.J.M., राँची की संतुष्टि हेतु 20,000/- रु॰ (बीस हजार रुपये) के जमानत–पत्र सहित समान राशि के दो प्रतिभू पूरा करने पर जमानत पर छोड़े जाने का निर्देश दिया जाता है।''

आक्षेपित आदेश को नोटिस करके इस न्यायालय ने भारतीय संविधान की धारा 227 के अधीन अधीक्षण की शक्ति का प्रयोग करके स्वयं अपने समावेदन पर प्रत्यर्थी संतोष कुमार निम्नलिखित ढंग से नोटिस निर्गत किया:–

''जबकि निम्नस्थ न्यायालय द्वारा पारित मुख्य अभियुक्त को जमानत देने एवं उपरोक्त आदेश के औचित्य की जाँच करने के आदेश की एक गंभीर नोट लेते हुए, यह न्यायालय स्वयं अपने समावेदन पर यह नोटिस निर्गत कर प्रसन्न हुआ है कि न्यायिक आयुक्त I/C, राँची द्वारा उक्त जमानत आदेश B.P. सं॰ 913 वर्ष 2003 में पारित आदेश के विरूद्ध समुचित आदेश क्यों नहीं पारित किया जाए।''

4. प्रत्यर्थी संतोष कुमार सिंह का अपने शपथ-पत्र में विनिर्दिष्ट उत्तर यह है कि उसके कब्जे से अभिगृहित धनराशि का कोई भी दावेदार यह अभिकथित करते हुए आगे नहीं आया था कि यह प्रत्यर्थी संतोष कुमार को दिया गया था एवं यह कि अन्वेषण से किसी ऐसे व्यक्ति नामित या प्रकट नहीं किया गया था जिसे उसके कहने पर छला गया था, न ही किसी ऐसे व्यक्ति का नाम ही उद्धृत किया गया था, जिसे प्रत्यर्थी को धनराशि का भुगतान करने पर अवैध रूप से किसी मेडिकल कॉलेज में प्रवेश दिलाया गया था। अभियोजन पक्ष का मामला यह नहीं था कि संतोष कुमार सिंह को तब गिरफ्तार किया गया था जब वह किसी व्यक्ति विशेष को अवैध ढंग से मेडिकल कॉलेज में प्रवेश दिला रहा था या ऐसे कार्य में लिप्त पाया गया था। इसके विपरीत, वह आरोप, जो उसके विरूद्ध लगाए गए थे, आधारहीन था कि वह एक गिरोह चला रहा था।

5. प्रत्यर्थी सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि इस मामले में भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 420/120B के अधीन अपराध के लिए संज्ञान 5.11.2003 को लिया गया था एवं आरोप लगभग 3½ वर्ष बाद 16.5.2007 को विरचित किया गया था। फिर भी, विचारण के दौरान अभियोजन की ओर से कोई भी साक्षी पेश नहीं किया जा सका था।

6. अंत में अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अन्य सह-अभियुक्त रजनीकांत एवं राजेश नंदन का जमानत क्रमशः B.A. सं॰ 6041 वर्ष 2003 एवं 6183 वर्ष 2003 में इस न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया था। इसी प्रकार से, इस मामले के अभियुक्त शशि रंजन कुमार एवं राजीव कुमार का जमानत इस न्यायालय द्वारा क्रमशः B.A. सं॰ 7086 वर्ष 2003 एवं 7096 वर्ष 2003 में स्वीकार किया गया था एवं यह कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 संतोष कुमार सिंह ने वर्ष 2003 से ही जब उसे जमानत पर छोड़ा गया था, न तो आक्षेपित आदेश द्वारा स्वयं को प्रदत्त विशेषाधिकार का ही दुरूपयोग किया है, न ही चल रहे विचारण में कोई अड़चन ही कारित की है ताकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन अपने जमानत के रद्दकरण को आकर्षित कर सके।

7. तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करके, प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से दाखिल किए गए शपथ-पत्र में, मैं इस प्रकथन के अतिरिक्त कोई अन्य सामग्री नहीं पाता हूँ कि अन्वेषण अधिकारी ने अन्वेषण के पश्चात, भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 420/120B के अधीन अभिकथित अपराध हेतु प्रत्यर्थी सं॰ 2 संतोष कुमार सिंह सहित कुल छः अभियुक्त व्यक्तियों के विरूद्ध 30.10.2003 को आरोप-पत्र दाखिल किया था, यद्यपि, राज्य-प्रत्यर्थी ने न्यायिक आयुक्त, I/C, राँची, जिन्होंने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के अधीन नियमित जमानत प्रदान करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया, के औचित्य की आलोचना नहीं की।

8. यह सुस्थापित है कि जमानत या तो दंड प्रक्रिया संहिता की धाराएँ 437 या 438 या 439 के अधीन प्रदान किया जाता है जो जमानत के उपबन्धों पर शासित है, इसे सामान्य अनुक्रम में खंडित नहीं किया जा सकता है जबतक कि अभियुक्त के आचरण या उस आदेश के सम्बन्ध में सम्बन्धित न्यायालय को कोई अड़चन दर्शाया नहीं जाता है जो न्यायालय से छल करके अन्यथा उपाप्त हुआ पाया जाता है।

9. जमानत के रद्दकरण हेतु विधि को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन साथ ही धारा 437(5) के अधीन अधिकथित किया गया है। **(1995)1 SCC 349** में रिपोर्ट किए गए **दोलत राम एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य** एवं **A.I.R. 1996 SC 2176** में रिपोर्ट किए गए **कश्मीरा**

सिंह बनाम डुमन सिंह में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि एक बार प्रदान किये गए जमानत को इस बात पर विचार किए बिना यांत्रिक विधि से रद्द नहीं किया जाना चाहिए था कि क्या किसी आकस्मिक परिस्थिति ने इसे निष्पक्ष विचारण के लिए निष्प्रभावी धारित किया है ताकि अभियुक्त को विचारण के दौरान जमानत में छूट देकर उसकी स्वतंत्रता प्रतिधारित करने की अनुमति दी जा सके। वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी-राज्य ने प्रत्यर्थी संतोष कुमार सिंह के जमानत के रद्दकरण की प्रार्थना कहीं भी नहीं किया गया है।

10. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों का सावधानीपूर्वक विचारण करके, मुझे यह सम्प्रेक्षित करने में कोई संकोच नहीं है कि न्यायिक आयुक्त, I/C, राँची (श्री एच॰ पी॰ चक्रवर्ती, जैसा कि वह तब थे) प्रत्यर्थी संतोष कुमार सिंह को आक्षेपित आदेश के माध्यम से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के अधीन नियमित जमानत अनुज्ञात करने में उचित रूप से अपनी अधिकारिता के अंतर्गत थे। इसी प्रकार, आक्षेपित आदेश पारित करने में न्यायिक आयुक्त I/C के औचित्य के प्रश्न करने का कोई आधार दर्शाया नहीं गया है। प्रत्यर्थी-राज्य यह दर्शाने में असफल थे कि क्या वह साक्ष्य से छेड़-छाड़ कर रहा है ताकि हस्तक्षेप की मांग की जा सके। अंततः, मैं सम्प्रेक्षित करता हूँ कि न्यायिक आयुक्त, I/C, राँची उस आदेश, जो आक्षेपित है, को पारित करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 (1) के अधीन दी गयी स्थिति के अनुरूप उचित रूप से अपनी अधिकारिता के अंतर्गत थे।

16. मैं इसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाता हूँ, इस प्रकार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ thñ vkjñ iVuk;d] U;k;efr

बिशेश्वर प्रसाद

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 176 वर्ष 2005. 18 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

सेवा विधि–वेतनमान–850-1360/– रु॰ व्यय पर कनिष्ठ चयन पदक्रम के लाभ को वापस लिया गया और संशोधित किया गया इस आधार पर 785-1210/- रुपए के वेतनमान में नियत करते हुए कि कनिष्ठ अनुदेशक और वरीय अनुदेशक के पद दो भिन्न पद है–इसको लेकर राज्य द्वारा कोई स्पष्टीकरण दाखिल नहीं किया गया कि किस प्रकार और किस परिस्थिति के अधीन वेतनमान को वापस लिया गया था–सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 2379/96R में पारित सम्परीक्षण एवं निर्णय के आलोक में याची द्वारा प्रकट की गई विसंगतियों पर विचार करने का निर्देश दिया गया (पैरा 11 एवं 12)

निर्णयज विधि.–CWJC No. 2379/1996R—भरोसा।

अधिवक्तागण.–Mr. Sanjay Prasad, For the Petitioner/Appellant(s); M/s S. Srivastava, S.P. Sinha, For the Respondents.

आदेश

याची ने इस रिट आवेदन में दिनांक 4.11.1999 के आदेश (परिशिष्ट-7) को चुनौती दी है जिसके द्वारा और जिसके अधीन अनुदेशकों के वेतनमान के औपबंधिक नियतीकरण, जिसे उन्हें कनिष्ठ चयन पदक्रम का लाभ प्रदान करते हुए 850-1360/- रुपए पर नियत किया गया था को वापस ले लिया गया है और परिशिष्ट-8 के माध्यम से, इसे संशोधित करके 785-1210 रुपए के वेतनमान पर इस आधार पर नियत किया गया है क्योंकि कनिष्ठ अनुदेशकों एवं वरीय अनुदेशकों के पद दो भिन्न पद है।

2. याची का मामला संक्षेप में यह है कि उसे प्रारम्भ में 16.6.1965 के आई॰ टी॰ आई॰, दरभंगा में एक अनुदेशक के तौर पर नियुक्त किया गया था। बाद में 5.9.1969 को उसे राँची स्थानान्तरित कर दिया गया था और 335-555/- रुपए के वेतनमान में रखा गया था।

3. पत्र संख्या 3888 दिनांक 18.12.1973 के माध्यम से सचिव, श्रम नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग द्वारा निर्गत एक पत्र द्वारा वरीय अनुदेशक और कनिष्ठ अनुदेशक के पदों का एक ही पद में विलय कर दिया गया था।

वित्त विभाग, बिहार सरकार द्वारा निर्गत संकल्प संख्या 10770 दिनांक 30.12.1981 द्वारा आई॰ टी॰ आई॰ के कर्मचारियों को दो प्रोन्नतियां एवं वरीय अनुदेशकों के वेतनमान का अधिकारी बना दिया गया था जो 1.4.1964 से पहले नियुक्त किए गए थे और उनका वेतनमान–785-1210/- रुपए नियत किया गया था जबकि वे जो पूर्वोक्त कट–ऑफ तिथि के उपरांत नियुक्त किए गए थे, उन्हें 730-1080/- रुपए का वेतनमान दिया गया था।

तत्पश्चात, ज्ञापांक संख्या 4543 के अधीन दिनांक 11.12.1990 के निदेशक, श्रम नियोजन एवं प्रशिक्षण द्वारा निर्गत परिपत्र के माध्यम से वरीय अनुदेशको को 850-1360/- रुपए के वेतनमान में रखा गया था जिसे पहली काल–बद्ध प्रोन्नति के लिए वेतनमान के तौर पर दिया गया था।

4. सरकारी पत्र संख्या 2064 दिनांक 6.8.1992 (परिशिष्ट–2) द्वारा कनिष्ठ अनुदेशकों जो पहले ही वरीय अनुदेशको के तौर पर पदस्थापित किए जा चुके थे, की दी गई कालबद्ध प्रोन्नति को संपुष्ट किया गया था।

वित्त विभाग में राज्य सरकार द्वारा निर्गत दिनांक 27.6.1996 के पश्चातवर्ती परिपत्र द्वारा दिनांक 6.8.1992 के पूर्व के पत्र (परिशिष्ट–2) को रद्द कर दिया गया था और उसके द्वारा एक निर्णय लिया गया था कि वैसे अनुदेशक, जो 1.4.1981 को सेवा में थे और जिन्हें 730-1080/- रु॰ के वेतनमान में रखा गया था 785-1210/- रुपए के वेतनमान के अधिकारी होंगे और विभिन्न वेतनमानों के अधीन रखे गए अनुदेशकों को विभिन्न संवर्गों के अनुदेशक माना जाना था।

सरकार के दिनांक 27.6.1996 के पूर्वोक्त परिपत्र जिसके अधीन 850-1360/- रुपए का पूर्व के वेतनमान, जिसे पहली कालबद्ध प्रोन्नति पर वरीय अनुदेशको के संबंध में नियत किया गया था, वापस ले लिया गया था, से व्यथित होकर व्यथित व्यक्तियों में से कुछ अर्थात् इन्द्रदेव सिंह एवं अन्य के द्वारा पटना उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट आवेदन दाखिल किया गया जो सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 2379 वर्ष 1996(R) था। उक्त रिट आवेदन को अनुज्ञात करते समय उच्च न्यायालय ने पहली कालबद्ध प्रोन्नति प्रदान करने पर उन्हीं निबंधनों में उससे याचीगण को 850-1360/- रु॰ में रखने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को दिया था जो उनके समकक्षों को दिए गए थे।

5. पूर्वोक्त आदेश के विरूद्ध प्रत्यर्थीगण ने पुनरीक्षण याचिका संख्या 12 वर्ष 1997(R) दाखिल किया, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया। जब उक्त रिट याचिका में पारित आदेश में निहित निर्देश के अनुपालन नहीं किया गया, तो प्रत्यर्थीगण के विरूद्ध एक अवमान कार्यवाही दाखिल की गई।

अवमान याचिका लम्बित रहने के दौरान, राज्य ने कनिष्ठ अनुदेशकों एवं वरीय अनुदेशकों के पद को दो भिन्न पद घोषित करते हुए राज्य सरकार ने ज्ञापांक संख्या 7253 दिनांक 4.11.1999 के एक परिपत्र (परिशिष्ट–7) को निर्गत किया। वर्तमान रिट याचिका इस परिपत्र, एवं इसके तत्सम आदेश के विरूद्ध निर्दिष्ट है जिसके अधीन याची के वेतनमान को घटाया गया है।

6. प्रत्यर्थी–झारखण्ड राज्य की ओर से प्रति शपथपत्र दाखिल किया गया है, जिसमें याची के मामले की पृष्ठभूमि का वर्णन किया गया है। यह कहा गया है कि झारखण्ड राज्य के निर्माण के काफी पहले याची अधिवर्षिता प्राप्त करने पर 31.1.1999 को आई॰ टी॰ आई॰, धनबाद से अनुदेशक के पद से सेवानिवृत्त हो गया था।

इससे पहले, वेतन विसंगति के संबंध में इसी व्यथा के साथ, याची ने सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1698 वर्ष 2001, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 2854 वर्ष 2001, अवमान (C) केस संख्या 866 वर्ष 2001, अवमान (C) केस संख्या 670 वर्ष 2002, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 5262 वर्ष 2003, अवमान (C) केस संख्या 571 वर्ष 2004 और अवमान (C) केस संख्या 645 वर्ष 2002 के साथ उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिकाएँ एवं अवमान याचिकाएँ दाखिल की थी।

पूर्वोक्त सभी याचिकाओं को क्रमशः 26.4.2001, 5.7.2001, 15.6.2002, 31.1.2003, 5.11.2003, 10.9.2004 एवं 4.12.2004 को निस्तारित किया गया था।

अवमान (C) केस संख्या 670 वर्ष 2002 में, उच्च न्यायालय ने इसे 31.1.2003 को निस्तारित करते हुए निम्नांकित आदेशों को पारित किया थाः–

> ''याची झारखण्ड राज्य के निर्माण के काफी पहले 31 जनवरी, 1999 को सेवा से निवृत हुआ था। वेतनमान और उसके पारिणामिक लाभ का कोई भी नियतीकरण श्रम, नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग, बिहार सरकार, पटना के सक्षम प्राधिकार द्वारा लिया जा सकता था। अभिलेख पर यह इंगित करने के लिए कुछ भी नहीं है कि याची बिहार सरकार के सक्षम प्राधिकार के समक्ष गया था। इन परिस्थितियों में मैं झारखण्ड सरकार के प्राधिकार के विरूद्ध कार्यवाही करने के लिए उन्मुख नहीं है।''

याची ने तत्पश्चात रिट याचिका संख्या डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 5262 वर्ष 2003 दाखिल किया जिसे उच्च न्यायालय द्वारा 5.11.2003 को निम्नांकित परीक्षणों के साथ निस्तारित किया गया थाः–

> ''इन तथ्यों एवं परिस्थितियों में, याची को इस आदेश की एक प्रति और अन्य सुसंगत दस्तावेजों के साक्ष्य के साथ सक्षम प्राधिकारी के पास दोबारा एक अभ्यावेदन करने की एक स्वतंत्रता प्रदान की जाती है। तत्पश्चात्, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 2854 वर्ष 2001 में पारित इस न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णय के आलोक में बिहार राज्य का सक्षम प्राधिकारी अभ्यावेदन की प्राप्ति की तिथि से चार महीनों के भीतर इसका निस्तारण करेगा और अभ्यावेदन पर दिए गए पते पर याची को निर्णय प्रेषित करेगा।''

याची ने तत्पश्चात एक अवमान केस (C) संख्या 645 वर्ष 2002 दाखिल किया जिसे निम्नांकित सम्परीक्षण के साथ उच्च न्यायालय द्वारा 4.12.2004 को निस्तारित किया गयाः–

> ''अगर याची एक या किसी दूसरे आदेश से संतुष्ट नहीं है या ऐसी घोषणा चाहता है कि उसे वर्ष 1965 में नियुक्त किया गया था और तद्नुसार, 1965 में गणना करते हुए आगे की अवधि के लिए लाभ का अधिकारी था, तो वह उपयुक्त फोरम के समक्ष जा सकता था।''

झारखण्ड राज्य द्वारा एक और पक्ष लिया गया है कि आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट-8) ऐसे आदेश (परिशिष्ट-7) के आधार पर पारित किया गया है जिसे चुनौती नहीं दी गई है। यह भी तर्क दिया गया है कि किसी भी स्थिति में चूँकि याची वर्ष 1999 में यानि बिहार राज्य के विभाजन और झारखण्ड राज्य के सृजन के काफी पहले सेवानिवृत्त हुआ था, इसलिए उसकी व्यथा, अगर कोई है, तो केवल बिहार राज्य तक सीमित होना चाहिए।

7. पक्षों द्वारा कथित तथ्यों के अभिकथन से यह प्रतीत होता है कि कनिष्ठ अनुदेशक के पद को वरीय अनुदेशक के संवर्ग में विलोपित कर दिया गया था और परिपत्र संख्या 3883 दिनांक 1.4.1978 के माध्यम से राज्य सरकार द्वारा इस प्रभाव की एक अधिसूचना निर्गत की गई थी। तथापि, ऐसे विलय के बावजूद, चौथी वेतन पुनरीक्षण समिति की अनुशंसाओं के अनुसरण में संशोधित वेतनमानों के अधीन कनिष्ठ अनुदेशकों एवं वरीय अनुदेशकों के लिए दो भिन्न संवर्गो के अधीन दो

भिन्न वेतनमान बने रहे। व्यथित अनुदेशकों ने सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 246 वर्ष 1993 के तौर पर रिट याचिका दाखिल की जिसे उसमें याचीगण के सम्बद्ध प्राधिकार के समक्ष अभ्यावेदन दाखिल करने के निर्देश के साथ दिनांक 22.4.1993 के आदेश द्वारा निस्तारित किया गया था। रिट याचिका के याचीगण ने उनके समकक्ष को यथा प्रदत्त निबंधनों के अनुसार पहली कालबद्ध प्रोन्नति के लाभ को प्रदान करने के लिए 850-1360/- रुपए पर अपने वेतनमान के नियतीकरण की मांग करते हुए अभ्यावेदन दाखिल किया। उनका अभ्यावेदन प्रत्यर्थीगण द्वारा अस्वीकार कर दिया गया। व्यथित अनुदेशकों द्वारा सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 2379 वर्ष 1996(R) के माध्यम से उच्च न्यायालय के समक्ष अस्वीकार के आदेश को चुनौती दी।

पूर्वोक्त सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 2379 वर्ष 1996(R) को दिनांक 29.11.1996 के आदेश द्वारा अनुज्ञात करते हुए इस न्यायालय ने सम्परीक्षित किया कि जब दो कनिष्ठ अनुदेशकों एवं वरीय अनुदेशकों के दो पदों का विलय कर दिया गया था तो एक ही पद के लिए दो भिन्न वेतनमानो को बनाए रखने की कोई गुंजाईश नहीं रह गई थी जब दोनों कोटियों के कर्मचारीगण के कार्य की प्रकृति और अर्हत्ता एक ही रही थी। व्यवहार्यत: 1.4.1973 के उपरांत दो वेतनमानों को बनाए रखने की कोई गुंजाईश नहीं थी। चौथी वेतन पुनरीक्षण समिति की रिपोर्ट के पश्चात् भी यही विसंगति बनी रही और कदाचित मामले पर इसके उचित परिप्रेक्ष्य में ध्यान नहीं दिया गया था, इसलिए, दो वेतनमान बने रहे। वेतन विसंगति समिति ने भी इसका उपचार नहीं किया। 1.4.1981 के उपरांत, याचीगण निश्चित रूप से उसी वेतनमान को पाने के अधिकारी हैं जो उनके समकक्ष प्राप्त कर रहे है।''

उपरोक्त स्थिति की दृष्टि में, रिट याचिका को अनुज्ञात करते समय, इस न्यायालय ने याचीगण को 785-1210/- रुपए के वेतनमान में उनके समकक्षों को समान वेतनमान देने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को दिया गया था और अगर इसके पश्चात, कोई पुनरीक्षण होता है तो उस तिथि से संशोधित वेतनमान देने का निर्देश दिया था जब से वे अधिकारों और जब उनके समकक्षों को यह दिया गया था।

8. प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल पुनरीक्षण याचिका में वेतनमान को निर्धारित 1.1.1986 को वेतन का भुगतान करने के लिए 1.1.1986 को कट-ऑफ-तिथि के तौर पर नियत किया गया था यह वह तिथि थी जिसे यह तिथि माना गया था जिससे रिट याचिका में याचीगण के समकक्षों को 785-1210/- रुपए का वेतनमान प्रदान किया गया था।

9. यह प्रतीत होता है कि उपरोक्त आदेशों के उपरांत, प्रत्यर्थी संख्या 4, अर्थात महालेखाकार बिहार, पटना ने 4.11.1999 को यह घोषणा करते हुए एक आदेश निर्गत किया कि कनिष्ठ अनुदेशकों एवं वरीय अनुदेशकों के पद भिन्न संवर्गों के दो भिन्न पद थे और इस कारण से जिन अनुदेशकों का वेतनमान 730-1080/- रुपए नियत किया गया था वह 785-1210/- रुपए नियत किया जाएगा। पहली कालबद्ध प्रोन्नति पाने पर 850-1360/- रुपए का वेतनमान और दूसरी कालबद्ध प्रोन्नति पर 885-1510/- रुपए का वेतनमान नियत करने के लिए अनुदेशकों के दावे को खारिज कर दिया गया। परिशिष्ट-7 के माध्यम से उपरोक्त आदेशों के अनुसरण में परिशिष्ट-8 के माध्यम से याची को यह घोषित करने वाला एक तत्सम पत्र निर्गत किया गया कि 850-1360/- रुपए के वेतनमान में उसके वेतन का नियतीकरण अनुमान्य नहीं था और यह कि पहली कालबद्ध प्रोन्नति दिए जाने पर 1.4.1981 से 785-1210/- रुपए के वेतनमान में उसका वेतन संपुष्ट किया गया है।

10. पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों से यह प्रकट है कि आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट-7 एवं 8) सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 2379 वर्ष 1996 में पारित दिनांक 29.11.1996 को निर्णय के विरूद्ध है जिसके द्वारा यह सम्परीक्षित किया गया था कि चूँकि वरीय अनुदेशकों एवं कनिष्ठ अनुदेशकों के पदों का एक ही पद में विलय कर दिया गया था, इसलिए सदृश पदों के लिए दो भिन्न वेतनमान को बनाए रखने का कोई कारण नहीं है जब याचीगण के समकक्षों को पहली कालबद्ध प्रोन्नति उच्चतर वेतनमान पर दी गई थी।

11. यह प्रतीत होता है कि बिहार राज्य की ओर से कोई प्रति शपथपत्र दाखिल नहीं किया गया है। प्रकटत:, इसको लेकर प्रत्यर्थी बिहार राज्य की ओर से कोई स्पष्टीकरण दाखिल नहीं किया गया है कि किस प्रकार और किस परिस्थिति के अधीन यह घोषित करने वाला आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–7) पारित किया गया कि कनिष्ठ अनुदेशकों एवं वरीय अनुदेशकों के पद पृथक वेतनमानों का साथ दो भिन्न संवर्गों के अधीन दो भिन्न पद थे। उपरोक्त पृष्ठभूमि में, आक्षेपित आदेशों सी० डब्ल्यू० जे० सी० संख्या 2379 वर्ष 1996R से दिनांक 29.11.1996 के निर्णय में निहित सम्परीक्षणों के प्रतिकूल पाते हैं। यह स्पष्टीकृत नहीं किया गया है कि प्रत्यर्थीगण किस प्रकार अनुदेशकों के एक समूह के लिए एक वेतन और एक अन्य समूह का गठन करने वाले उनके समकक्षों के लिए एक अन्य वेतनमान को रख सकते थे, यद्यपि कनिष्ठ अनुदेशकों एवं वरीय अनुदेशकों के एक संवर्ग में विलय के परिणामस्वरूप पदक्रम के अनुसार सभी के लिए एक सामान्य वेतनमान पहले नियत किया गया था।

आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–7) के संबंध में याची द्वारा प्रकट कराई गई असंगतियों एवं असंगतताओं के आलोक में यह प्रकट है कि सी० डब्ल्यू० जे० सी० संख्या 2379 वर्ष 1996R में पारित सम्परीक्षित एक निर्णय को विचार में रखे बगैर आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–7) पारित किया गया था। इसलिए, आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–7) टिक नहीं सकता और इसलिए एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। परिणामत:, आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–8), जिसे परिशिष्ट–7 के अनुसरण में पारित किया गया है, को भी अपास्त किया जाता है। याची को प्रदत्त पहली कालबद्ध प्रोन्नति की तिथि से 850-1360/- रुपए के वेतनमान का दावा करने और प्राप्त करने का अधिकारी घोषित किया जाता है।

12. यह भी प्रतीत होता है कि याची झारखण्ड राज्य के सृजन से पहले वर्ष 1999 में सेवानिवृत्त हो गया था। इसलिए याची के दावे के संबंध में दायिता पूर्णत: बिहार राज्य पर है इसलिए याची को इस आदेश की एक प्रति के साथ बिहार राज्य के सक्षम प्राधिकारी के समक्ष एक अभ्यावेदन दाखिल करने का निर्देश दिया जाता है और अभ्यावेदन की एक प्रति की प्राप्ति की तिथि से तीन महीनों के भीतर बिहार राज्य इस आदेश में निहित सम्परीक्षणों के आलोक में, बिहार राज्य का प्रत्यर्थी प्राधिकारी इस पर विचार करेगा और निस्तारण करेगा और प्रभावी रूप से याची को निर्णय प्रेषित करेगा।

उपरोक्त सम्परीक्षण के साथ, इस आवेदन का निस्तारण किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ dñ flUgk] U;k;efr

श्री युधिष्ठिर राय

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू० पी० (क्रि०) सं० 5 वर्ष 2006. 25 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226–F.I.R.—का अभिखंडन–F.I.R. में अभिकथित अपराध भारतीय दंड संहिता के उपबन्धों को आकर्षित करता है परन्तु साथ ही संथाल परगना भूधृति अधिनियम के अधीन विशिष्ट विधि में अपराध गठित करता है–अभिनिर्धारित किया गया, यदि अभियुक्त को दंडित करने वाला विशिष्ट विधि उपलब्ध है तो यह सामान्य विधि पर प्रभावी होगा–याची को विशिष्ट विधि के अधीन अभियोजित किया जा सकता है–भारतीय दंड संहिता के उपबन्ध के अधीन दाण्डिक अभियोजन अनैच्छिक है–F.I.R. अभिखंडित किया गया। (पैरा 10)

निर्णयज विधि.–AIR 1992 SC 604; W.P. (Cr.) No. 75 of 2006—निर्दिष्ट।

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Jha, For the Petitioner; Mr. R.R. Mishra, For the Respondents.

डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति.–वर्तमान याची ने I.P.C. की धाराएँ 406/420/452 तथा 188 के अधीन अपने विरूद्ध अभिकथित अपराध हेतु G.R. No. 341 वर्ष 2005 से सम्बन्धित देवघर थाना केस सं॰ 109 वर्ष 2005 के सम्बन्ध में दर्ज किए गए F.I.R. जो C.J.M., देवघर के समक्ष लम्बित है, के अभिखंडन एवं इस F.I.R. के आधार पर शुरू की गयी सम्पूर्ण दाण्डिक कार्यवाही के भी अभिखंडन हेतु भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण रिट अधिकारिता का अवलम्ब लिया है।

2. इस मामले के तथ्य, जैसा कि किसी किशोर सिंह से प्राप्त सूचना के अनुसार टाउन पुलिस स्टेशन, देवघर के प्रभारी अधिकारी के समक्ष पेश की गयी सूचनादाता S.D.O., देवघर की लिखित रिपोर्ट में वर्णित किया गया है, यह था कि याची युधिष्ठिर रॉय भूमि हड़पने के आशय से अंचल देवघर के अंतर्गत मौजा खोरादा, शहर प्लॉट सं॰ 1231A पर चाहरदीवारी खड़ा कर रहा था। इस सूचना के आधार पर, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन 8 कट्ठा भूमि पर एक कार्यवाही पक्षकारों के बीच दाण्डिक प्रकीर्ण सं॰ 572 वर्ष 2004 उद्भूत करते हुए प्रारंभ की गयी थी एवं दोनों से अपने-अपने कारण दर्शाने की आदेश की गयी थी। यद्यपि, कार्यवाही के दौरान, 7.12.2004 को किशोर सिंह द्वारा यह सूचित किया गया था कि प्रश्नगत भूमि पर दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन प्रतिषेध आदेश के बावजूद, चाहरदीवारी का निर्माण कार्य युधिष्ठिर राय द्वारा किया जा रहा था। देवघर पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को निर्देश दिया गया एवं उसके अनुपालन में निर्माण कार्य, जो विवादित प्लॉट पर किया जा रहा था, रोका गया। लिखित रिपोर्ट में यह भी अभिकथित किया गया कि अंचलाधिकारी, देवघर से, जब अपेक्षा की गयी, यह रिपोर्ट किया कि टाउन प्लॉट सं॰ 1231A सर्वे प्लॉट सं॰ 236 से संबद्ध एक गोचर भूमि (चारागाह) था जिसका क्षेत्रफल 4.92 एकड़ था एवं यह तथ्य गुप्त रखते हुए कि उक्त भूमि गोचर भूमि की प्रकृति का था, इसे रोहनी घाटवाल द्वारा त्रिपुरारी राउत के पक्ष में व्यवस्थापित किया गया था एवं यह कि याची युधिष्ठिर रॉय ने दावा किया कि उक्त भूमि उसके द्वारा प्राप्त की गयी थी परन्तु याची द्वारा भूमि पर अपना दावा प्रमाणित करने के लिए कोई भी दस्तावेज पेश नहीं किया गया था। अंचलाधिकारी द्वारा यह रिपोर्ट किया गया था कि याची ने उक्त भूमि पर अतिक्रमण किया था एवं उसके पास कोई वैध पत्र नहीं थे। अंचलाधिकारी द्वारा यह स्पष्टीकृत किया गया कि प्राधिकार द्वारा गोचर भूमि के व्यवस्थापन हेतु कोई प्रावधान नहीं था, एवं यदि इसके किसी भाग को व्यवस्थापित किया गया था, तो यह अवैध व्यवस्थापन के तुल्य होगा, जो वर्जित किया गया था। सूचनादाता अनुमंडलाधिकारी, देवघर ने अभिकथित किया कि प्रभारी अधिकारी, देवघर द्वारा अंचलाधिकारी, देवघर के अधीक्षण में पूर्ववर्ती अवसरों पर प्रश्नगत भूमि पर से अतिक्रमण के हटाये जाने के बावजूद, याची ने पक्की चाहरदीवारी का निर्माण किया था साथ ही गोचर भूमि, जो विवादित प्लॉट था, पर पुनः अतिक्रमण करके इसमें एक कमरे का निर्माण कराया था एवं अंततः इस अतिक्रमण को सूचनादाता के निर्देश के अनुसरण में दिनांक 27.3.2005 के ज्ञापन सं॰ 194/Go, देवघर के माध्यम से हटाया गया। सूचनादाता ने अभिकथित किया कि याची ने उक्त भूमि पर कब्जा करने से पक्षकारों को रोकते हुए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन उक्त भूमि पर कार्यवाही के बावजूद जबरदस्ती एक दस्तावेज, जिसे जाली होना अभिकथित किया गया है, के विरूद्ध गोचर भूमि पर अतिक्रमण किया था एवं इस प्रकार, याची ने उस भूमि पर कब्जा किया था जिसका मूल्य 60-70 लाख रुपये था।

3. याची को पुलिस केस के आधार पर 14.5.2005 को गिरफ्तार किया गया था, यद्यपि उसे प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, देवघर के न्यायालय द्वारा 18.5.2005 को नियमित जमानत पर छोड़ा गया था।

4. याची का मामला यह था कि S.D.M., सदर देवघर ने दिनांक 27.12.1999 के आदेश के माध्यम से किसी त्रिपुरारी राउत की आवेदन पर प्लॉट सं॰ 1232A के सीमांकन हेतु उसके यह दावे पर उसने उक्त भूमि घाटवाल रोहेनी ईस्टेट से 10.2.1954 को प्राप्त किया था एवं चूँकि तब वह प्रश्नगत भूमि का कब्जेदार था एवं मालगुजारी का अद्यतन भुगतान कर रहा था। दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन कार्यवाही के दौरान निर्देश दिया कि सीमांकन के आदेश के अनुसरण में, जैसा कि सब-डिविजनल मजिस्ट्रेट द्वारा पारित किया गया था अंचल अमीन ने राजस्व प्रकीर्ण वाद सं॰ 108/ 1999-2000 में दिनांक 1.12.1999 के अपने रिपोर्ट के द्वारा यह अभिकथित किया कि प्लॉट सं॰ 1232A, जो 1 बीघा 5 कट्ठा माप का है, को रोहेनी ईस्टेट के भूस्वामी द्वारा 10.2.1954 को त्रिपुरारी राउत के नाम से व्यवस्थापित किया गया था एवं यह कि अपना नाम दाखिल खारिज होने के बाद वह राज्य सरकार को मालगुजारी का भुगतान कर रहा था। याची ने उक्त त्रिपुरारी राउत से करार किया एवं त्रिपुरारी राउत ने दिनांक 26.12.2002 को पट्टे का एक विलेख निष्पादित किया जिसके द्वारा उक्त त्रिपुरारी राउत ने याची को प्लॉट सं॰ 1232A का उपयोग रेड रोज स्कूल के बच्चों के लिए खेल के मैदान के रूप में उपयोग करने की अनुमति दी थी एवं यह कि उक्त पट्टा याची को 500/- रु॰ मासिक किराये पर 30 वर्षों की अवधि हेतु दी गयी थी एवं इसलिए, इन परिस्थितियों में, किसी भी स्थिति में याची के विरूद्ध कमोबेशी भा॰ दं॰ सं॰ की धाराएँ 406/420/452/188 के अधीन अभिकथित अपराध हेतु कोई भी अपराध दर्ज नहीं किया गया था, क्योंकि वे लोग पट्टेदार के रूप में कब्जेदार थे।

5. विधि के बिन्दू पर, याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि धारा 67 के संदर्भ में संथाल परगना भूधृति अधिनियम, 1949 के अधीन विनिर्दिष्ट उपबन्ध अधिकथित किया गया है जो स्वयं किसी व्यक्ति द्वारा गोचर भूमि के अभिकथित अतिक्रमण हेतु एक दाण्डिक उपबन्ध है एवं इसलिए, याची को सामान्य विधि के अधीन अभिकथित अपराध हेतु अभियोजित नहीं किया जा सकता है यद्यपि अतिक्रमण के अभिकथन का प्रत्याखान किया गया है। वर्तमान मामला विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया कि **ए॰ आई॰ आर॰ 1992 एस॰ सी॰ 604** में रिपोर्ट किए गए **भजन लाल** के मामले द्वारा आच्छादित है जिसमें सर्वोच्च न्यायालय द्वारा F.I.R. के अभिखंडन के नियम पर शासित कुछ निर्णयाधारों को प्रतिपादित किया गया था एवं वर्तमान मामला विधि के उक्त प्राधिकार द्वारा पूर्ण रूप से आच्छादित है।

6. अधिवक्ता ने पुनः **डब्ल्यू॰ पी॰ (क्रि॰) सं॰ 75 वर्ष 2006 (सुनील कुमार सिंह बनाम झारखंड राज्य)** में इस न्यायालय के रिपोर्ट नहीं किए 23.3.2007 के गए एक निर्णय पर भरोसा व्यक्त किया है जिसमें यह सम्प्रेक्षित किया गया था कि जब विशेष विधि में एक विनिर्दिष्ट दाण्डिक उपबन्ध है, तो सामान्य विधि के अधीन दाण्डिक अभियोजन को आकर्षित नहीं किया जा सकता था।

7. प्रत्यर्थी सं॰ 2 से 4 की ओर से दाखिल किए गए शपथ-पत्र में, यह दोहराया गया था कि 4.92 एकड़ माप वाले मौजा खेरादा के प्लॉट सं॰ 236 को गोचर भूमि के रूप में अभिलिखित किया गया था एवं संथाल परगना भूधृति अधिनियम, 1949 के अनुसार, गोचर भूमि (मवेशियों के चरने के लिए छोड़ी गयी भूमि) का उपयोग अन्य प्रयोजनों हेतु नहीं किया जा सकता है। इसमें यह दोहराया गया था कि टाउन प्लॉट सं॰ 1232A वास्तविक रूप से 4.92 एकड़ भूमि वाला प्लॉट सं॰ 236 था एवं याची ने गोचर भूमि जो प्लॉट सं॰ 236 होना अभिलिखित किया गया है, को हड़पने के आशय से तथाकथित अमलनामा द्वारा त्रिपुरारी राउत के नाम पर हस्तांतरित करने के लिए छल साधित किया था जो अभिकथित रूप से रोहेनी घाटवाल द्वारा प्रदत्त किया गया था। याची ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन कार्यवाही में S.D.O. के समक्ष या रिट न्यायालय के समक्ष इस प्रतिवाद के समर्थन में कोई कागज का टुकड़ा पेश नहीं किया कि उसने उक्त भूमि के लिए त्रिपुरारि राउत से पट्टा प्राप्त किया था। फिर भी, प्रति शपथपत्र में प्रत्यर्थीगण द्वारा यह स्वीकार किया गया था कि याची द्वारा अभिकथित रूप से किए गए अतिक्रमण को स्थानीय प्राधिकारी द्वारा एवं अंचलाधिकारी, देवघर की उपस्थिति में

पुलिस की मदद से हटाया गया है, परन्तु तब भी अभियोजन के अनुसार तथ्य यही रहा कि याची ने गोचर भूमि पर कब्जा करने की कोशिश की, यद्यपि, प्रत्यर्थीगण इस बारे में प्रति शपथपत्र में इस विधिक बिन्दु पर चुप थे कि क्या भारतीय दंड संहिता को दाण्डिक उपबंध के अधीन याची का दाण्डिक अभियोजन संथाल परगना भूधृति अधिनियम, जो कि विशिष्ट विधि के हैं, की धारा 67(1)(h)(ii) में यथा अंतर्विष्ट दाण्डिक उपबन्ध के आमने सामने प्रत्यक्षत: पोषणीय था।

8. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करने पर, मैं यह पाता हूँ कि प्रत्यर्थीगण ने बहुत ही उचित रूप से स्वीकार किया है कि प्रश्नगत भूमि, जो गोचर होना अभिकथित किया गया है, जिसका अतिक्रमण याची द्वारा अभिकथित रूप से दीवाल बनाकर एवं इसमें कमरे का निर्माण कराकर किया गया था, उसे स्थानीय प्राधिकारी द्वारा हटाया गया था एवं यदि याची ने कोई अपराध कारित किया था तब भी यह संथाल परगना भूधृति अधिनियम, 1949 की धारा 67(1)(h)(ii) के दाण्डिक उपबन्धों को आकर्षित करता था, जो कि विशिष्ट विधि है एवं यह कहता है:–

> ''यदि कोई व्यक्ति रैयत रहकर किसी भी अभिलिखित ग्रामीण रास्ता, कैम्पिंग या चारागाह भूमि का अतिक्रमण करता है तो वह उस जुर्माने का दायी होगा जो दो हजार रुपये तक का हो सकता है एवं अपराध जारी रहने की दशा में पुन: उस जुर्माने, जो 5 रु॰ प्रतिदिन से अधिक का नहीं होगा जिस दौरान अपराध जारी रहता है।''

9. बिहार अनुसूचित क्षेत्र विनियम, 1969 (1969 के विनियम 1) की धारा 6 द्वारा, इस उपबन्ध को अंत:स्थापित किया गया था,

> ''यदि कोई भूमि इस अधिनियम की धारा 20 या किसी अन्य उपबन्ध के उल्लंघन में या कपटयुक्त विधि से हस्तांतरित की जाती है एवं इस हस्तांतरण की जानकारी रहने पर किसी व्यक्ति द्वारा ग्रहण या इसपर कृषि कार्य किया जाता है, तो उसे या तो उस अवधि के विवरण के कारावास से, जो तीन वर्षों तक का हो सकता है या जुर्माने से, जो एक हजार रुपये तक का हो सकता है, या दोनों से दंडित किया जाएगा एवं अपराध जारी रहने की दशा में, पुन: उस जुर्माने, जो प्रतिदिन 50 रुपये प्रतिदिन से अधिक का नहीं होगा, से दंडित किया जाएगा जिस दौरान अपराध जारी रहता है।''

इसमें यह उपबन्ध किया गया था कि जुर्माना उपायुक्त द्वारा स्वयं अपने समावेदन पर कराये गए जाँच पर या प्राप्त सूचना पर या उस तिथि से तीन माह के भीतर जब अपराध कारित किया गया था व्यथित पक्षकार के परिवाद पर आरोपित किया जाएगा।

10. यह पुरानी विधि है कि विशिष्ट विधि सामान्य विधि पर प्रभावी होगा। मैं याची की ओर से पेश किए गए तर्क में सारभूतता पाता हूँ कि यदि उस भूमि के अतिक्रमण का अभिकथन किया गया था, जो गोचर भूमि की प्रकृति का होना अभिकथित था तो दाण्डिक उपबन्ध के अधीन याची के अभियोजन हेतु उपबंध संथाल परगना भूधृति अधिनियम में था एवं यह कि भारतीय दंड संहिता के उपबन्धों के अधीन उसका दाण्डिक अभियोजन व्यर्थ है जिसके लिए यह बरकरार नहीं रह सकता है। मैं याची के I.P.C. के अधीन अभिकथित अपराध हेतु अभियोजन का कोई भी कारण नहीं पाता हूँ एवं यह विधि में अनवधार्य है। मैं इस रिट आवेदन में बल पाता हूँ एवं इस प्रकार, यह अनुज्ञात किया जाता है एवं G.R.No. 341 वर्ष 2005 से सम्बन्धित देवघर थाना केस सं॰ 109/05 से उद्भूत F.I.R. को परिणामिक प्रभाव सहित अभिखंडित किया जाता है, जिसमें याची को एक अभियुक्त के रूप में अंकित किया गया है। यद्यपि, प्रत्यर्थीगण, जो विधि के समुचित उपबंध के अधीन विधि का सहारा लेने के लिए स्वतंत्र है।

ekuuh; vftr dqekj flUgk] U;k;efrl

सपन कुमार एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 668 वर्ष 2007. 20 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

(क) सेवा विधि–नियुक्ति–दूसरे विज्ञापन के अनुसरण में याचीगण चयन के लिए उपस्थित हुए–प्रथम विज्ञापन के अनुसरण में भी वे उसी पद के लिए उपस्थित हुए थे और पैनल में सम्मिलित किए गए थे–पैनल में से किसी की भी नियुक्ति नहीं की गई थी–अभिनिर्धारित किया गया, पैनल नियुक्ति पाने के लिए एक व्यक्ति में कोई अजेय, प्रोद्भूत या निहित अधिकार उत्पन्न नहीं करता है। (पैरा 14 एवं 15)

(ख) विधि के नियम–''विबन्ध''–विबन्ध का नियम–एक व्यक्ति द्वारा दूसरे चयन प्रक्रिया में एक बार भाग लेने पर वह पहली प्रक्रिया को चुनौती नहीं दे सकता क्योंकि विबन्ध के नियम द्वारा वह विबन्धित हो जाता है। (पैरा 15)

निर्णयज विधि.–2008(2) Supreme 328; Civil Appeal Nos. 5342-5346, 5376 of 2003 of Supreme Court.

अधिवक्तागण.–Mr. Anil Kr. Sinha, For the Petitioner; Mr. P. Modi, For the State.

आदेश

विज्ञापन संख्या एस॰ यू॰ जे॰ एस॰ बी॰ 900 (श्रम–5) के माध्यम से दुमका जिले में प्रयोगशाला तकनीशियन (हिमशीतलीकृत वीर्य) के स्वीकृत पद पर नियुक्ति के लिए सहायक नियोजन पदाधिकारी–उप–क्षेत्रीय रोजगार निदेशालय, दुमका के हस्ताक्षराधीन निर्गत विज्ञापन संख्या ओ॰ सी॰–01/04 के माध्यम से श्रम, नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग, झारखंड सरकार, राँची द्वारा निर्गत विज्ञापन के अनुसरण में 5.10.2004 को परीक्षा आयोजित की गई थी और परीक्षाफल/पैनल तैयार किया गया है और परीक्षाफल प्रकाशन के लिए सचिव, पशुपालन एवं मत्स्य विभाग, झारखण्ड सरकार, राँची को अग्रसारित किया गया है, के चयनित उम्मीदवारों के परीक्षाफल को प्रकाशित करने और विज्ञापन संख्या 02/सचिवालय पशुपालन विभाग/06 के अधीन प्रत्यर्थीगण द्वारा प्रारम्भ की गई चयन प्रक्रिया, जो इस न्यायालय द्वारा पारित निर्देश के विरूद्ध है, को अपास्त करने के लिए भी प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने वाले एक यथोचित रिट, आदेश या निर्देश को निर्गत करने के लिए वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गई है।

2. यह प्रतीत होता है कि प्रारम्भ में विज्ञापन संख्या ओ॰ सी॰–01/04 के तौर पर एक विज्ञापन वर्ष 2004 में प्रकाशित किया गया था, जिसके अनुसरण में याचीगण ने आवेदन किया और उनके तर्क के अनुसार, उनका चयन किया गया था और एक पैनल तैयार किया गया था। तथापि, यह प्रभावी नहीं बनाया गया था और इसी पद के लिए एक द्वितीय आवेदन निर्गत किया गया था जिससे वर्तमान याचीगण को उपस्थित होने की अनुमति नहीं दी गई थी क्योंकि उनका अनुभव निजी संस्थानों से था जबकि दूसरे विज्ञापन में प्रयोगशाला तकनीशियन के पद के लिए अर्हता मानदंड के तौर पर सरकारी संस्थान से ''एक वर्ष का (हिमशीतलीकृत वीर्य) कार्य अनुभव'' इंगित किया गया था।

3. जहाँ तक पात्रता खण्ड का संबंध था तो इसमें याचीगण ने प्रयोगशाला तकनीशियन (हिमशीतलीकृत वीर्य) के पद पर नियुक्ति के लिए समाचारपत्र में प्रकाशित विज्ञापन संख्या 01 सचिवालय पशु पालन/2004-05 को चुनौती दी जिसके द्वारा और जिसके अधीन हिमशीतलीकृत वीर्य कार्य में एक वर्ष का अनुभव विहित किया गया है। यह उल्लेख किया गया है कि ऐसा अनुभव,

सरकारी संस्थान के अनुभव को छोड़कर, स्वीकार नहीं किया जाएगा क्योंकि निजी संस्थानों में से किसी को भी पशुपालन विभाग द्वारा अनुमोदित नहीं किया गया है। डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 156 वर्ष 2005 में इस न्यायालय की माननीय खण्डपीठ के समक्ष याचीगण द्वारा की गई यह एकमात्र प्रार्थना थी और दिनांक 23.6.2006 के निर्णय के अनुच्छेद 2 में निम्नांकित रूप से अभिलिखित किया गया था:

> ''जिस एकमात्र प्रश्न के अभिनिर्धारण की आवश्यकता है वह यह है कि क्या सचिव, पशुपालन एवं मत्स्य विभाग, झारखंड सरकार को ऐसी शर्त विहित करने की अधिकारिता है, अगर राज्य द्वारा निर्गत मार्ग-निर्देश किसी अन्य संस्थान के अनुभव निषिद्ध नहीं करते हो।''

पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, इस न्यायालय की माननीय खण्ड पीठ ने एक सुविचारित निर्णय द्वारा निम्नांकित रूप से निर्देश दिया:—

> "12. वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थीगण पात्रता मानदंड को परिवर्तित करने के लिए आधारों को दर्शाने से विफल रहे हैं। उन्होंने विज्ञापन संख्या ओ॰ सी॰-01/04 के अनुसरण में यथा तैयार की गई मेधा सूची पर कार्रवाई न करने का स्पष्टीकरण नहीं दिया है, और अनुभव रखने वाले व्यक्तियों के बीच किए गए यथा वर्गीकरण का कोई आधार नहीं दर्शाता है, जैसा कि 22 मार्च, 1990 के मार्ग-निर्देश द्वारा दर्शाया गया था। राज्य के विद्वान अधिवक्ता इसे भी स्पष्ट करने में विफल रहे कि क्यों एक सरकारी संस्थान से एक वर्ष का अनुभव पश्चातवर्ती विज्ञापन में विहित किया गया था, जबकि सम्बद्ध विषय में प्रशिक्षण प्रदान करने वाले कोई सरकारी संस्थान राज्य में नहीं है। इस प्रकार, सरकारी संस्थान से अनुभव रखने वालों और निजी संस्थान से अनुभव रखने वालों के बीच इस आधार पर किए गए आक्षेपित वर्गीकरण मार्ग-निर्देशों के विरूद्ध होने और इप्सित किए गए उद्देश्य के साथ कोई सम्बंध नहीं होने के कारण, इसे बरकरार नहीं रखा जा सकता। विज्ञापन संख्या 01 सचिवालय पशुपालन/2004-05 में यथा किया गया सरकारी संस्थान से अनुभव का मानदंड, तद्नुसार, अपास्त किया जाता है। प्रत्यर्थीगण के दिनांक 22 मार्च, 1990 के मार्ग-निर्देश के अनुसार कार्य करने का निर्देश दिया जाता है, जैसा कि विज्ञापन संख्या ओ॰ सी॰ 01/04 में प्रतिबिम्बित था, अर्थात्, ''एक वर्ष का हिमशीतलीकृत वीर्य कार्य अनुभव'' और याचीगण के मामले और इस प्रकार की स्थिति में मौजूद व्यक्तियों पर पुनर्विचार करेगा जो प्रयोगशाला सहायक के पद पर उनकी नियुक्ति के लिए अन्यथा सुयोग्य है और इस आदेश की एक प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुतीकरण की तिथि से चार महीनों के भीतर चयन की प्रक्रिया पूरी करेंगे।''

5. यह प्रतीत होता है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष झारखण्ड राज्य द्वारा डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 156 वर्ष 2005 में दिनांक 23.6.2006 के पुर्वोक्त आदेश को चुनौती देते हुए विशेष अनुमति याचिका (व्यवहार) संख्या 15674 वर्ष 2006 दाखिल किया गया था और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यथा वापस ली गई विशेष अनुमति याचिका को खारिज करते हुए केवल इस प्रश्न तक सीमित रहते हुए राज्य (याची) को उच्च न्यायालय के पास जाने की स्वतंत्रता प्रदान की, कोई उम्मीदवार कुट रचित और जाली दस्तावेजों के आधार पर नियुक्ति प्राप्त नहीं करे। प्रदत्त स्वतंत्रता के अनुसार, याचीगण आई॰ ए॰ संख्या 2927 वर्ष 2006 को दाखिल करने दोबारा इस न्यायालय के समक्ष आए जिसमें माननीय खण्ड पीठ ने दिनांक 27.10.2006 के अपने आदेश के माध्यम से स्पष्टीकृत किया कि राज्य को उन व्यक्तियों/उम्मीदवारों की नियुक्ति पर विचार नहीं करने की आवश्यकता है जिनके प्रमाण-पत्र कूटरचित या जाली पाए जाते हैं परन्तु अन्य मामले में 23.6.2006 को इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश अक्षुण्ण है।

6. पूर्वोक्त आदेश एवं निर्देश के अनुसरण में, पशुपालन एवं मत्स्य विभाग द्वारा एक नया विज्ञापन यानि विज्ञापन संख्या 02 सचिवालय पशुपालन/2006 दिनांक 21.12.2006 निर्गत किया गया, जिसमें, पूर्व के वर्णन को हटा दिया गया और ऐसे उम्मीदवारो को भी, जिन्होंने निजी संस्थानों से हिमशीतलीकृत

वीर्य कार्य में एक वर्ष का अनुभव प्राप्त किया था, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 156 वर्ष 2005 में पारित, दिनांक 23.6.2008 के आदेश के माध्यम से इस न्यायालय की खण्ड पीठ द्वारा निर्गत निर्देश के अनुपालन में सुपात्र बना दिया गया।

7. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता कहते हैं कि दिनांक 21.12.2006 के पूर्वोक्त विज्ञापन के अनुसरण में याचीगण ने भी अन्य के साथ भाग लिया है और चयन प्रक्रिया भी पूरी कर ली गई है। याचीगण ने इसमें इस रिट याचिका में विज्ञापन संख्या 02 सचिवालय पशुपालन/2006 दिनांक 21.12.2006 को इस आधार पर चुनौती दी हैं कि डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 156 वर्ष 2005 में माननीय उच्च न्यायालय द्वारा उसके दिनांक 23.6.2006 के आदेश के माध्यम से निर्गत निर्देश का यह उल्लंघन करता है। याचीगण ने यह भी आग्रह किया है कि विज्ञापन संख्या ओ॰ सी॰–01/04 के अनुसरण में तैयार किए गए पैनल से चयनित उम्मीदवारों की नियुक्ति की जानी चाहिए।

8. मैंने याचीगण की ओर से उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता, श्री अनिल कुमार सिन्हा के तर्क को सुना है। याचीगण की ओर से उठाया गया मुख्य तर्क इसको लेकर है कि क्या प्रत्यर्थी प्राधिकारी विज्ञापन संख्या ओ॰ सी॰–01/04 के संबंध में 5.10.2004 को आयोजित परीक्षा के अनुसरण में उन्हें अग्रसारित परिणाम/पैनल प्रकाशित करने के लिए बाध्य है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाया गया दूसरा तर्क यह है कि वर्तमान विज्ञापन संख्या 02 सचिवालय पशुपालन/06 अवैधानिक था और इस न्यायालय की माननीय खण्ड पीठ द्वारा दिनांक 23.06.2006 के आदेश के माध्यम से निर्गत अधिदेश एवं आदेश के विरूद्ध था। याचीगण की ओर से यह भी निवेदन किया गया है कि समूची कार्रवाई भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 एवं 16 के विरूद्ध प्राधिकारियों का कार्य मनमाना, अवैधानिक और शक्ति के amounts to colourable इस्तेमाल के तुल्य है।

9. प्रत्यर्थी–राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि व्यवहार अपील संख्या 5342, 5343, 5344, 5345, 5346 एवं 5376 वर्ष 2003 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित, दिनांक 23.7.2003 के आदेश, और आई॰ ए॰ संख्या 304 वर्ष 2003 में पारित, दिनांक 2.12.2003 के आदेश के अनुपालन में, विभाग के तकनीकी सहायको के पदों को भरने का निर्णय लिया और इस प्रभाव के लिए दिनांक 24.1.2004 को अधिसूचना संख्या 246 निर्गत की गई। तद्नुसार, उपयुक्त उम्मीदवारों के चयन के लिए मानदंड नियत किया गया, जिसे पत्र संख्या 608 दिनांक 3.3.2004 के माध्यम से सम्बद्ध जिले के उपायुक्तों को प्रेषित किया गया और तत्पश्चात, तकनीकी सहायकों के 25 पदों को भरने के लिए विज्ञापन संख्या ओ॰ सी॰ 01/04 प्रकाशित किया गया। परीक्षा 2004 में आयोजित की गई और याचीगण ने परीक्षा के लिए आवेदन किया और उसमें उपस्थित हुए और, उनके अनुसार, वे परीक्षा में उत्तीर्ण हुए थे परन्तु उनका परिणाम प्रकाशित नहीं किया गया था। इसी दौरान, सिविल अपील संख्या 5342-43 वर्ष 2003 और सिविल अपील संख्या 5346 वर्ष 2003 में पारित आदेश का गैर–अनुपालन को अभिकथित करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष अवमान याचिका संख्या 378-79 वर्ष 2004 और 375 वर्ष 2004 दाखिल किया गया। अपने आदेश का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मामले का स्थगन कर दिया। इस पृष्ठभूमि में एडुकेशनल कन्सलटैंट इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली नामक भारत सरकार के एक उपक्रम के माध्यम से केन्द्रीय रूप से परीक्षा संचालित करने का निर्णय सरकार द्वारा लिया गया और पत्र संख्या 3136 दिनांक 20.12.2004 के माध्यम से इसे सभी उपायुक्तों को प्रेषित किया गया। इसके परिणामत: आवेदन बुलाने वाला द्वितीय विज्ञापन आया, जिसमें हिमशीतलीकृत वीर्य कार्य में एक वर्ष का पात्रता मानदंड को परिवर्तित किया गया था और केवल सरकारी संस्थान से हिमशीतलीकृत वीर्य कार्य में एक वर्ष के अनुभव तक सीमित कर दिया गया। तद्नुसार, 9.1.2005 को परीक्षा संचालित की गई और डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 156 वर्ष 2005 में यह चुनौती की विषय वस्तु थी।

10. मैंने समूचे अभिवाकों पर विचार किया है और तर्कों को विस्तार से सुना है। प्रारम्भ में ही यह स्पष्ट करना सुसंगत है कि याचीगण द्वारा दाखिल रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 156 वर्ष 2005 में प्रार्थना, किसी अन्य संस्थान की जगह सरकारी संस्था से हिमशीतलीकृत वीर्य कार्य में एक वर्ष के मानदंड को चुनौती देने तक सिमित था जैसी स्थिति पूर्व के विज्ञापन संख्या ओ॰ सी॰ 01/04 में विद्यमान था। पूर्वोक्त तथ्य उनकी स्वयं की प्रार्थना और डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 156 वर्ष 2005 में माननीय खण्ड पीठ के समक्ष विचार के लिए सीमित मुद्दे द्वारा संपोषित है, जो पैरा 1 एवं 2 में अभिलिखित है और इसे नीचे उत्कथित किया जा रहा है:–

> ''जहाँ तक पात्रता खण्ड, जिसके द्वारा और जिसके अधीन, जबकि हिमशीतलीकृत वीर्य कार्य में एक वर्ष का अनुभव विहित किया गया है, यह अभिलिखित किया गया है कि सरकारी संस्थान से प्राप्त अनुभव को छोड़कर किसी निजी संस्था के अनुभव को स्वीकार नहीं किया जाएगा क्योंकि पशुपालन विभाग द्वारा इनमें से किसी को भी मान्यता नहीं दी गई, का संबंध है तो प्रयोगशाला तकनीशियन (हिमशीतलीकृत वीर्य) के पद पर नियुक्ति के लिए समाचार पत्र में प्रकाशित विज्ञापन संख्या 01 सचिवालय पशुपालन/2004-05 के विरूद्ध याचीगण द्वारा यह रिट याचिका दाखिल की गई है।
>
> जिसमें एकमात्र अभिनिर्धारण की आवश्यकता यह है कि क्या सचिव, पशुपालन एवं मत्स्य विभाग, झारखण्ड सरकार को ऐसी शर्त विहित करने की अधिकारिता है, अगर राज्य द्वारा निर्गत मार्ग–निर्देश किसी अन्य संस्थान के अनुभव को निषेध नहीं करते हैं।''

11. यह स्पष्ट करना भी सुसंगत है कि रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या–156 वर्ष 2005 को अनुज्ञात करते समय माननीय उच्च न्यायालय द्वारा निर्गत निदेश भी विज्ञापन संख्या 01 सचिवालय पशुपालन विभाग/04-05 में यथा वर्णित सरकारी संस्थान से अनुभव के परिवर्तित मानदंड को अपास्त करने तक सीमित थे और इसे अपास्त कर दिया गया था और माननीय खण्ड पीठ द्वारा दिनांक 23.6.2006 के अपने आदेश द्वारा एक परमादेश/निर्देश निर्गत किया गया था, कि याचीगण और इसी प्रकार की स्थिति में मौजूद व्यक्तियों के मामलों पर पुन:विचार करने के लिए जिन्हें निजी संस्थान से हिमशीतलीकृत वीर्य कार्य में एक वर्ष का अनुभव था और जो प्रयोगशाला तकनीशियन के पदों पर नियुक्ति के लिए अन्यथा सुपात्र थे। इसने विनिर्दिष्ट रूप से निर्देश दिया कि **इस आदेश की एक प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से चार महीनों के भीतर चयन की प्रक्रिया किया जाए।**

12. तृतीय यानि विज्ञापन संख्या 2 सचिवालय पशुपालन/06, जो 21.12.2006 को प्रकाशित किया गया था, जिसे इस रिट याचिका में चुनौती देना इप्सित किया गया है का पठन करने पर भी यह स्पष्ट होगा कि यह ऐसे उम्मीदवारों, जिन्होंने निजी संस्थानों से हिमशीतलीकृत वीर्य कार्य में एक वर्ष का अनुभव पूरा किया था, को शामिल करके माननीय उच्च न्यायालय द्वारा निर्गत निर्देश के अनुपालन में दूसरे विज्ञापन यानि विज्ञापन संख्या 01 सचिवालय पशुपालन/2004-05 के निरंतरता में था।

13. इस न्यायालय की माननीय खण्डपीठ के आदेश पर कार्रवाई कर लिए जाने के कारण अन्तिमता प्राप्त कर ली है और इस प्रकार, याचीगण को ऐसा एक मुद्दा उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती जिसे पूर्व की रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 156 वर्ष 2005 में उन्होंने चुनौती नहीं दी है, जिसका आग्रह नहीं किया है और यह इससे ऊपर यथा उत्कथित प्रार्थना से स्पष्ट होगा। इस न्यायालय की माननीय खण्ड पीठ द्वारा निर्गत निर्देश विनिर्दिष्ट था कि बाधा को दूर करने और परीक्षा में बैठने के लिए याचीगण को सुपात्र बना देने के उपरान्त चयन प्रक्रिया को चार महीनों के भीतर पूरा करना है और इस प्रकार, वर्तमान रिट याचिका में प्रार्थना अन्यथा भी भ्रामक है और कानून की नजर में टिकने योग्य नहीं है।

14. यह तथ्य शेष रह जाता है कि किसी भी स्थिति में एक पैनल का अस्तित्व-काल एक वर्ष का होता है और पैनल में रखे जाने से नियुक्ति किए जाने के लिए एक व्यक्ति में कोई अजेय, प्रोदभूत या निहित अधिकार सृजित नहीं हो जाता है विशेषकर तब जब याचीगण द्वारा दाखिल रिट याचिका के माध्यम से मुकदमे के पहले चरण में ऐसी कोई प्रार्थना नहीं की गई थी।

15. अन्यथा रूप से भी याचीगण ने विज्ञापन जिसे वर्तमान रिट याचिका के अनुसरण में चुनौती देना इप्सित किया गया है, के अनुसरण में चयन के लिए उपस्थित होने के कारण वे विबन्ध के नियम के माध्यम से उक्त विज्ञापन को चुनौती देने से वर्जित होते हैं जबकि वह एक बार उपस्थित हो चुके हैं और भाग ले चुके हैं। इस संबंध में विधि सुस्थापित है और **2008(2) सुप्रीम 328** में यथा रिपोर्ट किए गए **धनंजय मलिक बनाम उत्तरांचल राज्य** के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नांकित रूप से पैरा संख्या 7 पर अवधारित किया:–

> "7. यह विवादित नहीं है कि इसमें रिट याचीगण-प्रत्यर्थीगण ने पूरी तरह से जानते हुए चयन प्रक्रिया में भाग लिया कि बी० पी० ई० या शारीरिक प्रशिक्षण में डिप्लोमा के साथ स्नातक के तौर पर विज्ञापन में ही स्पष्ट रूप से शैक्षणिक अर्हता इंगित थी। किसी आपत्ति के बिना चयन की प्रक्रिया में विफल रूप से भाग लेने के कारण वे चयन मानदंड को चुनौती देने में रोके जाते हैं अन्य के साथ इस पर कि विज्ञापन और अपेक्षित शैक्षणिक अर्हताओं के संबंध में चयन नियमावली के प्रतिकूल थी।''

16. पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों में व्ययों के संबंध में, किसी आदेश के बिना, इस रिट याचिका के किसी गुण से रहित होने के कारण, एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vftr d|ekj flUgk] U;k;efr

ज्ञानचंद साव एवं अन्य

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू० पी० (एस०) सं० 5806 वर्ष 2002. 22 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

(क) शब्द एवं मुहावरे–'समानता'–समानता का तात्पर्य सभी परिस्थितियों में समानता है। (पैरा 11)

(ख) शब्द एवं मुहावरे–'समान कार्य के लिए समान वेतन'–''समान कार्य के लिए समान वेतन'' का सिद्धांत संविदा के आधार पर या दैनिक मजदूरी के आधार पर नियुक्त व्यक्तियों पर लागू नहीं है। (पैरा 11)

(ग) सेवा विधि–'समान कार्य के लिए समान वेतन'–बिहार राज्य के एक निगम के रूप में निजी कंपनी अर्थात् मेसर्स ईस्टर्न मैंगनीज एण्ड मिनरल्स प्रा० लि०, कोडरमा के अधिग्रहण के पश्चात् भी, याचीगण को बिहार राज्य के निगम के अन्य कर्मचारियों के समान नियमित वेतनमान का भुगतान नहीं किया जा रहा है–अभिनिर्धारित किया गया, जब तक कि नियोक्ता एवं कर्मचारी का सम्बन्ध मौजूद न हो तबतक निगम पर नियोजन में समानता अथवा वेतनमान या वेतन में समानता का बोझ नहीं दिया जा सकता है। (पैरा 14)

निर्णयज विधि.–(2006)9 SCC 321; (1989)4 SCC 459; (2006)9 SCC 337; 2007(8) SCC 279; Civil Appeal Nos. 3013-18; 2116 of 1982; CWJC No. 397/1992(R); LPA No. 63/1999(R).

अधिवक्तागण.–M/s Bhaiya Vishwajit Kumar, Naresh Pd. Singh, For the Petitioners; Mr. S.P. Roy, For State of Bihar; Mr. H.K. Mehta, For State of Jharkhand; Mr. A.K. Mehta, For B.S.M.D.C.

आदेश

याचीगण ने खान आयुक्त, बिहार, पटना द्वारा पारित दिनांक 22 अप्रील, 2000 के उस आदेश को अभिखंडित करने की प्रार्थना के साथ यह रिट याचिका दाखिल की है, जिसमें, अन्य बातों के साथ-साथ, यह सम्प्रेक्षित किया गया है कि वर्तमान अभ्यावेदनकर्त्ता-सह-रिट याचीगण उपरोक्त पत्र में, किए गए परिचर्चाओं की दृष्टि में, वेतनमान की किसी समानता का हकदार नहीं है, एवं, तद्नुसार, अभिनिर्धारित किया कि उनके अभ्यावेदन खारिज होने योग्य है। पुनः नियमों के उस समूह की घोषणा करने के लिए प्रार्थना की गयी है जिसके अधीन बिहार राज्य खनिज विकास निगम की कोडरमा अबरख इकाई के कर्मचारियों की सेवा शर्तें याची के वेतन के सम्बन्ध नियमित की जानी है या वैकल्पिक रूप से, याचीगण ने इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के अधीन अपनाये गये नीति निर्णय के अनुरूप, ''समान कार्य के लिए समान वेतन'' के सिद्धांत पर प्रत्यर्थी-निगम के समान स्थिति वाले कर्मचारियों के अनुरूप वेतनमान अनुज्ञात करने एवं पुनः 9 मार्च 1986 से इस तिथि तक प्रभावी वेतन के अधिशेषों का भुगतान करने के लिए प्रार्थना किया है।

2. याचीगण के अनुसार, वे लोग पूर्व कंपनी अर्थात् मेसर्स ईर्स्टन मैंगनीज एण्ड मिनरल्स प्रा॰ लि॰, कोडरमा के कर्मचारी थे एवं उक्त निजी कंपनी द्वारा प्रचालित खान को तत्कालीन बिहार राज्य द्वारा सिविल अपील सं॰ 3013-18 एवं 2116 वर्ष 1982 में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 27 अगस्त, 1985 के उस आदेश के अधीन 9 मार्च, 1986 के प्रभाव से अधिग्रहण किया गया था, जो रिट याचिका के परिशिष्ट-1 में संलग्न है। अधिग्रहण के बाद भी याचीगण को दैनिक दर पर मजदूरी का भुगतान किया गया था।

3. याचीगण निवेदन करते हैं कि बिहार राज्य एवं अन्य ने कोडरमा जिला में एवं इसके आस-पास स्थित अबरख खानों के मामले के सम्बन्ध में सिविल प्रकीर्ण याचिका सं॰ 35248-54 वर्ष 1985 के माध्यम से भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय में अपील किया था, जो तत्कालीन मेसर्स ईस्टर्न मैंगनीज एण्ड मिनरल्स प्रा॰ लि॰ के नाम एवं शैली पर तत्कालीन निजी कंपनी के अधीन था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय दिनांक 27.9.1985 के अपने अंतरिम निर्देश के माध्यम से प्रसन्नतापूर्वक यह आदेश दिए थें कि (a) आवेदक निगम बिहार राज्य खनिज विकास निगम, राँची को सिविल अपील सं॰ 3013-3018 वर्ष 1982 एवं सिविल सं॰ 2116 वर्ष 1982 में एक पक्षकार के रूप में सम्मिलित किया जाए एवं (b) कलकत्ता उच्च न्यायालय के आदेश के अधीन नियुक्त रिसीभर या मजदूरी के भुगतान प्राधिकारी, कोडरमा को उन्मोचित किया जाता है एवं बिहार राज्य को खानों का कब्जे प्राप्त करने एवं उनपर विधि के अनुरूप विचार करने का हकदार है।

4. याचीगण के अनुसार, तत्कालीन बिहार सरकार ने दिनांक 26 दिसम्बर, 1986 को ज्ञापन सं॰ 7608 (M) पटना के माध्यम से एक आदेश पारित किया, जिसमें, राज्य सरकार ने अबरख खानों एवं इसके खान सम्बन्धी प्रचालनों का प्रबन्ध बिहार सरकार की ओर से एवं इसके लिए बिहार राज्य खनिज विकास निगम को सौंपने का निर्णय लिया। पूर्व में कोडरमा अबरख इकाई के कर्मचारियों को वेतन के भुगतान एवं वेतनमान की समानता के सम्बन्ध में बिहार राज्य खनिज विकास निगम से व्यथा थी एवं इसे अबरख आयुक्त, बिहार, पटना द्वारा दिनांक 22 अप्रील, 2000 के आदेश के माध्यम से अस्वीकार किया गया था, जो इस रिट याचिका में चुनौती देने की इप्सा की गयी है।

5. तत्पश्चात्, बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000, 15 नवम्बर, 2000 के प्रभाव से अस्तित्व में आया एवं इन खानों सहित, कोडरमा अबरख खानों की प्रतिष्ठान, उत्तराधिकारी झारखंड राज्य की प्रादेशिक अधिकारिता के अंतर्गत आया।

6. याचीगण द्वारा उठाया गया मुख्य प्रतिवाद यह है कि झारखंड सरकार याचीगण के वेतनमान की समानता से सम्बन्धित मुद्दे को विनिश्चित करने को बाध्य है। यह भी तर्क किया गया है कि पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 65 एवं उक्त अधिनियम की 9वीं अनुसूची का क्रम सं॰ 24 विवक्षा द्वारा यह उपबंध करता है कि बिहार राज्य खनिज विकास निगम के सम्बन्ध में बिहार राज्य खनिज विकास निगम का मुख्य कार्यालय एवं सम्पूर्ण कोडरमा अबरख इकाई भी उत्तराधिकारी झारखंड राज्य के हिस्से में आया है एवं, इस प्रकार, वेतनमान की समानता का निरन्तर दावा झारखंड राज्य एवं प्रत्यर्थी-निगम का दायित्व बन गया है।

7. प्रत्यर्थीगण के अनुसार, याचीगण कोडरमा अबरख इकाई में दैनिक वेतनभोगी कर्मचारी है एवं, उनके अनुसार, खान आयुक्त, बिहार, पटना द्वारा पारित दिनांक 22 अप्रैल, 2000 का आक्षेपित आदेश विधिमान्य एवं वैध था एवं बिहार सरकार, जैसा यह तब था, ने कोडरमा अबरख इकाई का स्वामी रहना जारी रखा एवं झारखंड राज्य खनिज विकास निगम उस सम्बन्ध में न तो स्वामी एवं न ही कोई लीज/पट्टा का धारक है। इसलिए, याचीगण द्वारा वेतनमान के समानता का दावा गैर-अनुमान्य एवं अविधिमान्य है एवं इसे बरकरार नहीं रखा जा सकता है। यह भी निवेदन किया गया है कि कोडरमा अबरख इकाई भारी घाटे में चल रहा है एवं यह एक बंद उद्यम है एवं खनन कार्य पूर्ण रूप से रूका हुआ है। यह भी प्रतिवाद किया गया है कि मेसर्स झारखंड राज्य खनिज विकास निगम एक सार्वजनिक क्षेत्र का उपक्रम है एवं, इसलिए, सेवा शर्तें भिन्न-भिन्न हैं एवं याचीगण के साथ झारखंड राज्य खनिज विकास निगम के कर्मचारियों के वेतनमान से समानता का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है। यह भी निवेदन किया गया है कि कोडरमा अबरख उद्योग का झारखंड राज्य खनिज विकास निगम से कोई विधिक संपर्क/सम्बन्ध नहीं है एवं उन्हें उपरोक्त खानों का मात्र प्रबन्ध सौंपा गया है। अधिग्रहण बिहार राज्य द्वारा किया गया था एवं तत्पश्चात् इसे 1986 में बिहार राज्य खनिज विकास आयुक्त को सौंपा गया था एवं चुनौती के अधीन आक्षेपित आदेश को खान आयुक्त, बिहार द्वारा पारित किया गया था एवं, इस प्रकार, किसी भी दशा में, याचीगण झारखंड राज्य खनिज विकास निगम के कर्मचारी नहीं है एवं वे लोग कोडरमा अबरख इकाई का प्रबन्ध करने के लिए राज्य सरकार की ओर से मात्र एक अभिरक्षक के रूप में कार्य कर रहे हैं। यहाँ आमेलन/नियमितीकरण हेतु कोई प्रार्थना नहीं की गयी है।

8. स्वीकृत तथ्य यहीं रहता है कि याचीगण को न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अंतर्गत केन्द्र सरकार/राज्य सरकार द्वारा नियत न्यूनतम मजदूरी का भुगतान किया जा रहा है।

9. मैंने पक्षकारों द्वारा उठाये गए परस्पर विरोधी प्रतिवादों एवं अभिवचनों पर विचार किया है। वर्तमान मामले में, याचीगण प्रारंभ में मेसर्स ईस्टर्न मैंगनीज एण्ड मिनरल्स लि॰ के कर्मचारी थे, जो एक शुद्ध रूप से निजी संगठन था एवं कंपनी को सिविल अपील सं॰ 3013-18 एवं 2116 वर्ष 1982 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के माध्यम से विघटित किया गया था एवं बिहार राज्य को खानों पर कब्जा करने एवं उनसे विधि के अनुरूप निपटने को कहा गया था। यह प्रतीत होता है कि याचीगण ने वेतनमान एवं भत्तों की समानता के सम्बन्ध में एक समान अनुतोष की मांग करते हुए पटना उच्च न्यायालय की राँची पीठ के समक्ष एक रिट याचिका दाखिल किया जो सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 397 वर्ष 1992 (R) था एवं उच्च न्यायालय ने कोई आदेश पारित करने से इनकार करते हुए याचीगण को सम्बन्धित प्राधिकारी के समक्ष मामले को उठाने का निर्देश दिया। तत्पश्चात्, याचीगण द्वारा एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 63 वर्ष 1999 (R) भी दाखिल किया गया एवं पटना उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ ने दिनांक 14 फरवरी, 2000 के अपने आदेश के माध्यम से विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को स्पष्ट किया एवं यह अभिनिर्धारित किया कि यह अपीलार्थीगण के दावे को अपने गुणावगुणों पर विनिश्चित करने में सरकार के रास्ते में बाधा नहीं बनेगा। इस आदेश में भी, जिसने अंतिमता प्राप्त

कर ली है, राज्य सरकार के पास भेजा गया था कि वह इसका विनिश्चय इसके गुणावगुणों पर करे एवं झारखंड राज्य खनिज विकास निगम को कोई निर्देश निर्गत नहीं किया गया था एवं, इस प्रकार, अन्यथा भी, यह दावा अनवधार्य, अवैध एवं उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के आज्ञा के विरूद्ध है। इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में, याचीगण द्वारा सचिव, खान एवं भू-विज्ञान विभाग, बिहार सरकार, जो अन्य कर्मचारियों के साथ वेतनमानों के समानता हेतु दावे के सम्बन्ध में अभ्यावेदन को खारिज करने वाले दिनांक 22 अप्रैल, 2000 का आदेश पारित करके प्रसन्न थे, के समक्ष एक अभ्यावेदन दाखिल किया गया था, जिस आदेश को इस रिट याचिका में चुनौती दिया जाना इप्सित है।

10. यह एक स्वीकृत मामला है कि याचीगण को न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अधीन अधिग्रहण के समय से दैनिक मजदूरी का भुगतान किया जा रहा है एवं इस प्रकार, सुस्थापित विधि के अनुसार, JSMDC के कर्मचारियों के साथ वेतनमान की बराबरी का दावा अनवधार्य है एवं खारिज किए जाने के योग्य है।

11. 'बराबरी' का तात्पर्य है सभी परिस्थितियों में समानता। वर्तमान मामले में, वेतनमान की समानता का दावा बरकरार रखने के लिए बुनियादी तत्व, जिसपर याचीगण को समान स्थिति में होना है, फिर विभेदकारी भी है। बराबरी का दावा करने के लिए, उनलोगों को झारखंड राज्य खनिज विकास निगम का कर्मचारी होना है, जो वे लोग, स्वीकार्यतः, नहीं है। झारखंड राज्य खनिज विकास निगम को झारखंड के प्रादेशिक अधिकारिता के अंतर्गत आने वाले अब बन्द हो चुकी इकाई के मामलों का मात्र प्रबन्ध करने हेतु सौंपा गया है एवं, इस प्रकार, याचीगण समानता का दावा करने के लिए कोई शिकायत नहीं कर सकता है। अन्यथा भी, सुस्थापित विधि के अनुसार, वेतनमान में समानता का दावा विभिन्न कारकों पर आश्रित है एवं यह मुद्दा अब अनिर्णीत विषय नहीं है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **हरियाणा राज्य बनाम चरणजीत सिंह** के मामले में, जैसा कि **(2006)9 एस॰ सी॰ सी॰ पृष्ठ-321** पर रिपोर्ट किया गया है, अभिनिर्धारित किया है कि 'समान कार्य हेतु समान वेतन' के सिद्धांत संविदात्मक आधार पर या दैनिक मजदूरी आधार पर नियुक्त व्यक्तियों को प्रयोज्य नहीं है एवं यह उनलोगों की सेवा की नियम एवं शर्तें होंगी, जो लागू होगा।

12. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एक सदृश मामले में, जैसा कि **(1989)4 एस॰ सी॰ सी॰ पृष्ठ-459 (हरबंश लाल बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य)** में रिपोर्ट किया गया है, यह अभिनिर्धारित किया है कि दैनिक दर पर कार्यरत कर्मकार, जो उस मामले में न्यायालय के समक्ष थे, यथा विहित ऐसे कर्मकारों को ग्राह्य न्यूनतम मजदूरी का भुगतान किए जाने के हकदार थे न कि नियमित सेवा में समान कर्मचारियों को लागू वेतनमान में न्यूनतम मजदूरी का भुगतान किए जाने के हकदार थे। यह सुस्थापित है कि वेतनमान एक निश्चित पद से जुड़ा होता है न कि एक दैनिक वेतनभोगी होने की दशा में जिसमें वह कोई पद धारण नहीं करता है। स्वीकार्यतः, याचीगण दैनिक मजदूरी के आधार पर कार्यरत है एवं, इस प्रकार, उनलोगों का समान वेतन एवं भत्ते के लिए निगम के नियमित एवं स्थायी कर्मचारी के साथ समानता एवं तुलना भ्रामक एवं अनवधार्य है। यह, अन्यथा भी, कर्त्तव्यों की प्रकृति, रोजगार की प्रकृति, नियोजन की प्रकृति पर निर्भर है एवं, इस प्रकार, यह अभिनिर्धारित करना संभव नहीं है कि 'समान कार्य हेतु समान वेतन' का सिद्धांत एक विमूर्त्त सिद्धांत है। वास्तव में, यह शैक्षणिक योग्यता पर भी निर्भर है परन्तु सर्वोपरि, स्वयं एक पूर्व-शर्त की कमी है जबतक कि उनलोगों को झारखंड राज्य खनिज विकास निगम के कर्मचारी होने के लिए आमेलित या घोषित न किया गया हो। तबतक वेतनमान में समानता हेतु दावा या प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है एवं हो सकता है एवं, इस प्रकार, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है। अभिलेख पर यह दर्शाने हेतु कोई भी सामग्री नहीं है कि उनलोगों के कर्त्तव्य एवं कार्य सदृश है। यह सुझाव देने के लिए भी अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं है कि वे लोग झारखंड राज्य खनिज विकास निगम के कर्मचारी नहीं है न ही आमेलन या नियमितीकरण हेतु कोई प्रार्थना नहीं है। यह सुझाव देने के लिए अभिलेख पर कोई भी सामग्री नहीं है कि उनलोगों को कभी भी झारखंड राज्य खनिज विकास निगम द्वारा भुगतान किया गया था बल्कि यह एक स्वीकृत मामला है कि उनलोगों ने दैनिक दर के आधार पर कार्य करना जारी रखा एवं प्रत्यर्थी

झारखंड राज्य खनिज विकास निगम, प्रश्नगत खानों का एकमात्र अभिरक्षक है। सर्वोपरि, मुझे सूचित किया गया है एवं जिस तथ्य को प्रत्याख्यान नहीं किया गया है कि कोडरमा अबरख इकाई पहले ही बंद हो चुका है एवं दैनिक दर पर कार्यरत कर्मचारी भी, जो अबरख इकाई के माध्यम से कार्यरत थे, को भारी परेशानी एवं कठिनाई से भुगतान किया जा रहा है।

13. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **(2006)9 एस॰ सी॰ सी॰ पृष्ठ 337** में एक रिपोर्ट किए गए **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम पुट्टी लाल** के मामले में, पैरा-5 पर निम्नलिखित रूप से अभिनिर्धारित किया है:–

> ''5. कई मामलों में, इस न्यायालय ने समान कार्य के लिए समान वेतन का सिद्धांत लागू करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि कोई दैनिक वेतनभोगी कर्मचारी, जो उनलोगों के समान कर्त्तव्यों का निर्वहन कर रहा है जो सरकार के नियमित स्थापना में है, उसे कम से कम न्यूनतम वेतनमान प्राप्त करने का हकदार होना चाहिए यद्यपि वह किसी वेतन वृद्धि या कोई अन्य भत्ता, जो सरकार में उसके सहकर्मियों को अनुमान्य है, का हकदार नहीं हो सकता है। हमारी राय में यह उचित विधिक स्थिति होगी एवं इसलिए, हमलोग यह निर्देश देते हैं कि ये सभी दैनिक वेतनभोगी उस न्यूनतम वेतनमान की निकासी करने के हकदार होंगे जो सरकार में उनके सहकर्मियों द्वारा प्राप्त किया जा रहा है एवं वे लोग कोई अन्य भत्ते अथवा वेतनवृद्धि के हकदार नहीं होंगे जबतक कि वे लोग दैनिक वेतनभोगी रहते हैं। उनलोगों के नियमित आमेलन के प्रश्न पर स्पष्ट रूप से पहले निर्दिष्ट किए गए संविधिक नियमों के अनुरूप विचार किया जाएगा।

14. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **2007(8) एस॰ सी॰ सी॰ पृष्ठ 279** में **एस॰ सी॰ चंद्रा बनाम झारखंड राज्य** के शीर्षक में पैरा 37 में निम्न रूप से अभिनिर्धारित किया है:–

> ''इसी प्रकार से, हरियाणा राज्य बनाम हरियाणा सिविल सेक्रेटेरियट स्टॉफ एसोसिऐशन में, समान कार्य हेतु समान वेतन के सिद्धांत पर काफी विस्तार से विचार किया गया था। उक्त निर्णय के पैरा 9 एवं 10 पर, सर्वोच्च न्यायालय ने सम्प्रेक्षित किया कि पदों की समानता एवं वेतन एक जटिल विषय है जिसे एक विशेषज्ञ निकाय के लिए छोड़ देना चाहिए। न्यायालयों को यह समझना चाहिए कि यह कार्य एक कठिन तथा समय साध्य कार्य है जिसे वांछित विशेषज्ञता वाले कर्मचारी की सहायता रखने वाले विशेषज्ञों ने भी इसे ग्रहण करने में कठिनाई पायी है। वेतन का नियतीकरण एवं समानता का अवधारण एक जटिल विषय है जिसका निर्वहन करना इसके कार्यपालकों पर है। न्यायालय द्वारा वेतन समानता की मंजूरी का परिणाम क्रमिक प्रभाव एवं प्रतिक्रिया में हो सकता है जिसका प्रतिकूल परिणाम हो सकता है देखें, भारत संघ बनाम प्रदीप कुमार डे॰।''

यह एक सुस्थापित विधि है कि जबतक कि एक नियोक्ता एक कर्मचारी का सम्बन्ध न हो तबतक निगम पर नियोजन में समानता अथवा वेतनमान या वेतन में समानता का बोझ नहीं लादा जा सकता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस अभिनिर्धारण की सीमा का अवलोकन किया है कि यदि कर्मचारियों के दो समूह एक ही कार्य कर रहे हैं तब भी उनलोगों को भिन्न-भिन्न वेतनमान दिया जा सकता है यदि शैक्षणिक योग्यतायें भिन्न-भिन्न हैं, कार्य की प्रकृति भिन्न है, दायित्व भिन्न-भिन्न हैं, भर्त्ती की विधि एवं अनुभव भिन्न-भिन्न है। यहाँ एक सम्पूर्ण एकरूपता होनी है। वर्तमान मामले में, याचीगण ने न तो कोई पद ही धारण किया है और न ही वे निगम के कर्मचारी हैं।

15. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, वेतनमान में समानता हेतु याचीगण का दावा अनवधार्य है क्योंकि यहाँ नियोक्ता एवं कर्मचारी का कोई सम्बन्ध नहीं है, उन लोगों को नियमित किया जाना शेष है एवं वे लोग दैनिक दर से मजदूरी पर कार्यरत हैं। उनलोगों की नियुक्ति प्रक्रिया भिन्न थी, उनलोगों को कभी भी प्रत्यर्थी निगम द्वारा नियुक्त नहीं किया गया था, न ही माननीय सर्वोच्च न्यायालय और न ही माननीय उच्च न्यायालय ने इस सम्बन्ध में कोई निर्देश ही निर्गत किया था।

16. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, इस रिट याचिका किसी गुणावगुण से रहित होने के कारण यह एतद् द्वारा खारिज किया जाता है परन्तु व्ययों के सम्बन्ध में किसी आदेश के बिना।

ekuuh; ,eñ okbñ bdcky] U;k;efr!

सुन्दरी मरांडी एवं अन्य

बनाम

महारानी हेम्ब्रम

ए॰ एफ॰ ए॰ डी॰ सं॰ 50 वर्ष 1991 (P). 20 नवम्बर, 2008 को विनिश्चित।

अभिधान अपील सं॰ 25/86/189 में तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, दुमका द्वारा पारित दिनांक 27.8.1990 एवं 17.11.1990 के निर्णय एवं डिक्री के विरूद्ध।

जनजातीय परम्परागत विधि–दत्तक-ग्रहण–अपीलार्थीगण साक्ष्य द्वारा सिद्ध करने में विफल रहे कि गाँव में आदान-प्रदान का कभी कोई समारोह आयोजित हुआ था–अभिनिर्धारित किया गया, अपीलार्थीगण दत्तक-ग्रहण को सिद्ध करने से बुरी तरह निष्फल रहे हैं–अपील खारिज। (पैरा 5)

अधिवक्तागण.–M/s Rajiv Sharma, Rita Kumari, For the Appellants.

एम॰ वाई॰ इकबाल, न्यायमूर्ति.–प्रतिवादीगण अपीलार्थीगण हैं और यह अपील निर्णय उलटने के विरूद्ध है। विधि के निम्नांकित तात्विक प्रश्न पर इस अपील को सुनवाई के लिए ग्रहण किया गया है:–

> "क्या दत्तक ग्रहण के बिन्दु पर अपीलीय अधीनस्थ न्यायालय का निष्कर्ष विधि के अनुरूप में है?''

2. वादी ने अभिधान वाद संख्या 30/83 इस घोषणा के लिए दाखिल किया कि प्रथम प्रतिवादी का दत्तक ग्रहण कभी नहीं हुआ था और दत्तक ग्रहण का विलेख अप्रभावी दस्तावेज है और यह रद्द किए जाने का दायी है। वादी का मामला था कि वह और प्रतिवादीगण एक ही गांव के निवासी हैं और मरांडी जाति के हैं। लखन मरांडी का एक पुत्र भाटू मरांडी था, जिनके दो पुत्रियाँ मुखी मरांडी एवं सुन्दरी मरांडी थी। मुखी मरांडी का विवाह घरजमाई रूप से गोपाल हेम्ब्रम से हुआ था। उनकी पुत्री महारानी हेम्ब्रम का भी विवाह घरजमाई रूप में सीतल टुड्डू के साथ हुआ था। महारानी हेम्ब्रम इस मामले में वादी है। दूसरी पुत्री, सुन्दरी मरांडी का विवाह घरजमाई रूप में नहीं हुआ था। वादी का आगे का मामला यह था कि भाटू मरांडी की मृत्यु के बाद, उसकी दोनों पुत्रियों ने भू-संपत्ति विरासत में प्राप्त की और वाद भूमि पर उनका कब्जा हुआ। वादी को अवैधानिक दत्तक ग्रहण के बारे में अभिकथित रूप से मालूम हुआ, जिसके द्वारा प्रतिवादीगण-द्वितीय समूह ने 8.3.1983 को प्रतिवादी-प्रथम समूह को अपनाया था। वादी का मामला है कि कोई दत्तक ग्रहण नहीं हुआ था, कोई धार्मिक संस्कार नहीं किया गया था और आदान-प्रदान का कोई अनुष्ठान संपन्न नहीं किया गया था। यह भी अभिकथित किया गया कि वाद सम्पत्ति पर दावा करने के लिए दत्तक ग्रहण का एक जाली दस्तावेज तैयार किया गया था। प्रतिवादीगण, अन्य के साथ-साथ, कहा कि सुन्दरी मरांडी का विवाह ''घरजमाई'' रूप में हुआ था, यद्यपि उसे कोई संतान प्राप्त नहीं हुई थी फिर भी उसे एक दत्तक पुत्र था। प्रतिवादीगण का आगे मामला यह है कि संथाल परम्परा के अनुसार ग्राम प्रधान और अन्य ग्रामीणों की उपस्थिति में जनवरी, 1983 में दत्तक-ग्रहण हुआ था। विचारण न्यायालय ने दत्तक ग्रहण के संबंध में वादी के मामले पर अविश्वास करते हुए और प्रतिवादीगण के मामले को स्वीकार करते हुए वाद को खारिज कर दिया। उक्त निर्णय एवं डिक्री से व्यथित होकर वादी-प्रत्यर्थी ने जिला न्यायाधीश, दुमका के समक्ष अपील दाखिल की जो अभिधान अपील संख्या 25/86 थी। अपीलीय न्यायालय, साक्ष्य के पुनर्मूल्यांकन के उपरान्त, इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि प्रतिवादीगण द्वारा यथा अभिकथित दत्तक-ग्रहण कभी नहीं हुआ था और यह कि प्रतिवादीगण अपीलार्थीगण अपने इस मामले को सिद्ध करने में विफल रहें कि प्रतिवादी-प्रथम समूह को दत्तक ग्रहण में दिया गया था।

3. मैंने अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता, श्री राजीव शर्मा को सुना है। प्रत्यर्थी की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ है।

4. अपीलीय न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करके निम्नांकित निष्कर्षों को अभिलिखित किया:

21. परम्परा में गाँव-दर-गाँव और परिवार-दर-परिवार में भिन्नता होती है। प्रश्न यह है कि क्या प्रत्यर्थी के गाँव या उनके परिवार में दत्तक-ग्रहण की परम्परा प्रचलित है। उत्तरों का पता लगाने के लिए हमें अधीनस्थ न्यायालय में उनके और उनके गवाहों द्वारा दिए गए साक्ष्य का अवलोकन करना होगा। सुन्दरी मरांडी एवं धनेश्वर टुड्डू (जिन्हें रामेश्वर टुड्डू (अपरीक्षित) को दत्तक ग्रहण करने वाला बताया गया है। और उनका पुत्र क्रमश: DW-9 एवं 8 के तौर पर उपस्थित हुए हैं। DW-9 सुन्दरी मरांडी ने कहा है कि उसने और उसके पति धनेश्वर ने दत्तक-ग्रहण किया था। उसके पति अ० सा० 8 ने अपने साक्ष्य के अन्तिम पैरा में कहा है कि उसके गाँव में कोई दत्तक ग्रहण नहीं हुआ था, न ही उसने किसी का दतक ग्रहण होते देखा था। DW-1 ने अपने साक्ष्य के पैरा 3 में कहा है कि गाँव में उसकी उपस्थिति में कोई दत्तक ग्रहण नहीं हुआ था। गाँव के प्रधान, DW-3 प्रति-परीक्षा की प्रारंम्भिक पंक्ति में कहा है कि उसके गाँव में कोई दत्तक ग्रहण नहीं हुआ था। DW-5 ने कहा है कि उनके जाति में दत्तक ग्रहण करने की एक परम्परा है। परन्तु DW-6 ने कहा है कि इस दत्तक-ग्रहण के पहले गांव में कोई दत्तक-ग्रहण नहीं हुआ था और DW-5 उसका संबंधी हैं। DW-7 ने यह भी कहा है कि उसके गाँव में इसके पहले कोई दत्तक ग्रहण नहीं हुआ था।

(22) इस प्रकार, हम अधीनस्थ न्यायालय में बचाव-पक्ष के गवाहों के साक्ष्यानुसार पाते हैं कि गाँव में कोई दत्तक-ग्रहण नहीं हुआ था और यह गाँव में पहला दत्तक-ग्रहण है।

(23) दत्तक-ग्रहण के अनुष्ठानों के बारे में, हम पाते हैं कि DW-3 ग्राम-प्रधान हैं जिसने अपनी प्रति-परीक्षा में इसके बारे में कहा है। उसके अनुसार ''निमदामारी'' की औपचारिकताएं सम्पन्न की जाती है जिसमें आदान-प्रदान समारोह के एक दिन पहले नायकी को तेल लगता है। पैरा 3 में उसने कहा है कि छठीयारी (पोषपुत्रा का छठा दिन) के उपरांत दत्तक-ग्रहण का दस्तावेज तैयार किया जाता है जिसपर टोला के plefile द्वारा और नायकी द्वारा हस्ताक्षर होता है, ''निमदामारी'' उत्सव के साथ भोज का आयोजन होता है और मुण्डन समारोह आयोजित किया जाता है। रामेशवर किस्कू का मुण्डन समारोह शुक्रवार को आयोजित किया गया था। उसी दिन भोज दिया गया था। इस आलोक में हम प्रतिवादीगण के अन्य गवाहों के साक्ष्य का मूल्यांकन करते है। DW-1 पैरा 2 के अनुसार दत्तक-ग्रहण विलेख 7.1.83 को लिखा गया था, दत्तक-ग्रहण 8.1.83 को दुमका में हुआ था और उसने 8.1.83 को दस्तावेज पर हस्ताक्षर किया था, परन्तु निमदामारी दुमका में आयोजित नहीं हुआ था और सभी गाँव वाले दुमका आए थे। पैरा 3 में उसने कहा है कि निमदामारी गाँव में आयोजित हुआ था और दत्तक-ग्रहण दस्तावेज के निबंधन के 10-12 दिनों के बाद भोज दिया गया था। परन्तु DW-3 के अनुसार वास्तविक दत्तक-ग्रहण के तीन महीनों के बाद दत्तक-ग्रहण विलेख को तैयार किया गया था और पंजीकृत किया गया था। (DW-3 के पैरा 3 के माध्यम से)। DW-4 के अनुसार दत्तक-ग्रहण 7 जनवरी, शुक्रवार को हुआ था और अंदाल हेमब्रम नायकी थी, दत्तक-ग्रहण विलेख का पंजीकरण मंगलवार को दुमका में 8.3.83 को किया गया था। DW-5 के अनुसार दत्तक ग्रहण 7 जनवरी, शुक्रवार के दिन किया गया था। निमदामारी के अगले दिन भोज आयोजित किया गया था और दत्तक-ग्रहण के दस्तावेज को ग्रामीणों द्वारा रखा गया था। उसके अनुसार दत्तक-ग्रहण के लिए गाँव में पूजा दो स्थानों, अर्थात जाहर स्थान एवं मांझी स्थान में की जाती है। सुन्दरी पूजा के लिए नहीं गई थी बल्कि वह वहाँ गई थी। उसने गाँव की नैकी होने का दावा किया था। परन्तु DW-4 द्वारा उसे खण्डित किया गया है जिसने कहा है कि अन्दाल हेमब्रम घर की नैकी है। DW-6 के अनुसार, निमदामारी धर के महीने में आयोजित हुआ। DW-6 के अनुसार निमदामारी

अगहन के महीने में हुआ, परन्तु DW-8 के अनुसार यह पूस का महीना था। DW-7 के अनुसार पंजीकरण अर्थात, 7 जनवरी, 1983 के तीन महीने पहले दत्तक-ग्रहण हुआ परन्तु वह इनके हिन्दी के महीने नहीं बता सकता। उसके अनुसार निमदामारी शुक्रवार को 10 बजे में फिर संध्याकाल में हुआ था और फिर अगले दिन हुआ था। उसने निमदामादी के सभी समारोहों में भाग लिया था। वह जाहर स्थान पर पूजा के बारे में नहीं जानता परन्तु वह मांझी स्थान की पूजा के बारे में जानता है जिसमें रामेश्वर और सुन्दरी ने भाग लिया था, उसे इस बिन्दु पर भी DW-5 द्वारा खण्डित किया गया है क्योंकि DW-5 ने कहा है कि पूजा दोनो स्थानों, अर्थात् जाहर स्थान और मांझी स्थान पर हुई थी और सुन्दरी दोनों में से किसी स्थान पर नहीं गई थी, बल्कि उसने इन पूजाओं में भाग लिया था। उसके अनुसार, रामेश्वर किस्कू ने भी भाग नहीं लिया था।

5. साक्ष्य के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि ग्राम-प्रधान को DW-3 के तौर पर परीक्षित किया गया था, जिसने कहा है कि वर्तमान दतक-ग्रहण के पहले, उसके गाँव में कोई दतक-ग्रहण नहीं हुआ था। बचाव पक्ष के अन्य गवाहों ने भी परिसाक्ष्य दिया है कि गाँव में ऐसा कोई दतक-ग्रहण नहीं हुआ था। इस प्रकार प्रतिवादीगण यह सिद्ध करने में बुरी तरह असफल रहे हैं कि दतक-ग्रहण वैध और वैधानिक रूप से हुआ था और प्रतिवादीगण द्वितीय समूह द्वारा प्रतिवादी-प्रथम का दतक-ग्रहण किया गया था। मैं अपीलीय न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों में कोई अनुचितता या अवैधानिकता नहीं पाता हूँ। उक्त निष्कर्ष को इस न्यायालय के किसी हस्तक्षेप की कोई अवश्यकता नहीं है।

6. पूर्वोक्त कारण से, मैं इस अपील में कोई गुण नहीं पाता हूँ, जो, तद्नुसार खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr!

रामबिलास दूबे

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू० पी० (एस०) सं० 185 वर्ष 2005. 20 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

सेवा विधि-पेंशन की कटौती-उसकी सेवा पुस्तिका में अभिलिखित याची के जन्म-तिथि को प्राधिकारी द्वारा विवादित किया गया-सुनवाई का अवसर प्रदान किए बगैर उसके पेंशन से पेंशन की राशि कटौती की गई-जिस आदेश के अधीन 16,136/- रुपए की वसूली अपास्त किया गया। (पैरा 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.-Mr. Atanu Banerjee, For the Petitioner; Mr. P Modi, For the Respondents; Mr. S. Srivastava, For the Accountant General.

आदेश

याची की नियुक्ति 11.1.1960 को सहायक के तौर पर की गई थी और याची के मामले के अनुसार, सेवा-पुस्तिका में याची की जन्म-तिथि 20.5.1939 के तौर पर अभिलिखित की गई थी और कार्य कुशलता से अपने दायित्व का निर्वहन करने के उपरांत, याची 31.5.1997 को 58 वर्षों की अधिवर्षिता की आयु प्राप्त करने पर, पाईप फिटर, कोटि-II, यांत्रिक उप-प्रमंडल कार्यशाला, तेनुघाट के पद से सेवानिवृत्त हुआ। परन्तु जब पेंशन एवं उपदान के भुगतान से संबंधित मामला अन्तिम रूप प्राप्त किया था, तो इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में, याची को यह मालूम हो सका कि अधिवर्षिता की तिथि 31.5.1997 के स्थान पर 31.5.1992 मानी जा रही है। तद्नुसार, याची को कार्यपालक अभियंता द्वारा उप-कोषागार पदाधिकारी, तेनुघाट को निर्गत पत्र संख्या 83 दिनांक 18.2.2003 की एक प्रति प्राप्त हुई जिसमें याची के पेंशन लाभ से 16,136/- रुपए की वसूली करना

इप्सित किया गया था और, वस्तुतः, वह पहले ही वसूली किया जा चुका है जो कार्रवाई, याची के अनुसार, कभी भी न्यायोचित नहीं है क्योंकि सेवानिवृत्ति की तिथि को बदलकर 31.5.1997 से 31.5.1992 करने से पहले अपना पक्ष रखने के लिए, याची को कभी कोई नोटिस निर्गत नहीं की गई थी और उससे भी बढ़कर, प्रत्यर्थीगण याची की सेवानिवृत्ति के पाँच वर्ष उपरांत याची की पेंशन राशि से उसके द्वारा उससे अधिक राशि की वसूली करना **[2004 (1) जे॰ सी॰ आर॰ 324]** में रिपोर्ट किया गया **नारायण सिंह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य** के मामले को सम्मिलित करते हुए इस संबंध में कई मामलों में न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि की दृष्टि में अनुमान्य नहीं है।

2. यद्यपि, प्रत्यर्थीगण का मामला जैसा कि प्रति शपथपत्र में रखा गया है कि जब पेंशन कागजात पेंशन और उपदान के अन्तिम नियतीकरण के लिए महालेखाकार, बिहार, पटना को अग्रसारित किया गया था, तो महालेखाकार द्वारा यह पाया गया था कि सेवा पुस्तिका के पृष्ठ 1 पर यह जन्म तिथि 28.5.1939 को अभिलिखित की गई है जिसके ऊपर कुछ लिप्त-लेखन की गई है जबकि सेवा-पुस्तिका में संलग्न अवकाश खाता विवरण जन्म-तिथि को 20.5.1934 के तौर पर दर्शाता है और, इसलिए, महालेखाकार ने आवश्यक सत्यापन एवं शुद्धिकरण के लिए याची की सेवा-पुस्तिका को वापस कर दिया एवं तदुपरि प्रत्यर्थी संख्या 5, कार्यपालक अभियंता, यांत्रिक प्रभाग बनासो, हजारीबाग द्वारा याची को जन्म-तिथि प्रमाण-पत्र उपलब्ध कराने की मांग की गई परन्तु याची ऐसा करने में विफल रहा और तब कार्यपालक अभियंता, यांत्रिक प्रभाग, बिरपुर से भी याची की जन्म-तिथि दर्शाने वाली दस्तावेज उपलब्ध कराने का आग्रह किया गया परन्तु जब कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ, तो उप-सचिव, जल संसाधन विभाग, झारखण्ड सरकार, प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने अपने पत्र (परिशिष्ट-C) के माध्यम से कार्यपालक अभियंता, यांत्रिक प्रभाग, बनासो, हजारीबाग को याची की जन्म-तिथि 20.5.1934 दर्शाने वाले पेंशन-पेपर को अग्रसारित करने का निर्देश दिया। तद्नुसार, प्रत्यर्थी संख्या 5 ने महालेखाकार को याची की जन्म-तिथि 20.5.1934 मानते हुए उसकी अन्तिम पेंशन एवं उपदान को नियत करने का आग्रह किया और उसी समय अवकाश वेतन के तौर पर याची को भुगतान की गई 16,136/- रुपए की अतिरेक राशि की वसूली करने के लिए प्रत्यर्थी संख्या 5 ने उप-कोषागार पदाधिकारी, तेनुघाट को एक पत्र (परिशिष्ट-5) लिखा।

3. इन पृष्ठभूमियों पर राज्य की ओर से और महालेखाकार की ओर से भी यह निवेदन किया गया कि जब जन्म-तिथि के संबंध में कुछ उलट-फेर किया गया है, जो सेवा-पुस्तिका में की गई लिप्तलेखन से स्पष्ट है, तो पेंशन नियमावली के कतिपय प्रावधानों के अधीन प्राधिकारी उक्त राशि को वसूल करने में बिल्कुल सक्षम है जिसकी अतिरेक रूप से निकासी की गई है। अपने निवेदन के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने **झारखण्ड राज्य एवं अन्य बनाम श्रीमती गिरीश कुमारी प्रसाद एवं अन्य (एल॰ पी॰ ए॰ संख्या 256 वर्ष 2008)** के मामले में दिए गए निर्णय एवं **राम चन्द्र सिंह एवं अन्य बनाम झारखण्ड राज्य एवं अन्य [2005(2) जे॰ एल॰ जे॰ आर॰ 705]** के एक मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया।

4. पक्षों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता की सुनवाई करके, यह प्रतीत होता है कि याची की जन्म-तिथि 20.5.1939 मानते हुए 58 वर्ष की अधिवर्षिता की आयु प्राप्त करने पर याची को 20.5.1997 को सेवानिवृत्त होना अनुज्ञात किया गया था परन्तु अवकाश खाता विवरणी में 20.5.1934 के तौर पर अभिलिखित जन्म-तिथि से मेल नहीं खाने वाली सेवा-पुस्तिका में अभिलिखित जन्म-तिथि 20.5.1939 को लेकर लिप्तलेखन द्वारा संदिग्ध रूप से छेड़-छाड़ करने की विसंगति के बारे में बाद में महालेखाकार कार्यालय से निर्दिष्ट किए जाने पर मामले को अपनी बात कहने का कोई अवसर याची को दिए बगैर 20.5.1939 के तौर पर अभिलिखित जन्म-तिथि को अशुद्ध जन्म-तिथि मान लिया गया था, यद्यपि, प्रति शपथपत्र के अनुसार, याची को पत्र देकर इस संबंध में स्पष्टीकरण देने के लिए कहा गया था परन्तु ऐसा कोई सबूत नहीं है कि ऐसा कोई पत्र याची द्वारा कभी प्राप्त किया

गया था। इसके अतिरिक्त, यह भी प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी संख्या 5 ने भी जन्म–तिथि के संबंध में जाँच–पड़ताल करने के लिए जिला शिक्षा अधीक्षक, मुज्फ्फरपुर को एक पत्र लिखा परन्तु प्रत्यर्थी संख्या 5 ने कोई सकारात्मक उत्तर प्राप्त किये बगैर यह निर्णय ले लिया कि याची की जन्म–तिथि 20.5.1939 के स्थान पर 20.5.1934 है। इस संबंध में, इसे भी नोट किया जा सकता है कि याची ने जन्म तिथि को 20.5.1939 के तौर पर दर्शाने वाले स्थानांतरण प्रमाण–पत्र को रिट आवेदन के परिशिष्ट–6 के तौर पर अनुलग्न किया है।

5. इस प्रकार, यह प्रकटत: स्पष्ट है कि मामले में अपनी बात कहने का अवसर याची को प्रदान किए बगैर 20.5.1934 के तौर पर जन्म–तिथि के संबंध में निर्णय लिया गया है और तद्नुसार परिणामिक आदेश पारित किया गया था।

6. इन परिस्थितियों के अधीन, याची की जन्म–तिथि के संबंध में इसे 20.5.1934 होने का प्रत्यर्थी द्वारा पारित आदेश और पश्चातवर्ती आदेश, जिसके अधीन 16,136/- रुपए की राशि की वसूली करना परिशिष्ट–5 के अधीन इप्सित किया गया था, मात्र इस कारण से अपास्त किया जाता है कि ऐसे आदेश को पारित करने से पहले, याची को मामले में सुनवाई करने का कोई अवसर नहीं दिया गया था।

7. ऐसी परिस्थिति के अधीन, याची द्वारा अभिकथित रूप से अतिरेक के तौर पर निकासी की गई राशि को वसूलने में प्रत्यर्थी के प्राधिकारी के संबंध में प्रश्न को निर्णीत करना समीचीन नहीं समझता है।

8. इन परिस्थितियों के अधीन, याची को इस आदेश की एक प्रति और जन्म तिथि के संबंध में किसी अन्य दस्तावेज के साथ प्रत्यर्थी संख्या 5 के समक्ष एक अभ्यावेदन करने का निर्देश दिया जाता है, जो अभ्यावेदन की प्राप्ति की तिथि से तीन महीनों की अवधि के भीतर अभ्यावेदन पर एक निर्णय लेगा।

9. पूर्वोक्त निर्देश के साथ, इस रिट आवेदन का निस्तारण किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr!

इम्पलॉयर्स इन रिलेशन टू द मैनेजमेंट ऑफ रजरप्पा वाशरी ऑफ सेण्ट्रल कोल–फील्डस लिमिटेड

बनाम

पीठासीन पदाधिकारी, केन्द्रीय सरकार औद्योगिक अधिकरण सं॰ 1, धनबाद एवं एक अन्य

सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1619 वर्ष 2001. 20 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947—धारा 17B–पुनर्बहाली–औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के प्रावधान का लाभ पहले ही उन अन्य कर्मकारों को दिया जा चुका है जो उसी पंचाट के अन्य रिट आवेदन में पक्षकार है–नियोक्ता अन्य कर्मकारों को पिछले पारिश्रमिक से वंचित नहीं कर सकते। (पैरा 10)

निर्णयज विधि.–CWJC No. 1617 of 2001

अधिवक्तागण.–Mr. P.K. Prasad, For the Petitioner; Mrs. M.M. Pal, For the Respondent No.2.

आदेश

कर्मकारगण अर्थात्, जितेन महतो, गोबर्धन महतो, सुरेश राम दांगी, शास्त्री पासवान, हलदर महतो, बिलधर महतो, तिभू महतो, बालदेव महतो, पांचू महतो एवं विजय महतो की ओर से, औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के अधीन एक आवेदन दाखिल किया गया है जिसमें याची (सेन्ट्रल

कोल-फील्डस लिमिटेड, राँची के राजरप्पा वाशरी के प्रबंधन के संबंध में नियोक्तागण) के प्रत्यर्थीगण द्वारा उनके द्वारा आहरित अन्तिम पारिश्रमिक का अनुमान्य भत्ता के साथ उन्हें भुगतान करने का निर्देश देने की एक प्रार्थना की गई है।

2. निवेदनों की पृष्ठभूमि में, इस आवेदन को उद्‌भूत करने वाले तथ्यों को कथित करने की आवश्यकता है। कर्मकारगण जो आवेदक है, ने यहाँ इस आधार पर नियमितीकरण का दावा करके एक विवाद उठाया है कि उन्हें प्रबंधन द्वारा संयत्र सफाई कार्य में संलग्न किया गया है जबकि प्रबंधन का पक्ष था कि आवेदकों को कभी नियुक्त नहीं किया गया था और इसलिए नियोक्ता एवं कर्मचारी का कोई संबंध नहीं था और उस परिस्थिति के अधीन, निम्नांकित संदर्भ बिन्दुओं के साथ, संदर्भ केस संख्या 59 वर्ष 1992 के माध्यम से, केन्द्र सरकार, औद्योगिक अधिकरण संख्या 1 को संदर्भ किया गया था।

> ''क्या श्री जितेन महतो एवं नौ अन्यों की सेवाओं को नियमित नहीं करने में प्रबंधन की कार्रवाई न्यायोचित है? अगर नहीं, तो वे किस अनुतोष के अधिकारी हैं?

राम चन्द्र महतो, चन्द्रदेव महतो एवं जागेश्वर महतो के मामले में संदर्भ केस सं॰ 2 वर्ष 1994 के माध्यम से, एक अन्य इसी प्रकार का संदर्भ अधिकरण को किया गया था।

3. दोनों संदर्भ को अधिकरण द्वारा एक साथ लिया गया था जिसमें पक्षों ने अपने साक्ष्य प्रस्तुत किए। तदुपरि अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि सम्बद्ध व्यक्तियों को संयत्र सफाई कार्य में लगाया गया था जो कि एक निषिद्ध कोटि का कार्य है और इसलिए, प्रबंधन और सम्बद्ध व्यक्तियों के बीच नियोक्ता एवं कर्मचारी का संबध है और वे निश्चित रूप से नियमितीकरण के अधिकारी हैं और तद्‌नुसार, प्रबंधन (रिट आवेदन का याची) को कर्मकारगण की सेवाओं को नियमित करने का निर्देश देते हुए एक अधिनिर्णय किया गया था।

4. संदर्भ केस सं॰ 59 वर्ष 1992 में दिए गए पंचाट से व्यथित होकर प्रबंधन ने यह रिट आवेदन दाखिल किया, जो सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1619 वर्ष 2001 था और संदर्भ केस सं॰ 2 वर्ष 1994 में दिए गए पंचाट के विरूद्ध एक और रिट आवेदन दाखिल किया गया, जो सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1617 वर्ष 2001 था।

5. दोनों रिट आवेदनों को ग्रहण किया गया है और आक्षेपित पंचाट का इस न्यायालय द्वारा स्थगन कर दिया गया है।

6. यह भी प्रतीत होता है कि सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1617 वर्ष 2001 धारण करने वाले रिट आवेदन में 7.5.2003 को एक आदेश पारित किया गया था जिसके द्वारा औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के अधीन उस मामले में प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल एक आवेदन को अनुज्ञात किया गया था और प्रबंधन को कर्मकारों द्वारा प्राप्त किए गए अन्तिम पारिश्रमिक के समतुल्य पारिश्रमिक का उन्हें भुगतान करने का निर्देश दिया गया था और अब कुल दस कर्मकारों ने, जो इस रिट आवेदन में प्रत्यर्थीगण हैं, औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के अधीन एक आवेदन दाखिल किया है।

7. प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि संदर्भ के निबंधनों से यह स्पष्ट होगा कि कर्मकारगण की सेवाओं के नियमितीकरण के संबंध में संदर्भ किया गया था परन्तु, वस्तुत:, आवेदकों की सेवाएं 1.8.1991 के प्रभाव से समाप्त कर दी गई थी, जबकि सुलह के लिए मामला सहायक श्रम आयुक्त (केन्द्रीय), हजारीबाग के समक्ष लम्बित था और इसलिए सेवाओं के नियमितीकरण के संबंध में कर्मकार के पक्ष में दिए गए ऐसे पंचाट को पुनर्बहाली का एक पंचाट माना जाए और उस स्थिति में आवेदक (कर्मकार) औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के निबंधनों में लाभ के अधिकारी हैं।

8. यद्यपि, प्रबंधन की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यह सुस्थापित हो चुका है कि औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B का प्रावधान केवल तभी प्रयोज्य होता है जब पंचाट पुन:स्थापन से संबंधित होता है और वह पंचाट उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती के अधीन है। जहाँ तक इस मामले का संबंध है, संदर्भ के निबंधन और पंचाट के निबंधन भी इंगित करेंगे कि मामला कमी भी पुन:स्थापन से संबंधित नहीं था, बल्कि यह नियमितीकरण के संबंध में था और इसलिए, औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के अधीन दाखिल आवेदन पोषणीय नहीं है।

9. निस्संदेह यह सत्य है कि अधिकरण के समक्ष किया गया संदर्भ आवेदकों की सेवाओं के नियमितीकरण से संबंधित हैं परन्तु अधिकरण के समक्ष कर्मकारों की ओर से दाखिल लिखित अभिकथन में किया गया कथन दर्शाएगा कि प्रबंधन ने 1.8.1991 के प्रभाव से कर्मकारों से सेवाएँ लेना रोक दिया था, जबकि मामला सुलह के लिए सहायक श्रम आयुक्त (केन्द्रीय), हजारीबाग के समक्ष लम्बित था और कर्मकारों के पक्ष में पंचाट पारित करते हुए यह तथ्य अधिकरण द्वारा भी नोट किया गया था। परन्तु चूँकि अधिकरण को संदर्भ के निबंधनों से आगे जाना आपेक्षित नहीं था, इसलिए कर्मकारों की पुनर्बहाली के संबंध में ऐसा कोई पंचाट पारित नहीं किया गया था। परन्तु यह तथ्य रह जाता है कि कर्मकारगण (आवेदक) सेवा से बाहर रहे हैं और उस स्थिति में आवेदक औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B में यथा निहित प्रावधान के निबंधनों में निश्चित रूप से लाभ के अधिकारी है क्योंकि धारा 17B को संसद द्वारा वैसे कर्मकारों को अनुतोष प्रदान करने को दृष्टिगत रखते हुए अधिनियमित किया गया प्रतीत होता है जिन्हें ऐसी कार्यवाही के लम्बित रहने के दौरान एक श्रम न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण के एक पंचाट के अधीन पुनर्बहाल किए जाने का आदेश किया गया है जिसमें उक्त पंचाट उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती के अधीन है। प्रावधान के पीछे का उद्देश्य कतिपय सीमा तक पंचाट के कार्यान्वयन में विलम्ब के कारण कर्मकार को कारित कठिनाई को कम करना है। वर्तमान मामले में भी पंचाट के शीघ्र कार्यान्वयन की कोई संभावना नहीं है जिसे इस न्यायालय द्वारा स्थगित कर दिया गया है और जबतक पंचाट कार्यान्वित किया जाता है, आवेदक (कर्मकार) किसी प्रकार का भी भत्ता प्राप्त नहीं करेंगे, क्योंकि मामले को सुलह की प्रक्रिया के अधीन रहते प्रबंधन ने आवेदको से काम लेना बन्द कर दिया था और इसलिए, इस परिस्थिति के अधीन, यह आसानी से कहा जा सकता है कि पंचाट यद्यपि याची की सेवाओं के नियमितीकरण के संबंध में है, परन्तु वस्तुत:, यह पुनर्बहाली के प्रभाव को प्राप्त कर लिया है और इसलिए, याची औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के निबंधनों में लाभ प्राप्त करने का अधिकारी है, क्योंकि कर्मकार उनके बयानों के अनुसार नियोजन के अधीन नहीं है और न ही उनकी अवैधानिक बर्खास्तगी की तिथि, अर्थात्, 1.8.1991 से उन्होंने अपने को कहीं और लाभप्रद रूप से नियोजित किया है। इससे भी बढ़कर, औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के प्रावधानों का लाभ पहले ही उन कर्मकारों को दिया जा चुका है जो इस पंचाट से उद्भूत होने वाले एक अन्य रिट आवेदन सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1617 वर्ष 2001 में पक्षकार है, जो इस न्यायालय के समक्ष चुनौती के अधीन है और, इसलिए, कर्मकार उसी अनुतोष के अधिकारी है जो रिट आवेदन सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1617 वर्ष 2001 में पारित दिनांक 7.5.2003 के आदेश के अधीन अन्य कर्मकारों को दिया गया है।

10. इन परिस्थितियों में, याची को कर्मकारों, अर्थात्, जितेन महतो, गोवर्धन महतो, सुरेश राम दांगी, शास्त्री पासवान, हलदर महतो, बिलधर महतो, तिभू महतो, बलदेव महतो, पाचू महतो एवं विजय महतो को जुलाई 2004 से, अर्थात् औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के अधीन आवेदन दाखिल करने के उपरांत से अनुमान्य भतों के साथ उनके द्वारा प्राप्त किए गए अन्तिम पारिश्रमिक के समतुल्य पारिश्रमिक का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है। पारिश्रमिक के बकायों के भुगतान दो महीनों के भीतर और वर्तमान पारिश्रमिक का भुगतान प्रत्येक महीने की 15 तारीख तक किया जाएगा।

11. तद्नुसार, औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के अधीन इस रिट आवेदन का तद्नुसार निस्तारण किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ thñ vkjñ iVuk;d] U;k;efr

शैलेन्द्र सिंह

बनाम

भारत संघ एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 1248 वर्ष 2005. 12 नवम्बर, 2008 को विनिश्चित।

अशक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार का संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995—धाराएँ 33 एवं 47 सह-पठित BSF में (पदस्थापन एवं प्रतिनियुक्ति) की अवधि नियमावली, 2000—नियम 11, परन्तुक (ii) & (iii)—बर्खास्तगी–यह आधार है कि याची 100% विकलांग हो चुका है और BSF की सेवा करने के लिए अयोग्य हो चुका है–यद्यपि, अशक्तता पेंशन अनुज्ञात किया गया और उसकी अशक्तता के लिए पूँजीकृत मूल्य के तौर पर 10,85,508/- रुपए और 5,000/- रुपए की अनुग्रह राशि का भुगतान किया गया–अभिनिर्धारित किया गया, प्रत्यर्थीगण ऐसे कार्मिक की सेवा बनाए रखने के लिए किसी बाध्यता के अधीन नहीं है जो 40% से अधिक अशक्तता से ग्रस्त हो चुका है–याची अशक्तता अधिनियम के प्रावधानों का कोई लाभ नहीं ले सकता। (पैरा 7 एवं 10 से 12)

अधिवक्तागण.–Mr. S.N. Prasad, For the Petitioner; Mr. Faizur Rahman, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–याची को वर्ष 1987 के दौरान BSF के अधीन एक कॉन्स्टेबल के तौर पर भर्ती किया गया था। उग्रवादी कार्रवाई के दौरान जब वह जम्मू एवं कश्मीर में तैनात था तो उसे 10.9.1992 को उपहति आई। सम्यक् रूप से गठित एक चिकित्सा बोर्ड ने उसे 11.6.1999 को इस आधार पर अयोग्य घोषित कर दिया कि वह 100% विकलांग हो चुका था। परिणामत: उसे BSF अधिनियम, 1969 के नियम 25F के प्रावधानों के अधीन 10.11.1999 को शारीरिक अपंगता के कारण सभी लाभों के साथ सेवानिवृत्त कर दिया, सिवाय पेंशन के क्योंकि उसने अभिकथित रूप से पेंशन कागजात पर हस्ताक्षर करने से इन्कार कर दिया था।

उसकी सेवानिवृत्ति के आदेश के विरूद्ध, याची ने सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3058 वर्ष 2000 में पटना उच्च न्यायालय का आश्रम लिया उक्त रिट याचिका निस्तारण करते समय उच्च न्यायालय ने अशक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण एवं पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 (इसमें इसके पश्चात अशक्तता अधिनियम) के प्रावधानों के अनुसार एक यथोचित निर्णय लेने के लिए याची के मामले को प्रत्यर्थीगण को प्रेषित कर दिया। आदेश के अनुसरण में और पुनर्विचारण पर उसकी सेवानिवृत्ति के आदेश को वापस ले लिया गया और पूर्वोक्त अशक्तता अधिनियम, 1995 के प्रावधानों के अधीन 21.5.2002 को उसे सेवा में पुनर्बहाल कर दिया गया। परिणामस्परूप, प्रत्यर्थी संख्या 3 के हस्ताक्षराधीन निर्गत दिनांक 24.1.2005 के आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट-9) द्वारा याची की सेवाओं को दोबारा शारीरिक अशक्तता के आधार पर 31.1.2005 को समाप्त कर दिया गया। आक्षेपित आदेश निर्गत होने के पहले, विकलांग व्यक्तियों पर प्रयोज्य नियमावली के अधीन याची को एकमुश्त प्रतिकर का भुगतान करने के लिए प्रत्यर्थीगण एक निर्देश के लिए उसने इस न्यायालय का आश्रय लिया था। प्रत्यर्थीगण को उसके अभ्यावेदन पर विचार करने और उसे उसके वैधानिक बकायों का भुगतान करने का एक निर्देश प्रत्यर्थीगण को देते हुए 15.9.2004 को इस न्यायालय द्वारा डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 4562 वर्ष 2004 के माध्यम से रिट याचिका को निस्तारित किया गया। याची ने दिनांक 15.10.2004 को अपना अभ्यावेदन दाखिल किया। एक महीने के उपरांत, उसे चिकित्सा बोर्ड के समक्ष पेश किया गया और उसे 100% अशक्त एवं विकलांग घोषित किया गया और इसके अनुसरण में, उसकी सेवाएं समाप्त कर दी गईं।

2. याची की व्यथा यह है कि उसकी सेवा-निवृत्ति के उपरांत उच्च न्यायालय के पूर्व के आदेश के अनुसरण में और तत्पश्चात प्रतिकर की एकमुश्त राशि का दावा करते हुए उसके द्वारा एक अन्य रिट आवेदन दाखिल करने पर प्रत्यर्थीगण ने उसके विरूद्ध एक विद्वेष पाल लिया था और आशयित रूप से एक नए चिकित्सा बोर्ड का गठन किया था और उसे चिकित्सा बोर्ड के समक्ष पेश किया गया था यह अच्छी तरह जानते हुए कि पूर्व के अवसर पर बोर्ड ने उसे परीक्षित किया था और 100% विकलांग घोषित किया था। प्रत्यर्थीगण की ओर से ऐसी कार्रवाई जान बूझकर की गई थी और याची की सेवाओं को समाप्त करने का केवल एक आधार तैयार करने के प्रयोजन के लिए था।

3. याची ने अशक्तता अधिनियम, 1995 की धारा 47 के प्रावधानों पर अनन्य रूप से भरोसा करके उसकी सेवा-समाप्ति के आदेश को चुनौती दी है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता, श्री एस॰ एन॰ प्रसाद ने तर्क दिया कि यद्यपि याची 100% विकलांग पाया गया था, परन्तु अशक्तता अधिनियम की धारा 47 का लाभ प्रत्यर्थीगण के लिए याची को किसी अन्य पद पर उसी वेतन एवं सेवा लाभों के साथ स्थानांतरित करना बाध्यकारी बनाता है। इसलिए प्रत्यर्थीगण केवल इस आधार पर याची की सेवाओं से अभिमुक्त नहीं कर सकते कि वह 100% विकलांगता से ग्रस्त हो गया था।

आधारों को विस्तृत रूप से वर्णित करते हुए, विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करते हैं कि प्रत्यर्थीगण का यह अभिवाक् कि अशक्तता अधिनियम की धारा 47 के प्रावधानों से BSF मुक्त है, यह भ्रामक है एवं प्रत्यर्थीगण के किसी काम का नहीं हो सकता है। विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करते हैं कि BSF नियमावली के नियम 25 के प्रावधानों का आश्रय लेकर प्रत्यर्थीगण ने पहले याची की अपंगता के आधार पर उसकी सेवाएं समाप्त कर दी थी। बाद में, उच्च न्यायालय के आदेश के अनुसरण में और अशक्तता अधिनियम की धारा 47 का लाभ प्रदान करते हुए याची को मई, 2002 में एक टंकक के तौर पर सेवा में पुनर्बहाल किया गया था। केन्द्र सरकार की अधिसूचना के अधीन, अशक्तता अधिनियम, 1995 की धारा 47 के प्रावधान से BSF को मुक्त रखने की अधिसूचना सितम्बर, 2002 में आई थी। उक्त अधिसूचना के पहले, याची पुनर्बहाली के उपरांत सेवा में था और इसलिए BSF पर प्रयोज्य होने से अशक्तता अधिनियम की धारा 47 के प्रावधानों को बाद में वापस लिया जाना भूतलक्षी प्रभाव से लागू नहीं किया जा सकता।

5. प्रत्यर्थीगण ने अपना प्रति शपथपत्र दाखिल किया है जिसमें उन्होंने अन्य के साथ-साथ याची के दावे को इनकार किया है और उसपर प्रश्न उठाया है। इस तथ्य को स्वीकारते हुए कि याची एक कॉन्स्टेबुल के तौर पर बी॰ एस॰ एफ॰ में नियोजित था और उग्रवादी कार्रवाई के अनुक्रम में, उसे चोटें आई थी जिसमें पाँच वर्षों के चिकित्सीय उपचार के उपरांत भी उसे 100% विकलांग बना दिया था और उन्होंने यह तथ्य भी स्वीकार किया कि याची की अशक्तता के आधार पर सेवा से उसकी बर्खास्तगी के आदेश को पूर्व के रिट याचिका में उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के अनुशरण में वापस ले लिया गया था; प्रत्यर्थीगण का पक्ष यह है कि अशक्तता अधिनियम, 1995 की धारा 47 के प्रावधानों का विस्तार करके मई, 2002 में याची को सेवा में पुनर्बहाली की गई थी। वाद में, दिनांक 10 सितम्बर, 2002 की अधिसूचना के अधीन अशक्तता अधिनियम, 1995 की धारा 47 के प्रावधानों के अधीन BSF को मुक्त कर दिया गया था। याची अशक्तता अधिनियम के अधीन अब और किसी लाभ का अधिकारी नहीं हो सकता। याची को जाँचने के लिए इस संबंध में चिकित्सा बोर्ड को आकलन करने के लिए गठित किया गया था कि क्या वह अभी तक अशक्तता से ग्रस्त था या नहीं, जिससे कि वह सेवा में बना रह सके। चिकित्सा बोर्ड ने उसे 100% विकलांगता से ग्रस्त पाया। यह स्पष्ट किया गया है कि चूँकि चिकित्सा बोर्ड ने उसे प्रतिरक्षा सेवाओं के लिए पात्र नहीं पाया था, इसलिए याची को सेवा पेंशन के साथ BSF नियम, 1969 के नियम 25 और CCS (पेंशन) नियमावली के नियम 38(1) के प्रावधानों के अधीन 31.1.2005 को सेवानिवृत कर दिया गया था। याची को तद्नुसार

उसकी अशक्तता के पूँजीकृत मूल्य के तौर पर 10,85,508/- रुपए की एक राशि का भुगतान किया गया था और जम्मू एवं कश्मीर राज्य से 5,000/- रुपए की अनुग्रह राशि का भुगतान प्राप्त हुआ था।

6. प्रत्यर्थीगण की ओर से, यह स्पष्ट किया गया है कि प्रतिरक्षा सेवा में नियोजित कार्मिकों द्वारा किए जाने वाले कार्य के प्रकार को देखते हुए केन्द्र सरकार के सामाजिक न्याय एवं सशक्तीकरण मंत्रालय ने दिनांक 10.9.2002 की अधिसूचना के माध्यम से योधक कार्मिकों की सभी कोटियों को अशक्तता अधिनियम की धारा 47 के प्रावधानों से मुक्त कर दिया था। तद्नुसार, बी॰ एस॰ एफ॰ पदस्थापन एवं प्रतिनियुक्ति कार्यकाल नियमावली, 2000 के नियम 11 के एक तत्सम परन्तुक (ii), (iii) को भी दिनांक 20.7.2002 की अधिसूचना द्वारा विलोपित किया गया है।

7. स्वीकार्यत: याची को प्रत्यर्थीगण बी॰ एस॰ एफ॰ के अधीन योधक कार्मिक को एक कॉन्स्टेबल के तौर पर प्रारम्भ में नियुक्त किया गया था। अपने सेवा कार्यकाल के दौरान उसे चोटें आई जिसके परिणामत: 100% अशक्तता हो गई। बी॰ एस॰ एफ॰ (पदस्थापन एवं प्रतिनियुक्ति) नियमावली, 2000 के अधीन सेवा-शर्तें याची पर प्रयोज्य थी। नियमावली वास्तव में प्रावधान करती थी कि चिकित्सा बोर्ड की अनुशंसाओं के आधार पर 40% या उससे ऊपर की विकलांगता वाले कार्मिकों को सेवानिवृत कर दिया जाना है।

BSF को सम्मिलित करते हुए सुरक्षा बलों में नियोजित कार्मिकों पर अशक्तता अधिनियम, 1995 की धारा 47 के प्रावधान प्रयोज्य थे। इसलिए, याची की 100% विकलांगता के बावजूद, प्रत्यर्थी प्राधिकार ने उसे अशक्तता अधिनियम, 1995 की धारा 47 के प्रावधानों के लाभों को प्रदान किया और उसे सेवा में पुनर्बहाल किया। याची द्वारा दाखिल पूर्व के रिट याचिका में उच्च न्यायालय के निर्देश के अनुसरण में याची के मामले में अनुशंसा की गई थी। तथापि, सशस्त्र सेवाओं में योधक कार्मिकों के विभिन्न पदों की विभिन्न कोटियों द्वारा किए जाने वाले कार्य की प्रकृति पर विचार करते हुए केन्द्र सरकार ने अशक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण एवं पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 की धारा 33 के अधीन शक्तियों के इस्तेमाल में उक्त अधिनियम के प्रावधानों से BSF समेत रक्षा बलों के योधक कार्मिकों के पदों की सभी कोटियों को मुक्त कर दिया। इसलिए, प्रत्यर्थीगण उन कार्मिकों की सेवा बनाए रखने के लिए किसी बाध्यता के अधीन नहीं है जो 40% से अधिक विकलांगता से ग्रस्त है और न ही याची अशक्तता अधिनियम के प्रावधानों का कोई लाभ ले सकता है, जो अब याची के मामले पर लागू नहीं होता है।

8. याची का यह तर्क कि वह केन्द्रीय अधिसूचना जिसके अधीन BSF अशक्तता अधिनियम की धारा 47 के प्रावधानों से मुक्त है, याची के मामले में भूतलक्षी रूप से प्रभावी नहीं हो सकती, एक भ्रामक कथन प्रतीत होता है। बी॰ एस॰ एफ॰ पदस्थापन और प्रतिनियुक्ति कार्यकाल नियमावली, 2000 के प्रावधानों के अधीन प्रत्यर्थी प्राधिकार को अपने कर्मियों की अपंगता की सीमा का आकलन करने के लिए एक चिकित्सा बोर्ड से उनकी जाँच कराने और चिकित्सा बोर्ड की अनुशंसाओं पर कार्य करने की पूरी शक्ति थी। मात्र यह तथ्य कि याची को अशक्तता अधिनियम की धारा 47 के प्रावधान के लाभ के अनुसरण में सेवा में पुनर्बहाल कर लिया गया था, बी॰ एस॰ एफ॰ पदस्थापन और प्रतिनियुक्ति कार्यकाल नियमावली, 2000 के अधीन नियमावली के अनुसरण में कार्रवाई करने की प्रत्यर्थीगण की शक्ति को और उन कर्मियों के कार्यकाल को कम करने के प्रत्यर्थीगण की प्राधिकार को कम नहीं करता, जो 40% एवं इससे अधिक विकलांगता से ग्रस्त घोषित किए गए हैं। इसे नोट किया जा सकता है, जैसा कि प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल प्रति शपथपत्र में कहा गया है, की उसकी विकलांगता की प्रकृति के कारण याची को स्थैतिक कार्य करने के लिए भी अयोग्य पाया गया था। इस तथ्य को रिट याचिका के पैरा 21 में याची के बयान के अनुसार भी स्वयं उसी के द्वारा स्वीकार किया गया प्रतीत होता है,

जिसमें उसने माना है कि वह अपने बल पर चलने की स्थिति में नहीं है और वह एक पहिए वाली कुर्सी की मदद से चल फिर सकता है। याची द्वारा लिया गया अगला पक्ष यह है कि यद्यपि उसकी सेवा समाप्ति का आक्षेपित आदेश तात्पर्यित रूप से बी॰ एस॰ एफ॰ नियमावली, 1969 की धारा 25 के प्रावधान के अधीन पारित किया गया था, परन्तु प्रत्यर्थीगण ने नियमों का अनुपालन नहीं किया है जो प्रावधान करते हैं कि चिकित्सा रिपोर्ट की एक प्रति कार्मिक/याची को प्रदान करनी चाहिए जिससे कि उच्चतर प्राधिकारी के समक्ष वह अभ्यावेदन दाखिल करने में सक्षम हो सके और उच्चतर पदाधिकारी के अन्तिम निर्णय तक, बर्खास्तगी के आदेश को प्रभावी नहीं बनाया जा सकता। याची को चिकित्सा रिपोर्ट की प्रति की आपूर्ति नहीं की गई थी और इसलिए वह उच्चतर प्राधिकारी के समक्ष कोई अभ्यावेदन दाखिल नहीं कर सका था।

9. प्रत्यर्थीगण ने यह कहकर जवाब दिया है कि याची की सेवा बर्खास्तगी के आदेश को प्राप्त करने पर, उसने अशक्तता अधिनियम के प्रावधानों के अधीन सेवा में अपनी पुनर्बहाली पर विचार करने के लिए अपना अभ्यावेदन सुपुर्द किया था। अभ्यावेदन पर प्रत्यर्थीगण के सम्बद्ध प्राधिकारी द्वारा विचार किया गया था और उसे अस्वीकृत कर दिया गया क्योंकि पूर्वोक्त अशक्तता अधिनियम के प्रावधान अब प्रत्यर्थी बी॰ एस॰ एफ॰ योधक कार्मिक पर प्रयोज्य नहीं था। इस तथ्य से याची द्वारा इन्कार नहीं किया गया है।

10. अन्यथा भी, याची का यह मामला नहीं है कि जहाँ तक दावा कर सकता कि वह चिकित्सा बोर्ड द्वारा संचालित अपनी जाँच के परिणाम से पूर्णतः अनभिज्ञ था। वस्तुतः, उसे चिकित्सा बोर्ड के परिणाम की पूर्ण जानकारी थी जिसने उसे 100% अयोग्य और विकलांग पाया था। याची की ऐसी स्वीकृति रिट याचिका में किए गए प्रक्थनों से प्रतिबिम्बित होती है। याची ने दावा नहीं किया है कि उसकी शारीरिक स्थिति में कोई सुधार हुआ है और इस तथ्य को माना है कि वह अभी भी 100% विकलांगता से ग्रस्त है और चलने फिरने में असमर्थ है एवं उसके शरीर का हिलना-डुलना एक पहिए वाली कुर्सी पर आश्रित है। इसलिए याची यह दावा नहीं कर सकता कि उसे चिकित्सा बोर्ड के परिणाम की जानकारी नहीं दी गई थी, या उसे उच्चतर प्राधिकारी के समक्ष अपना अभ्यावेदन रखने का एक अवसर नहीं दिया गया था। इस तथ्य से उसने उच्चतर प्राधिकारी को अपना अभ्यावेदन दिया था, जैसा कि प्रति शपथपत्र में प्रत्यर्थीगण द्वारा कथित किया गया है, याची द्वारा इन्कार नहीं किया गया है। याची ने इस तथ्य को भी स्वीकार किया है कि उसे उसकी अशक्तता पर प्रयोज्य प्रतिकर की समूची राशि एकमुश्त भुगतान की गई है। याची ने इस प्रकार अपनी सेवानिवृत्ति के आक्षेपित आदेश को अपास्त करने का कोई आधार तैयार नहीं किया है।

11. पेंशन के नियतीकरण के संबंध में, प्रत्यर्थीगण द्वारा यह इंगित किया गया है कि याची जानबूझकर अपने पेंशन कागजात को प्रस्तुत करने में टाल-मटोल कर रहा है।

12. उपरोक्त परिचर्चा की दृष्टि में, मैं इस रिट आवेदन में कोई गुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह रिट आवेदन खारिज किया जाता है। याची द्वारा अपने पेंशन कागजात प्रस्तुत किए जाने की स्थिति में, प्रत्यर्थीगण याची को उसकी पेंशन प्राप्त करने में समर्थ बनाने के लिए कागजात जमा करने की तिथि से तीन महीनों के भीतर इनपर आवश्यक कार्रवाई कर लेंगे।

---

ekuuh; vej'oj lgk;] U;k;efrl

ध्रुपदेव तिवारी एवं एक अन्य

बनाम

झारखण्ड राज्य

W.P. (Cr.) No. 43 वर्ष 2007. 2 दिसम्बर, 2008 को विनिश्चित।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 446—अभियुक्त व्यक्तियों के जमानत पत्रों को रद्द किए जाने के पश्चात् प्रतिभू धनराशि के समपहरण का आदेश–जमानतदारों/प्रतिभूओं को कारण बताओ नोटिस निर्गत किए बिना आदेश पारित किया गया–अभिनिर्धारित किया गया, जमानत राशि के समपहरण का आदेश एवं डिस्ट्रेस वारंट के निर्गतीकरण का पश्चातवर्ती आदेश दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 446 के आज्ञापक उपबन्धों के पूर्ण उल्लंघन में एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के विरूद्ध पारित किया गया है–आदेशों को अभिखंडित किया गया–अधीनस्थ न्यायालय को जमानतदारों की समपहृत राशि बिना किसी बिलम्ब के निर्मुक्त करने का आदेश दिया गया। (पैरा 3 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Yadu Nandan Mishra, For the Petitioners; Mr. JC to GP-IV, For the State.

आदेश

पक्षकारों को सुना।

2. याचीगण ने S.T. No. 209 वर्ष 1999 में अपर जिला न्यायाधीश, त्वरित न्यायालय-I, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 25.11.2006 के उस आदेश को चुनौती दी है, जिसके द्वारा समपहृत जमानत धनराशि निर्मोचन की प्रार्थना खारिज की गयी है।

3. सुसंगत तथ्य, संक्षेप में, यह है कि दोनो याचीगण सत्र विचारण संख्या 209/1999 के सम्बन्ध में अभियुक्त नवीन कुमार तिवारी एवं मिथिलेश कुमार के जमानतदार के रूप में है। 18.3.2006 को, अभियुक्त व्यक्तियों के जमानत पत्रों को रद्द किया गया था, एवं दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 82-83 के अधीन गिरफ्तारी का वारंट एवं आदेशिका निर्गत किया गया था। तत्पश्चात्, 19.4.2006 को प्रतिभूओं की जमानत राशि समपहृत करने का आदेश दिया गया था एवं डिस्ट्रेस वारंट के निर्गतीकरण हेतु एक आदेश पारित किया गया था। यह भी प्रतीत होता है कि उपरोक्त अभियुक्त व्यक्तियों ने क्रमशः 7.7.2006 एवं 28.7.2006 को न्यायालय में आत्मसमर्पण किया।

4. याचीगण इस रिट आवेदन में जमानत राशियों के समपहरण निर्गत करने वाले आदेश को चुनौती दे रहे हैं।

5. यह निवेदन किया गया है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 446 यह उपबन्ध करता है कि जमानत राशि के समपहरण का कोई आदेश पारित किये जाने से पूर्व, जमानतदारों को नोटिस दिया जाना है। जमानतदारों को नोटिस दिए जाने की अनिवार्य अपेक्षा का अनुपालन वर्तमान मामले में नहीं किया गया था एवं, इसलिए जमानत राशि के समपहरण का आदेश अवैध एवं अनवधार्य है।

6. आक्षेपित आदेश से, मैं पाता हूँ कि विद्वान विचारण न्यायालय ने समपहृत जमानत राशि की निर्मुक्ति हेतु याचीगण की प्रार्थना इस आधार पर अस्वीकृत की है कि न्यायालय के आदेश के अनुपालन में याचीगण के नियोक्ता ने उसके वेतन से प्रतिभू धनराशि की कटौती की है एवं, तद्नुसार, बन्ध-पत्र की उक्त समपहृत धनराशि को पहले ही सिविल न्यायालय के नजारत में निक्षेपित किया गया है एवं एक बार समपहृत धनराशि के वसूल एवं निक्षेपित किये जाने पर, उसे निर्मोचित नहीं किया जा सकता है। विचारण न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि एक बार भुगतान के निर्मुक्त होने एवं सरकारी कोषागार में निक्षेपित किये जाने पर उसके द्वारा इसे निर्मुक्त करने का आदेश नहीं दिया जा सकता है।

7. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन किया है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 449 यह उपबन्ध करता है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 446 के अधीन पारित किसी आदेश के विरूद्ध कोई अपील ग्राह्य है एवं, इसलिए, याचीगण के पास अपील का प्रभावकारी एवं वैकल्पिक उपचार है।

8. निसंदेह, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 446 के अधीन पारित आदेश के विरूद्ध धारा 449 के अधीन अपील करने का उपबन्ध किया गया है परन्तु यह प्रतीत होता है कि यह रिट याचिका फरवरी, 2007 के महीने में दाखिल किया गया था एवं, तत्पश्चात्, डेढ़ वर्ष में अधिक समय पहले ही बीत चुका है एवं, इसलिए, इस प्रक्रम पर यदि याची को अपील के वैकल्पिक उपचार के आधार पर अपीलीय मंच

से सम्पर्क करने को कहा जाता है, मेरी दृष्टि में, यह न्यायोचित नहीं होगा। यह न्यायालय भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन रिट अधिकारिता का प्रयोग करके अपने अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित किसी आदेश को पुनरीक्षित कर सकता है यदि यह पाया जाता है कि चुनौती के अधीन आदेश प्रत्यक्ष रूप से अवैध है। दृष्टांत स्वरूप मामलों में, अपील का वैकल्पिक अधिकार इस न्यायालय द्वारा पर्यवेक्षणीय शक्ति का प्रयोग करने के मार्ग में बाधा नहीं बन सकता है।

9. वर्तमान मामले में, यह विवादित नहीं है कि जमानत-पत्र की राशि का समपहरण आदेश पारित होने से पूर्व या प्रतिभूओं के विरूद्ध डिस्ट्रेस वारंट निर्गत किये जाने से पूर्व, जमानतदारों, अर्थात् याचीगण को किसी भी प्रकार की कोई नोटिस निर्गत नहीं की गयी थी। ऐसी स्थिति में, जमानत-पत्र की राशि के समपहरण का आदेश एवं डिस्ट्रेस वारंट इत्यादि के निर्गतीकरण के सम्बन्ध में सभी पश्चातवर्ती आदेशों को बरकरार नहीं रखा जा सकता है क्योंकि यह दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 446 के आज्ञापक उपबन्ध के पूर्ण उल्लंघन में एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्त के विरूद्ध पारित किया गया था। परिणामस्वरूप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है एवं जमानत-पत्र की समपहृत धनराशि की निर्मुक्ति हेतु याचीगण की प्रार्थना को खारिज करने वाला दिनांक 25.11.2006 का आक्षेपित आदेश साथ ही जमानत धनराशि के समपहरण के सम्बन्ध में विचारण न्यायालय द्वारा पारित सभी आदेशों एवं गिरफ्तारी के डिस्ट्रेस वारंट के निर्गतीकरण को एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है एवं जमानतदारों की जमानत की समपहृत धनराशि को बिना किसी अधिक विलम्ब के निर्मुक्त करने का निर्देश एतद् द्वारा अधीनस्थ न्यायालय को दिया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ thñ vkjñ iVuk;d] U;k;efr

पिन्टो मुर्मू

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5777 वर्ष 2007. 21 अगस्त, 2008 को विनिश्चित।

सेवा विधि–अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति–सेवा नियमावली का नियम 54—दिनांक 25.7.1998 के सरकारी अधिसूचना के अनुसार, अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति हेतु 40 वर्ष के उम्र सीमा को शिथिल किया गया था–याची का अभ्यावेदन इस आधार पर खारिज किया गया था कि वह 40 वर्ष का उम्र पार कर चुका था परन्तु यह इंगित नहीं किया गया कि संशोधित नियमावली का ध्यान रखा गया था–याची को एक नया अभ्यावेदन दाखिल करने एवं प्रत्यर्थी प्राधिकारी को एक युक्तिपूर्ण आख्यानक आदेश देकर एक माह के भीतर निस्तारित करने का निर्देश देकर आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया। (पैरा 2 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajiv Ranjan, For the Petitioner; J.C. to G.P.-III., For the State.

आदेश

इस रिट आवेदन में प्रत्यर्थीगण को यह निर्देश देने के लिए एक परमादेश की प्रकृति के एक समुचित रिट के निर्गतीकरण हेतु प्रार्थना की गयी है कि वे लोग याची को अनुकंपा के आधार पर एक उपयुक्त पद पर नियुक्त करें।

2. याची की ओर से विद्वान अधिवक्ता यह स्पष्ट करते हैं कि याची की पत्नी, यानि, स्व॰ आस्थेर माया हंसदा को दुमका जिले के प्राथमिक विद्यालय, कारीकादर में एक सहायक शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था। उनकी मृत्यु सामान्य रूप से 8.4.2006 को हो गयी। उनकी मृत्यु के पश्चात, याची ने अपनी पत्नी, जो एक सरकारी कर्मचारी थी, की मृत्यु के आधार पर, अनुकंपा के आधार पर अपनी नियुक्ति हेतु प्रत्यर्थीगण-प्राधिकारीगण के समक्ष आवेदन दाखिल किया था। यद्यपि, याची का

अभ्यावेदन, प्रत्यर्थियों द्वारा इस आधार पर दिनांक 8.1.2007 के पत्र (परिशिष्ट-3) के माध्यम से खारिज किया गया था कि आवेदन की तिथि को याची ने 40 वर्ष, जो नियुक्ति हेतु अधिकतम आयु सीमा है, को पार कर चुका था। विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उक्त आधार पर याची की प्रार्थना खारिज किया जाना पूर्णरूप से भ्रामक है क्योंकि अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के मामले में, सेवा नियमावली के नियम 54 के अनुसार, उम्र प्रतिबंध लागू नहीं होता है क्योंकि ऐसे नियम मात्र उन्हीं आवेदकों पर ही लागू होते हैं जो अपनी नियमित नियुक्ति की मांग करते हैं। दिनांक 25.7.1998 के एक सरकारी अधिसूचना को निर्दिष्ट करते हुए, जिसकी एक प्रति संलग्न की गयी है, विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करते हैं कि उक्त अधिसूचना के माध्यम से, 40 वर्ष के उम्र सीमा को अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के मामले में शिथिल किया गया है, यद्यपि, यह विभागाध्यक्ष के विवेकाधिकार के अंतर्गत है कि वह उम्र शिथिलीकरण मंजूर करने की स्वयं में निहित शक्तियों का प्रयोग करें। विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उक्त आधार को याची द्वारा अपने रिट आवेदन के पैरा 10 पर स्पष्ट रूप से अभिकथित किया गया है।

3. प्रत्यर्थी-जिला शिक्षा अधीक्षक, दुमका की ओर से प्रति-शपथपत्र दाखिल किया गया है। प्रति शपथ-पत्र के पैरा 11 में, यद्यपि, याची द्वारा उम्र को शिथिलीकरण से सम्बन्धित उपबन्ध के सम्बन्ध में पेश किए गए आधारों को संदर्भ बनाया गया है परन्तु यह अभिकथित किया गया है कि याची का अभ्यावेदन अनुकंपा के आधार पर उम्र के शिथिलीकरण हेतु क्षेत्रीय उप-शिक्षा निदेशक, दुमका को अग्रसारित किया गया था परन्तु यह इस आधार पर खारिज किया गया था कि याची 40 वर्ष का उम्र पार कर चुका है।

4. प्रत्यक्षतः, प्रति शपथ-पत्र याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट किए गए उस संशोधित नियम पर ध्यान नहीं देता है जो सरकार द्वारा 24.7.1998 को अधिसूचित किया गया है। आक्षेपित आदेश यह भी इंगित नहीं करता है कि याची के अभ्यावेदन को उस संशोधित नियम पर विचार करने के बाद ही खारिज किया गया था जिसके अधीन विभागाध्यक्ष इस तथ्य के दृष्टि में उम्र शिथिलीकरण को मंजूर करने हेतु सशक्त किया गया था कि नियुक्ति की प्रार्थना अनुकंपा के आधार पर किया गया था।

5. मैं याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए निवेदनों में गुणावगुण पाता हूँ। अनुकंपा नियुक्ति के लिए याची के मामले को खारिज करने वाले उस आक्षेपित आदेश को एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है जो पत्र सं॰ 1156/STHA, ज्ञापन सं॰ 60/दुमका के माध्यम से स्थापन समाहरणालय, दुमका द्वारा दिनांक 8.1.2007 को पारित किया गया था। यद्यपि, मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए, याची को जिला शिक्षा अधीक्षक, दुमका (प्रत्यर्थी सं॰ 4) के समक्ष इस आदेश की एक प्रति के साथ एक नया अभ्यावेदन दाखिल करने का निर्देश दिया जाता है एवं ऐसे अभ्यावेदन की प्राप्ति की तिथि से एक माह के भीतर, प्रत्यर्थी सं॰ 4 विधि के अनुरूप एक युक्तिसंगत एवं आख्यानक आदेश पारित कर अभ्यावेदन का निस्तारण करेंगे एवं इसे याची को संप्रेषित करेंगे।

6. उपरोक्त सम्प्रेक्षणों एवं निर्देशों के साथ, यह रिट आवेदन निस्तारित किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

बाबुलाल ग्वाला

बनाम

अध्यक्ष-सह-प्रबन्ध निदेशक, धनबाद, के माध्यम से मेसर्स भारत कोकिंग कोल लि॰ एवं अन्य

W.P. (S) No. 1799 वर्ष 2003. 18 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

सेवा विधि–अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति–याची का दावा इस आधार पर अस्वीकार किया गया कि वह स्वयं एवं मृतक के बीच पुत्र एवं पिता का सम्बन्ध स्थापित करने में असफल था–याची द्वारा पेश किए गए प्रमाणपत्र मृतक के साथ सम्बन्ध स्थापित करता है परन्तु प्राधिकारीगण द्वारा मामले को विनिश्चित करने के लिए पर्याप्त समय लिया गया है–याची की नियुक्ति के मामले में एक माह के भीतर पुनर्निर्णय करने का निर्देश दिया गया। (पैरा 11)

अधिवक्तागण.–Mr. B.K. Jha, For the Petitioner; Mr. A.K. Metha, For the B.C.C.L.

आदेश

पक्षकारों को सुना गया।

2. याची–बाबुलाल ग्वाला, जिसने स्व॰ रामजी ग्वाला का पुत्र होने का दावा किया है, ने अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए आवेदन किया है, क्योंकि उसके पिता की मृत्यु 16.2.1990 को सामान्य रूप से हो गयी, परन्तु चूँकि याची की नियुक्ति के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं दिया गया, इसलिए उसने एक रिट याचिका दायर किया जो C.W.J.C. No. 284 वर्ष 1999R था, जिसमें प्रत्यर्थीगण ने यह अभिवाक् अपनाया था कि याची ने स्वयं बाबुलाल गोवाला एवं स्व॰ रामजी ग्वाला के बीच पिता एवं पुत्र का सम्बन्ध स्थापित करने में असफल रहा है।

3. तदोपरान्त, इस न्यायालय ने याची को C.W.J.C. No. 284 वर्ष 1999R में पारित 11.1.2001 के आदेश की एक प्रति सहित मृतक रामजी ग्वाला की विधवा का शपथ पत्र एवं स्व॰ रामजी ग्वाला के पुत्र होने के अपने दावे के समर्थन में कोई अन्य दस्तावेज पेश करने का निर्देश देते हुए रिट याचिका निस्तारित किया गया था एवं उसी समय, प्रत्यर्थीगण को मामले की छानबीन सम्बन्धित पुलिस अधीक्षक से कराने का विकल्प भी दिया गया था।

4. तत्पश्चात्, याची ने माता के शपथ-पत्र साथ ही मैट्रिक का प्रमाण-पत्र सहित एक आवेदन सक्षम प्राधिकारी के समक्ष दाखिल किया।

5. इस पर, पुलिस अधीक्षक, रायपुर, छत्तीसगढ़ से इस बारे में जाँच कराने के पश्चात् रिपोर्ट उपलब्ध कराने की अपेक्षा की गयी थी कि क्या याची स्व॰ रामजी ग्वाला का पुत्र है।

6. उसके अनुसरण में, पुलिस अधीक्षक, रायपुर, छत्तीसगढ़ ने रिपोर्ट सुपुर्द करने के वजाय याची के पिता के नाम के तौर पर रामजी ग्वाला दर्शाता हुआ याची का आचरण प्रमाण पत्र सुपुर्द किया एवं, इसलिए, प्रत्यर्थी ने इसे एक रपट होना नहीं बल्कि मात्र एक आचरण प्रमाण पत्र माना एवं इस प्रकार अनुकंपा के आधार पर याची की नियुक्ति के दावे को अस्वीकार किया जो कि पूर्णत: अवैध है, क्योंकि प्राधिकारी ने अन्य दस्तावेजों, जैसे उसकी माँ का शपथ पत्र एवं याची के पिता का नाम रामजी ग्वाला दर्शाने वाले मैट्रिक का प्रमाण पत्र पर विचार नहीं किया एवं उसी समय, प्राधिकारी इसपर विचार करने में असफल रहे कि पुलिस अधीक्षक, रायपुर, छत्तीसगढ़ द्वारा उपलब्ध कराये गए प्रमाणपत्र पर याची के पिता का नाम स्व॰ रामजी ग्वाला था एवं, इसलिए, वह आदेश, परिशिष्ट-2/1 में यथा अंतर्विष्ट, जिसके द्वारा याची का दावा खारिज किया गया है, अभिखंडित होने योग्य है।

7. इसके विरूद्ध, B.C.C.L. के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि पुलिस अधीक्षक, रायपुर, छत्तीसगढ़ द्वारा उपलब्ध कराया गया प्रमाणपत्र यह दर्शायेगा कि यह एक रपट नहीं था जो जाँच कराने के पश्चात् पेश की गयी है, बल्कि यह एक आचरण प्रमाणपत्र है एवं इस प्रकार, याची का दावा उचित रूप से ही खारिज किया गया है।

8. विद्वान अधिवक्ता यह भी निवेदन करते हैं कि याची के पिता की मृत्यु वर्ष 1990 में हो गयी थी एवं यह रिट आवेदन वर्ष 2008 में अर्थात् 18 वर्षों बाद विचारण हेतु लाया गया है एवं इन अवधियों के दौरान, याची एवं अन्य पारिवारिक सदस्यों ने स्वयं को पोषित किया है एवं, इसलिए, याची की अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति का प्रश्न कभी भी उत्पन्न नहीं होता है, क्योंकि स्वयं परिस्थितियाँ यह इंगित करते हैं कि याची एवं अन्य सदस्यों को स्वयं को पोषित करने का पर्याप्त साधन उपलब्ध होना चाहिए।

9. मैं B.C.C.L. के विद्वान अधिवक्ता की ओर से किए गए निवेदन में सारभूतता नहीं पाता हूँ।

10. यदि यह अभिकथित किया जाए कि याची के पिता की मृत्यु 1990 में हो गयी थी एवं तदुपरि याची की माँ ने वर्ष 1992 में अनुकम्पा के आधार पर याची की नियुक्ति के लिए आवेदन किया, परन्तु जब मामले में कोई निर्णय नहीं लिया गया, तो याची ने C.W.J.C. No. 284 वर्ष 1999 R के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर किया था जो 11.1.2001 को निस्तारित किया गया था, जिसके द्वारा यह तथ्य प्रमाणित करने के लिए आदेश सहित अन्य दस्तावेजों की एक प्रति पेश करके मामले को दुबारा अभ्यावेदन करने का निर्देश दिया गया था कि याची स्व॰ रामजी ग्वाला का पुत्र है एवं उसी समय सम्बन्धित पुलिस अधीक्षक से मामले की जाँच कराने का विकल्प प्रत्यर्थीगण को दिया गया था। तद्नुसार, मैट्रिक का प्रमाणपत्र एवं माँ का शपथ पत्र भी दाखिल किया गया था। तदुपरि, सम्बन्धित पुलिस अधीक्षक की बांछित रिपोर्ट की मांग की गयी थी।

11. इस बीच पुलिस अधीक्षक, रायपुर, छत्तीसगढ़ ने रपट सुपुर्द करने के बजाय एक आचरण प्रमाण पत्र सुपुर्द किया, जिसमें पिता का नाम रामजी ग्वाला वर्णित किया गया है फिर भी, याची का दावा इस आधार पर अस्वीकार किया गया था कि पुलिस अधीक्षक, रायपुर द्वारा सुपुर्द की गयी रपट, जाँच की रपट नहीं है, यद्यपि, वहाँ यह दर्शाने के लिए अन्य दस्तावेज भी थे कि याची के पिता का नाम स्व॰ रामजी ग्वाला था, परन्तु उन दस्तावेजों पर विचार नहीं किया गया था एवं इन परिस्थितियों में, प्रत्यर्थीगण द्वारा अपनाया गया यह अभिवाक् की याची के पिता की मृत्यु होने के बाद पर्याप्त समय बीत गया है एवं इन अवधियों के दौरान, याची एवं उसकी माता ने स्वयं को पोषित रखा, इसलिए मान्य नहीं है कि याची को कोई अनुकम्पा की जरूरत नहीं है।

12. तद्नुसार, परिशिष्ट-2/1 में, यथा अंतर्विष्ट आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

13. प्रत्यर्थी सं॰ 1 (अध्यक्ष-सह-प्रबन्ध निदेशक, कोयला भवन, धनबाद के माध्यम से मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड) को एतद् द्वारा इस आदेश की एक प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से एक माह के भीतर याची की नियुक्ति के मामले में निर्णय लेने का निर्देश दिया जाता है।

14. इस सम्प्रेक्षण एवं निर्देश के साथ, यह आवेदन निस्तारित किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k] U;k;efr

मो॰ गुलाब एवं अन्य

बनाम

एच॰ एच॰ रहमान एवं अन्य

W.P. (C) No. 7798 वर्ष 2006. 15 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश XXI, नियम 23(2)—डिक्री का निष्पादन–यह अभिवाक् कि डिक्री अस्पष्टता से ग्रस्त है–वाद भूमि की पहचान नहीं हुई है–अभिनिर्धारित किया गया, निष्पादक न्यायालय ने भूमि की पहचान एवं अस्पष्टता के अभिकथन को न्यायनिर्णित करने के लिए पक्षकारों को उचित रूप से ही साक्ष्य पेश करने का निर्देश दिया है। (पैरा 4)

निर्णयज विधि.–1996(2) PLJR 32; 2004(4) JLJR 51; AIR 2003 SC 3789; AIR 2004 SC 4377; AIR 2006 Kerala 237—चर्चा की गई।

अधिवक्तागण.–Mr. Satya Narayan Prasad, For the Petitioners; Mr. Shamim Akhtar, For Respondents.

आदेश

यह रिट याचिका निष्पादन वाद सं॰ 4 वर्ष 2005 में याचीगण द्वारा दाखिल दिनांक 15.7.2006 की याचिका पर विद्वान मुंसिफ, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 25.9.2006 के आदेश के द्वितीय भाग एवं 28.2.2006 के आदेश के विरूद्ध भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन दाखिल किया गया है।

2. याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री सत्य नारायण प्रसाद ने निवेदन किया कि डिक्री में विवादित भूमि का कोई विवरण नहीं था; एवं यह कि निष्पादन न्यायालय को विवादित भूमि का अभिनिश्चय करने के लिए साक्ष्य पेश करने का निर्देश देने की कोई अधिकारिता नहीं थी। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि वादपत्र में, भूमि को ग्राम चापर में स्थित होना कहा गया था, जबकि निष्पादन याचिका में, भूमि को ग्राम नवादा में स्थित होना कहा गया है। इन परिस्थितियों में, विद्वान निम्नस्थ न्यायालय को निर्णीत ऋणी–याचीगण की आपत्तियों को खारिज नहीं करना चाहिए था। उन्होंने **1996(2) PLJR 32** पर विश्वास व्यक्त किया एवं निवेदन किया कि निष्पादक न्यायालय डिक्री को संशोधित या सुधार नहीं कर सकता है। **2004 (4) JLJR 51** में रिपोर्ट किए गए निर्णय पर विश्वास व्यक्त करते हुए, उन्होंने निवेदन किया कि सम्पत्ति की अस्पष्टता की स्थिति में कोई डिक्री मंजूर नहीं किया जा सकता था।

3. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित श्री अख्तर ने आक्षेपित आदेशों का समर्थन किया। उन्होंने निवेदन किया कि यह वाद वादीगण–प्रत्यर्थीगण द्वारा लगभग 40 वर्ष पूर्व 1965 में दाखिल किया था। वादपत्र के अलावे वाद से सम्बन्धित एक नक्शा दाखिल किया गया था, परन्तु यह नष्ट हो गया। वाद को डिक्री किया गया था। याचीगण द्वारा डिक्री के विरूद्ध दाखिल अपील खारिज किया गया था। द्वितीय अपील में, मामले को प्रतिप्रेषित किया गया था। प्रतिप्रेषण पर डिक्री को अभिपुष्ट किया गया था। पुनः इस न्यायालय में एक द्वितीय अपील दाखिल किया गया था, वह भी खारिज हुआ था। इस प्रकार, याचीगण लगातार हारे है। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि विवादित भूमि का पहचान करने के लिए इन कार्यवाहियों के दौरान मुंसिफ द्वारा एक स्थानीय निरीक्षण भी किया गया था। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि पक्षकार यह अच्छी प्रकार से जानते हैं कि वाद संपत्ति क्या है एवं इसमें कोई अस्पष्टता नहीं है। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि विवादित प्लॉट समुदाय के लोगों द्वारा प्रयुक्त मस्जिद के दक्षिणी–पूर्वी भाग पर प्लॉट सं॰ 12 का खुला भाग है। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि नवादा को चापर के तौर पर संशोधन हेतु निष्पादन न्यायालय के समक्ष निष्पादन की याचिका में संशोधन के लिए एक याचिका दाखिल की गयी है; परन्तु वर्तमान मामले में स्थगन के कारण इस पर कोई आदेश पारित नहीं किया जा सका था। उन्होंने C.P.C. के आदेश XXI, नियम 23(2) के अधीन याचीगण की ओर से दाखिल आपत्ति के निम्नलिखित पैरा को भी इंगित किया:–

> ''4. यह कि डिक्री के निर्देश का अनुपालन निर्णीत ऋणी द्वारा पहले ही किया गया है एवं मस्जिद के दक्षिण एवं पूर्व के स्थान को पहले ही उपयोगकर्ताओं द्वारा खाली कराया गया है। मुसलमान लोग दक्षिण एवं पूर्व भाग में मस्जिद के सामने की खाली जगह का उपयोग मुक्त रूप से कर रहे हैं।''

उन्होंने यह भी निवेदन किया कि इन परिस्थितियों में, मामले का 40 वर्षों तक प्रतिवाद करने एवं इसे हारने के पश्चात् याचीगण को अस्पष्टता के तात्पर्यित आधार पर डिक्री के निष्पादन में बाधा उत्पन्न करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। उन्होंने **A.I.R. 2003 SC 3789, AIR 2004 SC 4377** एवं **AIR 2006 केरल 237** पर विश्वास व्यक्त किया। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि याचीगण ने निष्पादन न्यायालय में प्रत्यर्थीगण द्वारा पेश किए गए साक्षीयों को प्रति परीक्षित भी किया है।

4. मैं श्री अख्तर के निवेदनों में बल पाता हूँ। याचीगण इस मामले का प्रतिवाद पिछले 40 वर्षों से कर रहे हैं। वे लोग इस न्यायालय में द्वितीय अपीलीय प्रक्रम तक हारे हैं। अब उनलोगों को अस्पष्टता का या वाद भूमि की पहचान के सम्बन्ध में अभिवाक् अपनाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। विवादित भूमि पक्षकारों को स्पष्ट है। स्वयं याचीगण ने कहा है कि उनलोगों ने मस्जिद के दक्षिण एवं पूर्व में खुले स्थान को खाली कर दिया है। इन परिस्थितियों में, **2004(4) JLJR 51** में रिपोर्ट किया गया निर्णय भी याचीगण की किसी मदद का नहीं है। इसके अतिरिक्त, यह डिक्री के भूल सुधार या संशोधन का मामला नहीं है, एवं इसलिए **1996(2) PLJR 32** में रिपोर्ट किया गया निर्णय इस मामले में प्रयोज्य नहीं है। तब भी, यदि, वाद भूमि की पहचान या अस्पष्टता के सम्बन्ध में, याचीगण की ओर से उठायी गयी आपत्तियों पर, निष्पादक न्यायालय ने पक्षकारों से साक्ष्य पेश करने का निर्देश दिया, मैं इसमें कोई अनुचितता नहीं पाता हूँ।

ऊपर उल्लेख किए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों में, मैं आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज किया जाता है एवं 4.1.2007 को मंजूर अंतरिम आदेश या यथापूर्व स्थिति का आदेश रिक्त किया जाता है। यद्यपि, कोई व्यय नहीं।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr!

रामदयाल करकेट्टा एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 6007 वर्ष 2004. 20 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

सेवा विधि–नियमितीकरण–याचीगण के नियमित वेतनमान के भुगतान के दावे को पूर्ववर्ती रिट आवेदन में अनुज्ञात किया गया था–पूर्ववर्ती रिट आवेदन में आदेश पारित होने से पहले की अवधि हेतु उनलोगों के वेतनों का वर्तमान दावा पूर्व न्याय द्वारा वर्जित है–अवधारित किया गया, अनुतोष इसलिए भी मंजूर नहीं किया जा सकता है क्योंकि उस अवधि के दौरान पदों को मंजूर नहीं किया गया था। (पैरा 3)

अधिवक्तागण.–Mr. A. Allam, For the Petitioners; Mr. A.K. Mehta, For the Respondents.

आदेश

याचीगण का मामला यह है कि उनलोगों को प्रारंभ में वर्ष 1986/1987 में बी॰ एस॰ कॉलेज, लोहरदग्गा में दैनिक मजदूरी पर नियुक्त किया गया था। यद्यपि, वर्ष 1987 में राँची विश्वविद्यालय, राँची द्वारा निर्गत, विभिन्न कॉलेजों में चतुर्थवर्गीय पदों पर नियुक्तियों के लिए आवेदन आमंत्रित करने वाले विज्ञापन के अनुसरण में, याचीगण ने बी॰ एस॰ कॉलेज, लोहरदग्गा में नियुक्ति के लिए आवेदन किया। साक्षात्कार लिए जाने पर, उनलोगों को 7.5.1988 को निर्गत परिशिष्ट–3 के अधीन बी॰ एस॰ कॉलेज, लोहरदग्गा में 12/- रु॰ प्रतिदिन की दर से दैनिक मजदूरी पर चतुर्थवर्गीय कर्मचारी के तौर पर नियुक्त किया गया था। तत्पश्चात् 17.3.1990 को, याचीगण की सेवायें नियमित की गयी थी एवं तदुपरि, उनलोगों को नियमित वेतनमान पर वेतनों का भुगतान किया जा रहा था एवं वे सितम्बर, 1994 तक

अपने-अपने वेतन प्राप्त करते रहे। इस बीच, 22.2.1994 को एक कार्यालय आदेश निर्गत किया गया था जिसके द्वारा सरकार से पदों की मंजूरी नहीं मिलने की स्थिति में कर्मचारियों में से कई (तृतीय वर्गीय एवं चतुर्थवर्गीय) की सेवायें 31.5.1994 के प्रभाव से समाप्त की गयी थी। यद्यपि, दिनांक 26.7.1994 की एक अन्य अधिसूचना के अधीन, बर्खास्तगी का पूर्ववर्ती आदेश इस सीमा तक उपान्तरित किया गया था कि बर्खास्तगी आदेश को 31.7.1994 से प्रभावी बनाया था परन्तु आदेश को प्रभावी बनाने से पहले, दिनांक 26.7.1994 के कार्यालय आदेश (परिशिष्ट-7) के माध्यम से याचीगण को W.P. (सिविल) No. 409 वर्ष 1991 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश की दृष्टि में एवं अवमान याचिका सं॰ 280-404 वर्ष 1983 में पारित आदेश की दृष्टि में भी कार्य करते रहने की अनुमति दी गयी थी। उसके बावजूद जब याचीगण को नियमित वेतनमान में वेतन का भुगतान नहीं किया गया, तो याचीगण ने C.W.J.C. No. 3356 वर्ष 1995 (R) के माध्यम से, इस न्यायालय के समक्ष समावेदन किया, इसमें याचीगण की सेवायें नियमित करने एवं उनलोगों को वेतन भुगतान करने का निर्देश विश्वविद्यालय को देने की प्रार्थना की गयी। यद्यपि, उक्त रिट आवेदन को उपलब्ध स्वीकृत पदों पर अथवा पदों को सरकार द्वारा मंजूरी मिलते ही याचीगण की सेवायें नियमित करने का निर्देश विश्वविद्यालय को देकर निस्तारित किया गया था। इस बीच, याचीगण को 1500/- रु॰ प्रतिमाह की दर से वेतन भुगतान करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को दिया गया था। उपरोक्त रिट आवेदन में पारित आदेश को विश्वविद्यालय द्वारा एक L.P.A. में चुनौती दी गयी थी जो L.P.A. No. 6 वर्ष 1997 (R) थी परन्तु यह खारिज हुआ था। तब भी इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त रिट आवेदन में पारित आदेश को कार्यान्वित नहीं किया गया था। इसलिए, याचीगण ने अवमान याचिका दाखिल की, जो M.J.C. No. 17 वर्ष 1977 (R) थी एवं तब विश्वविद्यालय ने 1500/- रु॰ की दर से भुगतान करना प्रारम्भ किया परन्तु याचीगण की सेवायें नियमित नहीं की गयी और न ही उनलोगों को पूरा वेतन दिया गया एवं इसलिए, याचीगण ने एक अन्य रिट आवेदन दाखिल किया जो C.W.J.C. No. 2241 वर्ष 1998 (R) थी, जिसमें राज्य ने प्रतिशपथ-पत्र दाखिल किया, यह अभिकथित करते हुए कि आज तक विश्वविद्यालय ने अपेक्षित चतुर्थवर्गीय पदों की मंजूरी के लिए राज्य सरकार से कोई आग्रह नहीं किया है। यद्यपि, उक्त रिट आवेदन को **1997(1) PLJR 609** में रिपोर्ट की गयी एक पूर्ण पीठ के निर्णय के निबन्धनों में अनुज्ञात किया गया था जिसके द्वारा विश्वविद्यालय को याचीगण की सेवायें नियमित करने एवं समान स्थिति वाले अन्य नियमित कर्मचारियों के अनुरूप वेतन एवं भत्तों का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। उस आदेश को L.P.A. No. 221 वर्ष 2000 (R) में विश्वविद्यालय द्वारा पुनः चुनौती दी गयी थी जो 25.7.2000 को खारिज हुआ था परन्तु तब भी रिट आवेदन में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश का अनुपालन नहीं किया गया था एवं इस प्रकार, याचीगण को अवमान याचिका लानी पड़ी थी एवं एक सिविल पुनर्विलोकन आवेदन दाखिल किया, जो सिविल रिव्यू सं॰ 32 वर्ष 2002 था जिसमें न्यायालय के समक्ष यह रखा गया था कि झारखंड राज्य ने पहले ही पदों को मंजूर किया है। राज्य की ओर से किये गए कथन के अनुसरण में, कुलपति, राँची विश्वविद्यालय, राँची को मामले की छानबीन करने एवं याचीगण को नियमित कर्मचारियों के अनुरूप वेतन एवं भत्तों का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। उपरोक्त सिविल रिव्यू आवेदन में पारित दिनांक 13.11.2002 के आदेश के अनुशरण में, याचीगण की सेवायें नियमित की गयी थी एवं उन्हें नियमित वेतनमान में वेतनों का भुगतान किया जा रहा है। यद्यपि, याचीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ आलम निवेदन करते हैं कि याचीगण की शिकायत यह है कि यद्यपि याचीगण को सिविल रिव्यू आवेदन में पारित दिनांक 13.11.2002 के आदेश के अनुसरण में, अब नियमित वेतन का भुगतान किया जा रहा है, परन्तु, प्राधिकारीगण अक्टूबर, 1994 से याचीगण को नियमित वेतनमान दिये जाने तक का वेतन, याचीगण को नहीं दे रहे हैं एवं इसलिए, यह आवेदन यह प्रार्थना करते हुए दाखिल किया गया है कि अक्टूबर, 1994 से उस तिथि तक नियमित वेतनमान में वेतन भुगतान करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को दिया जाए। जब याचीगण ने अपना वेतन प्राप्त करना प्रारम्भ किया था एवं उन्हें उस तिथि से वरीयता देने, जब उनलोगों को प्रारम्भ में दैनिक मजदूरी के आधार पर नियुक्त किया गया था।

2. इसके यथा विरूद्ध विश्वविद्यालय के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ मेहता निवेदन करते हैं कि इस रिट आवेदन में की गयी प्रार्थना इस कारण से पूर्णत: अमान्य है कि उन पदों को, जिनपर याचीगण कार्यरत हैं, राज्य सरकार द्वारा कभी भी उस अवधि के दौरान मंजूर नहीं किया गया था जिसके लिए नियमित वेतन का भुगतान किए जाने की मांग की गयी है।

3. स्वीकार्यत: याचीगण को दिनांक 7.5.1988 की अधिसूचना के अधीन 12/- रु॰ प्रतिदिन की दर से दैनिक वेतन पर बी॰ एस॰ कॉलेज, लोहरदग्गा में नियुक्त किया गया था। पर्याप्त अवधि तक सेवा करने के पश्चात्, जब याचीगण की सेवायें नियमित नहीं की गयी थी तब याचीगण ने इस न्यायालय के समक्ष आऐ एवं एक रिट आवेदन दाखिल किया, जो C.W.J.C. No. 3356 वर्ष 1995 (R) था जिसमें याचीगण की सेवायें नियमित करने एवं याचीगण को नियमित वेतन का भुगतान करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को देने की प्रार्थना की गयी थी, जो आवेदन उपलब्ध स्वीकृत पदों के विरूद्ध या सरकार द्वारा मंजूरी प्राप्त होते ही याचीगण की सेवायें नियमित करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को देकर निस्तारित किया गया था। यद्यपि, याचीगण की सेवायें नियमित होने तक 1500/- रु॰ की दर से वेतन भुगतान करने की निर्देश भी प्रत्यर्थीगण को दिया गया था। जब याचीगण की सेवायें नियमित नहीं की गयी, तो याचीगण ने पुन: उसी अनुतोष हेतु एक अन्य रिट आवेदन दाखिल किया जो C.W.J.C. No. 2241 वर्ष 1998 (R) था एवं प्रत्यर्थी–विश्वविद्यालय को पुन: याचीगण की सेवायें नियमित करने एवं उनलोगों के वेतन एवं भत्तों को भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। यद्यपि, प्रत्यर्थीगण की ओर से दाखिल किए गए प्रतिशपथ–पत्र से यह प्रतीत होता है कि याचीगण की सेवायें इस तथ्य के कारण नियमित नहीं की जा सकी थी कि पदों को राज्य सरकार द्वारा मंजूर नहीं किया गया था एवं राज्य सरकार द्वारा दिनांक 12.11.2002 की अधिसूचना के माध्यम से पदों को मंजूर करते ही याचीगण की सेवायें नियमित की गयी थी एवं तब से वे लोग नियमित वेतनमान में वेतन प्राप्त कर रहे हैं एवं इस स्थिति में, उन्हें अक्टूबर, 1994 से नियमित वेतनमान दिए जाने तक की अवधि हेतु नियमित वेतनमान पर वेतन का दावा मान्य नहीं है, प्रथमत: इस आधार पर कि उस अवधि के दौरान पदों को कभी भी मंजूरी नहीं दी गयी थी एवं द्वितीयत:, इप्सित अनुतोष पूर्व न्याय के सिद्धांत के विपरीत है क्योंकि उक्त मुद्दा दोनों रिट आवेदनों में उठाया गया था जिसमें याचीगण ने नियमितीकरण एवं वेतन के भुगतान का दावा पेश किया था परन्तु न्यायालय ने न्याय निर्णय करके एक रिट आवेदन, जो C.W.J.C. No. 3356 वर्ष 1995 (R) था, में पद की मंजूरी मिलने पर सेवाओं के नियमितीकरण का एक आदेश पारित किया था एवं याचीगण की सेवायें नियमित किए जाने तक 15,00/- रु॰ प्रतिमाह की दर से वेतन भुगतान करने का निर्देश प्राधिकारीगण को दिया गया था एवं इसलिए, उस अवधि हेतु नियमित वेतनमान पर वेतन भुगतान करने के निर्देश की मांग इस न्यायालय से करने वाले समान मामला पेश करने की अनुमति अब याचीगण को नहीं दी जा सकती है एवं इसलिए, याचीगण उन अनुतोषों का हकदार नहीं है जो इस रिट आवेदन में दावा किया गया है।

4. तद्नुसार, मैं इस रिट आवेदन में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ। इस प्रकार, यह रिट आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ,eñ okbñ bdcky] U;k;efr

सुरेश प्रसाद सिंह एवं अन्य

बनाम

बिहार राज्य एवं एक अन्य

मूल डिक्री सं॰ 34 वर्ष 1994 (R) से अपील। 12 नवम्बर, 2008 को विनिश्चित।

भूमि अर्जन संदर्भ केस सं॰ 109 वर्ष 1987 में भूमि अर्जन न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित डिक्री दिनांक 17.12.1993 एवं दिनांक 4.12.1993 के निर्णय एवं पंचाट के विरूद्ध।

भूमि अर्जन अधिनियम, 1894—धारा 18—संदर्भ की अस्वीकृति–यह तथ्य की उसी खाता एवं प्लॉट के लिए अन्य भूमिधारकों को याची से अधिक धनराशि अधिनिर्णित की गयी है–मूल्यांकक की रिपोर्ट पर भी विचार नहीं किया गया था–भूमि पर बने मकान के मूल्यांकन पर भी विचार नहीं किया गया था–अभिनिर्धारित किया गया, याचीगण अन्य भूमि धारकों के समान 1,50,000/- रु॰ प्रति एकड़ की दर से भूमि का प्रतिकर पाने का हकदार है।

(पैरा 6)

अधिवक्तागण.–Mr. S.N. Das, For the Appellants.

एम॰ वाई॰ इकबाल, न्यायमूर्ति.–यह अपील भूमि अर्जन संदर्भ केस सं॰ 109/87 में भूमि अर्जन न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 4.12.1993 के निर्णय एवं पंचाट के विरूद्ध निर्दिष्ट है, जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन संदर्भ केस खारिज किया गया था एवं भूमि अर्जन प्राधिकारी द्वारा अधिनिर्णित प्रतिकर को पुष्ट किया गया था।

2. मामले के तथ्य संक्षिप्त हैं।

राज्य सरकार ने दिनांक 11.9.1975 के घोषणा सं॰ 1588 के अधीन धनबाद प्रमंडलीय कारागार के विस्तार हेतु धनबाद पुलिस थाने के अंतर्गत मौजा हीरापुर के खाता सं॰ 136 के अधीन प्लॉट सं॰ 862/4 में बने घर एवं भूमि का अर्जन किया। भूमि अर्जन अधिकारी ने वैधानिक प्रतिकर सहित भूमि एवं उस पर बने घर का प्रतिकर 1,53,506/- रु॰ अवधारित किया। भूमि अर्जन प्राधिकारी ने भूमि का मूल्य 63,684 रु॰ प्रति एकड़ की दर से 11,622.33 रु॰ एवं घर तथा कुएँ का मूल्य क्रमशः 69,599/- रु॰ एवं 5636/- रु॰ भूतलक्षी रूप से निर्धारित किया। अपीलार्थीगण ने अभ्यापति के अधीन प्रतिकर की राशि प्राप्त की एवं भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 18 के अधीन संपत्ति के मूल्यांकन एवं अवधारण तथा वाद के निर्देश की मांग करते हुए पृथक आवेदन दाखिल किया। अपीलार्थीगण का मामला यह था कि भूमि को 15,000/- रु॰ प्रति डिसमल एवं घर को 8.00 लाख रुपया मूल्यांकित किया जाना चाहिए था एवं तद्नुसार, प्रत्येक अपीलार्थीगण ने अर्जित संपत्ति में अपने-अपने हिस्से के सम्बन्ध में प्रतिकर के तौर पर 2.00 लाख रु॰ का दावा किया था। राज्य ने संपत्ति के प्रतिकर अवधारण को इस आधार पर न्यायोचित ठहराया कि यह अभिभावी बाजार दर के आधार पर अवधारित किया गया था। भूमि अर्जन न्यायाधीश ने संदर्भ मामले को सुना एवं इसे आक्षेपित निर्णय एवं पंचाट के माध्यम से निस्तारित किया।

3. यह प्रतीत होता है कि भूमि अर्जन न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि प्रश्नगत मकान 20 वर्ष पुराना था एवं वह भूमि, जिस पर मकान स्थित है, अपीलार्थीगण द्वारा खरीदा गया था परन्तु विक्रय विलेख पेश नहीं किया गया था। निम्नस्थ न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि आवेदकों ने प्रतिकर निर्धारण में न्यायालय को सक्षम बनाने के लिए अर्जित भूमि के पास की या तो किसी भूमि या मकान का कोई दस्तावेज अभिलेख पर नहीं लाया गया। निम्नस्थ न्यायालय ने यह दर्शाने के लिए एक निजी मूल्यांकक की रिपोर्ट, प्रदर्श 1 पर विश्वास व्यक्त नहीं किया कि मकान एवं भूमि 1,34,236/- रु॰ मूल्य के हैं। अपीलार्थीगण ने एक मामला बनाया कि मकान विभिन्न व्यक्तियों को किराये पर दिया गया था एवं वे लोग 1400/- प्रतिमाह किराया प्राप्त कर रहे थे एवं उसके समर्थन में उनलोगों ने किराया की रसीदें दाखिल की है। उपरोक्त निष्कर्षों के आधार पर, भूमि अर्जन न्यायाधीश ने भूमि अर्जन अधिकारी द्वारा अवधारित प्रतिकर को अभिपुष्ट किया था।

4. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित होले वाले विद्वान अधिवक्ता, श्री एस॰ एन॰ दास, आक्षेपित पंचाट की आलोचना अवैध, अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य एवं तथ्यों के विपरीत के रूप में किया। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि स्वीकार्यतः अपीलार्थीगण ने अर्जित भूमि पर मकान का

निर्माण कराया था एवं इस प्रकार वे लोग उसी अनुपात में सन्निर्माण एवं क्षतियों के मूल्यांकन एवं अवधारण के हकदार हैं।

5. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि निम्नस्थ न्यायालय ने भूमि अर्जन न्यायाधीश द्वारा एक अन्य मामला, निर्देश मामला सं॰ 106/79 (प्रदर्श 3) में पारित निर्णय पर विचार नहीं किया है, जिस मामले में प्रतिकर का भुगतान 1,50,000/- रु॰ प्रति एकड़ की दर से किया गया था। इसलिए, आक्षेपित आदेश विधि में अनुचित है।

6. स्वीकार्यतः, मौजा हीरापुर के उसी खाता सं॰ 136 की भूमि अर्जित की गयी थी एवं एक अन्य संदर्भ केस सं॰ 106/79 (प्रदर्श 3) में, भूमि का मूल्यांकन 1,50,000/- रु॰ निर्धारित किया गया था। निर्णय के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि निम्नस्थ न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने वाले सरकारी अधिवक्ता ने इस तथ्य पर विवाद नहीं किया है कि प्रश्नगत भूमि उसी खाता संख्या एवं प्लॉट संख्या की है। मामले की उस दृष्टि में, मात्र इस कारण से कि L.A. संदर्भ केस सं॰ 106/79 में अस्पताल का निर्माण कराया गया है एवं प्रश्नगत भूमि उक्त भूमि के पीछे हैं, निम्नस्थ न्यायालय को उपरोक्त वर्णित संदर्भ मामले में पारित निर्णय का त्याग नहीं करना चाहिए था। इसलिए, मेरी सुविचारित राय में, अपीलार्थीगण भूमि का प्रतिकर 1,50,000/- रु॰ प्रति एकड़ की दर से पाने का हकदार है। इस प्रकार, निम्नस्थ न्यायालय को प्रश्नगत मकान के प्रतिकर निर्धारण के प्रयोजन से मूल्यांकन की रिपोर्ट (प्रदर्श 1) का त्याग नहीं करना चाहिए था। इसलिए, इस मामले पर निम्नस्थ न्यायालय की पुनर्विचारण का जरूरत है।

7. उपरोक्त कारणों से, यह अपील अनुज्ञात एवं आक्षेपित निर्णय एवं पंचाट अपास्त की जाती है। मामले को अभिलेख पर मौजूद सभी सामग्रियों पर विचार करके नया अधिनिर्णय पारित करने के लिए प्रतिप्रेषित किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ dñ flUgk] U;k;efr

महेश ओरांव

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (Cr.) No. 175 वर्ष 2008. 11 नवम्बर, 2008 को विनिश्चित।

विद्युत अधिनियम, 2003—धारा 135—विद्युत का अनधिकृत उपयोग–यह अभिवाक् कि याची उपभोक्ता नहीं है इसलिए, दाण्डिक कार्यवाही अभिखंडित होने योग्य है–अभिनिर्धारित किया गया, चूँकि याची को बर्फ कारखाना चलाने के लिए हुक की मदद से विद्युत की टैपिंग करके, विद्युत आपूर्त्ति तार से संयोजित करके 21 HP विद्युत भार खपत करते हुए पाया गया था, इसलिए, वह दाण्डिक अभियोजन हेतु उत्तरदायी है एवं इस प्रकार, F.I.R. को इस आधार पर अभिखंडित नहीं किया जा सकता कि उसके पिता उपभोक्ता थे। (पैरा 9)

अधिवक्तागण.–M/s Harballava Chandra Prasad, Pawan Chandra Desvarthy, For the Petitioner; M/s R.R. Mishra, Rajesh Shankar, For the Respondents.

डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति.–याची ने C.J.M., राँची के न्यायालय में लम्बित विद्युत अधिनियम, 2003 की धारा 135 के अधीन अभिकथित अपराध हेतु संस्थित G.R. No. 1910 वर्ष 2008 के तत्सम बरियातु थाना केस सं॰ 80 वर्ष 2008 से सम्बन्धित F.I.R. के अभिखंडन हेतु भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलम्ब लिया है। याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3 को मीटर सं॰ MOR-1549 को पुनर्स्थापित करने का निर्देश देने की भी प्रार्थना की है जो उसके पिता शत्रुघन ओरांव, एच॰ एस॰ रोड, मोराबादी के नाम से था क्योंकि मीटर को प्रत्यर्थी

सं॰ 3 द्वारा छापा मारते समय अवैध रूप से अभिग्रहित किया गया था एवं यह घोषणा करने की भी प्रार्थना की थी कि याची के विरूद्ध 5,06,121/- रु॰ की राजस्व हानि का अभिकथन काल्पनिक दावा होने के कारण दुर्भावनापूर्ण परिकल्पना से कलंकित था। फिर भी, याची के अधिवक्ता, ने मुख्य रूप से उस F.I.R. के अभिखंडन पर बल दिया है, जो याची महेश ओरांव के विरूद्ध संस्थित किया गया था एवं इसलिए अन्य इप्सित अनुतोषों पर विचार नहीं किया जा रहा है।

2. वर्तमान मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि, कि 20.5.2008 को बरियातु थाने के समक्ष सूचनादाता–प्रत्यर्थी सं॰ 3 की लिखित रिपोर्ट में यह कथित किया गया है कि झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड (इसमें इसके पश्चात् विद्युत बोर्ड के तौर पर निर्दिष्ट) ने सूचना मिलने पर विभिन्न स्थानों पर छापा मारा था। छापा दल में सूचनादाता नाथन रजक, सहायक विद्युतीय अभियंता (R.M.C.H.) विद्युत आपूर्त्ति अनुमंडल, बरियातु राँची, जिन्होंने दल का नेतृत्व किया, के अतिरिक्त अशोक कुमार (कनीय अभियंता), कौशल कुमार श्रीवास्तव (कनीय अभियंता), विशेष कार्य बल के सदस्य एवं बरियातु थाने की सशस्त्र पुलिस थे। यह अभिकथित किया गया था कि बर्फ कारखाने पर छापा मारने के दौरान याची को विद्युत आपूर्त्ति तार में हुक की मदद से अवैध रूप से टोका फंसाकर 21 H.P. विद्युत भार खपत करता हुआ पाया गया था एवं एतद् द्वारा J.S.E.B. को 5,06,121/- रु॰ तक की सीमा तक क्षति कारित किया। सूचनादाता प्रत्यर्थी ने अभिकथित किया कि उपभोक्ता सं॰ KLT-3-MOR-1547 के माध्यम से बर्फ कारखाने की विद्युत आपूर्त्ति 97,347/- रु॰ के बकाया देयों के विरूद्ध विच्छेदित कर दी गयी थी। सूचनादाता ने अभिकथित विद्युत चोरी के लिए उसी अनुक्रम में कई व्यक्तियों के विरूद्ध सम्मिलित लिखित रिपोर्ट के माध्यम से आपराधिक मामला संस्थित किया था। C.J.M. न्यायालय के समक्ष याची का प्रतिरक्षा यह था कि वह बर्फ कारखाने का स्वत्वधारी नहीं था क्योंकि यह उसके पिता शत्रुघन ओरांव के नाम पर चल रहा था जो वास्तविक स्वामी था एवं यह कि यद्यपि उसका जमानत C.J.M., रांची द्वारा खारिज किया गया था परन्तु इसपर न्यायिक आयुक्त, रांची द्वारा विद्युत बोर्ड को 2,50,000/- रु॰ की धनराशि का संदाय करने एवं अतिशेष धनराशि डेढ़ महीने के भीतर B.P. No. 508/08 में निक्षेपित करने (परिशिष्ट–2) की शर्त पर विचार किया गया था।

3. अभियोजन पक्ष ने स्वीकार किया कि विद्युत सम्बन्ध बर्फ कारखाना चलाने के लिए उपभोक्ता सं॰ KLT-3-MOR 1547 के माध्यम से याची के पिता शत्रुघन ओरांव के नाम पर दी गयी थी एवं बर्फ कारखाने में विद्युत उपयोग के दौरान उपभोक्ता के कारण 97,347/- रु॰ की धनराशि बकाया हो गयी। यह स्पष्ट किया गया था कि वह विद्युत, जो आपूर्ति की गयी थी, LT-18 एवं 21 की कोटि में आती थी। उपरोक्ता शत्रुघन ओरांव से दिनांक 14.12.2007 के बिल सं॰ 19 के माध्यम से उक्त बकायों को 29.12.2007 तक भुगतान करने की अपेक्षा की गयी थी। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उपभोक्ता शत्रुघन ओरांव एवं J.S.E.B. के बीच दिनांक 29 मार्च, 2003 के करार के निबन्धनों के अनुसार, पश्चात कथित (विद्युत बोर्ड) खाता सं॰ 1402 मोराबादी में अवस्थित प्लॉट सं॰ 43 में औद्योगिक उपभोग नीति (परिशिष्ट–4) के अधीन विद्युत आपूर्ति करने पर सहमत हुआ था, जहाँ शत्रुघन ओरांव बर्फ कारखाना चला रहा था। विद्वान अधिवक्ता ने इंगित किया कि उक्त करार से पहले पृथक करार था एवं विद्युतीय कार्यपालक अभियंता, शहरी विद्युत आपूर्ति प्रमंडल सं॰ II रांची ने दिनांक 20.5.2002 के पत्र सं॰ 1341 के माध्यम से शत्रुघन ओरांव को कतिपय निबन्धनों एवं शर्तों (परिशिष्ट–5) पर 21 H.P. विद्युत आपूर्त्ति मंजूर किया था।

4. विद्वान अधिवक्ता यह भी स्पष्ट करते हैं कि 97,347/- रु॰ तक की देय धनराशि की वसूली हेतु एक सर्टिफिकेट मामला सं॰ 742/2007-08 सर्टिफिकेट अधिकारी के समक्ष याची के पिता शत्रुघन ओरांव के विरूद्ध प्रारम्भ की गयी थी एवं नोटिस प्राप्त करके उपभोक्ता शत्रुघन ओरांव ने सम्पूर्ण देयों को दिनांक 25.6.2008 के बैंक ड्राफ्ट सं॰ 61537 के माध्यम से रसीद (परिशिष्ट–6) के माध्यम से

निक्षेपित किया। सूचनादाता प्रत्यर्थी के नेतृत्व में छापेमारी के दौरान बर्फ कारखाने में यथा संस्थापित मीटर सम्यक रूप से सील, चालू हालत में था एवं इसका अंतिम पठन 63180 KWH अभिलिखित किया गया था परन्तु सूचनादाता प्रत्यर्थी सं॰ 3 के कहने पर छापा दल द्वारा मीटर को तोड़ा एवं हटाया गया था एवं ऐसे प्रभाव का एक प्रमाण पत्र उपभोक्ता शत्रुघन ओरांव (परिशिष्ट-7) को दी गयी थी।

5. तर्क का सारांश निकालने के लिए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया याची महेश ओरांव किसी भी प्रकार से विद्युत ऊर्जा की अभिकथित चोरी से सम्बन्धित नहीं था, यद्यपि, यह उपधारित किया जा सकता था कि ऐसी चोरी का कोई अवसर नहीं था क्योंकि मीटर चालू हालत में पाया गया था जब इसे छापा दल द्वारा बर्फ कारखाने से हटाया गया था। इसलिए, अभियोजन पक्ष द्वारा यथा अनुमानित राजस्व क्षति बिना किसी आधार के एक काल्पनिक क्षति थी। याची को उसके विरूद्ध बिना किसी विधिक साक्ष्य के गिरफ्तार किया गया था एवं उसे विद्युत बोर्ड को क्षति उपगत करने के कारण न्यायिक आयुक्त, रांची द्वारा जमानत पर निर्मुक्त किए जाने तक अनुचित रूप से अभिरक्षा में निरूद्ध किया था, जो पाँच लाख रु॰ की सम्पूर्ण धनराशि का संदाय करने की शर्त के अध्यधीन था, जिसके लिए याची किसी भी प्रकार से सम्बन्धित नहीं था।

6. प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3 (J.S.E.B.) की ओर से उपस्थित होने वाले अधिवक्ता ने संक्षिप्त रूप से निवेदन किया कि स्वीकृतितः इस मामले में याची उपभोक्ता नहीं था परन्तु वह अपने पिता के नाम पर बर्फ कारखाना चलाने के लिए हुक का उपयोग करके विद्युत आपूर्त्ति तार में टैपिंग करता हुआ पाया गया था। एवं इस प्रकार उसने विद्युत अधिनियम, 2003 की धारा 135 के अधीन अपराध कारित किया था जो यह कहता है:–

> ''जो कोई भी किसी अनुज्ञप्तिधारी के ओवरहेड, अंडरग्राउंड या अंडरवाटर तारों या केबलों या सेवा तारों या सेवा सुविधाओं के सम्बन्ध में गैर सत्यनिष्ठा पूर्वक टैप करता है या सम्बन्ध जोड़ता है या ऐसा करवाने का कारण बनता है ताकि विद्युत का उपयोग या उपभोग कर सके वह ऐसी अवधि के कारावास से दंडित किया जाएगा जिसका विस्तार तीन वर्ष तक का या जुर्माना सहित या दोनों का हो सकेगा।''

7. J.S.E.B. के विद्वान अधिवक्ता ने अपना तर्क पेश करते हुए निवेदन किया कि सूचनादाता-प्रत्यर्थी सं॰ 3 सहायक विद्युत अभियंता (R.M.C.H.) विद्युत आपूर्ति अनुमंडल, बरियातु रांची को किसी स्थान या परिसर में प्रवेश करने, निरीक्षण करने, तोड़ने, खोलने एवं तलाशी लेने के लिए, जिसमें उसे यह विश्वास करने का कारण हो कि वहाँ अनधिकृत तौर पर विद्युत का उपयोग किया गया है या किया जा रहा है एवं साथ ही ऐसी संयन्त्र, उपकरणों, तारों एवं कोई अन्य सुविधाओं या वस्तुओं को हटाने के लिए जिसे विद्युत अधिनियम, 2003 की धारा 135(2)(a)(b)(c) विद्युत के अनधिकृत उपयोग के लिए प्रयुक्त किया गया है या किया जा रहा है। दिनांक 17.7.2000 की अधिसूचना के माध्यम से ऊर्जा विभाग, झारखण्ड सरकार द्वारा सम्यक रूप से प्राधिकृत किया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने इंगित किया कि विद्युत की चोरी किसी उपभोक्ता या अनुज्ञप्तिधारी तक ही सीमित नहीं है बल्कि अधिनियम की धारा 135 स्पष्ट रूप से यह आदेश देता है कि जो कोई भी गैर सत्यनिष्ठापूर्वक विद्युत आपूर्त्ति तार को टैप करता है, वह अभियोजन हेतु उत्तरदायी है एवं इसलिए, याची का यह प्रतिरक्षा कि वह J.S.E.B. का उपभोक्ता नहीं था, अभिकथित अपराध से उन्मुक्तता प्रदान नहीं करता है। अभियोजन का मामला स्पष्ट है कि जब बर्फ कारखाने के परिसर में छापा मारा गया था, तब याची कारखाने का अधिभोगी पाया गया था एवं इसलिए विद्युत अधिनियम, 2003 की धारा 135 के अधीन उसका अभियोजन वैध एवं विधिक है जिसमें असाधारण रिट अधिकारिता का प्रयोग करके हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है।

8. अन्य प्रार्थना के सम्बन्ध में, जैसा कि वर्तमान याची द्वारा रिट याचिका में किया गया है, विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि चूँकि याची उपभोक्ता नहीं है इसलिए उसे ऐसा अनुतोष मंजूर नहीं किया जा सकता है एवं इसलिए, अन्य अनुतोषों के सम्बन्ध में, जैसा कि दावा किया गया है कोई आदेश पारित किए जाने की आवश्यकता नहीं है।

9. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करके, मैं यह पाता हूँ कि याची ने निरन्तर यह प्रतिरक्षा अपनाया है कि वह उपभोक्ता नहीं था एवं इसलिए, उसका आपराधिक अभियोजन, जैसा कि प्रत्यर्थीगण द्वारा रचा गया था, अभिखंडित होने योग्य था। विनिर्दिष्ट प्रतिरक्षा यह था कि बर्फ कारखाना उसके पिता के नाम पर चल रहा था एवं यह कि उसके पिता बर्फ कारखाना चलाने के करार के अंतर्गत J.S.E.B. द्वारा आपूर्त्ति की गयी विद्युत का उपभोक्ता था एवं यह भी कि लम्बित बकायों हेतु उसके विरूद्ध सर्टीफिकेट मामला भी प्रारंभ किया गया था। परन्तु तथ्य यही रहता है कि याची को बर्फ कारखाना चलाने के लिए अवैध रूप से हुक की मदद से विद्युत की टैपिंग करके, विद्युत आपूर्त्ति तार से जोड़कर 21 H.P. विद्युत भार खपत करता पाया गया था, जो विचारण न्यायालय के समक्ष लंबित G.R. No. 1910 वर्ष 2008 के गुणागुणों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना प्रथम दृष्टि में ही विद्युत अधिनियम, 2003 की धारा 135(1)(a)(b) के अधीन अपराध आकर्षित करता है। इसलिए, मैं दाण्डिक अभियोजन में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

मोस्मात दूलिया

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 4581 वर्ष 2003. 22 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

भारतीय वन (बिहार संशोधन अधिनियम, 1990) अधिनियम, 1927—धारा 52(3)—अधिहरण–ट्रक को बोल्डर ढ़ोने के कारण अभिग्रहित किया गया था–अधिहरण के आदेश को ट्रक के पूर्व मालिक द्वारा चुनौती दी गयी क्योंकि वास्तविक मालिक ने ट्रक को अपने नाम पर रजिस्ट्रीकृत नहीं करवाया था–अधिहरण का आदेश पुनरीक्षणीय प्राधिकारी तक न्यायोचित अभिनिर्धारित नहीं किया गया था–प्राधिकारीगण द्वारा ट्रक के वास्तविक मालिक के सम्बन्ध में विवाद को विनिश्चित नहीं किया गया था–अभिलेख पर ऐसा कुछ भी नहीं आया कि किसकी जानकारी या मिलीभगत से अपराध चालक द्वारा कारित किया गया है–मामले को पुनर्आदेश पारित करने के लिए प्रमंडलीय वन अधिकारी-सह-अधिहरण अधिकारी को प्रतिप्रेषित किया गया। (पैरा 15 एवं 16)

अधिवक्तागण.–Mr. B.K. Dubey, For the Petitioner; Mr. M.K. Laik, For the Respondents.

आदेश

याची ने अधिहरण वाद सं॰ 4 वर्ष 2001 में पारित दिनांक 11.9.2001 के आदेश (परिशिष्ट-3) के अभिखंडन एवं साथ ही अपील सं॰ 103 वर्ष 2001 में उपायुक्त, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 21.8.2002/6.5.2002 के आदेश (परिशिष्ट-4) के अभिखंडन एवं साथ ही अधिहरण पुनरीक्षण सं॰ 4 वर्ष 2003 में सचिव, वन एवं पर्यावरण विभाग, झारखण्ड सरकार, रांची द्वारा पारित दिनांक 20.6.2003 के आदेश (परिशिष्ट-5) के अभिखंडन की प्रार्थना की है जिसके द्वारा अधिहरण अधिकारी द्वारा पारित आदेश पुष्ट किया गया है।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि वन प्रहरी ने 29.1.2001 को लगभग 6.00 बजे शाम को गश्ती के दौरान पाया कि अपराधियों ने छोटे पेड़ों को गिरवाने के पश्चात् लकड़ियाँ को वन सीमा के भंड़वार क्षेत्र में एक ट्रक जो ट्रक सं॰ BRM-2621 धारित किए था, पर लदवा दिया था, उसने लकड़ियों सहित ट्रक को अभिग्रहित किया एवं चालक को गिरफ्तार किया गया था। चालक दस्तावेज पेश करने में असफल रहा था एवं इस प्रकार, भारतीय वन (बिहार संशोधन अधिनियम, 1990), अधिनियम, 1927 की धारा 33 के अधीन एक मामला दर्ज किया गया। तत्पश्चात् मामले को अधिहरण

कार्यवाही प्रारम्भ करने के लिए प्रमंडलीय वन अधिकारी के समक्ष निर्दिष्ट किया गया, जिन्होंने, बाद में, ट्रक मालिक का नाम एवं पता भेजने का आग्रह जिला परिवहन अधिकारी से किया। ऐसी सूचना अभिप्राप्त करके, ट्रक मालिक को नोटिस भेजी गयी। यद्यपि, इस बीच में, किसी तुलसी साव ने प्रमंडलीय वन अधिकारी को कारण बताओ नोटिस दाखिल कर के सूचित किया कि जानकी मिस्त्री, उक्त ट्रक के मालिक की मृत्यु के पश्चात् उसने जानकी मिस्त्री की विधवा एवं बच्चों से उक्त ट्रक को खरीदा था। तदुपरि, नोटिस की तामीला याची, जानकी मिस्त्री की विधवा को की गयी थी, जिसने भी प्रमंडलीय वन अधिकारी के समक्ष स्वीकार किया कि उसने ट्रक तुलसी साव को बेची थी परन्तु तुलसी साव का नाम रजिस्ट्रेशन प्रमाण पत्र में अंतरित नहीं कराया गया था। यह प्रतीत होता है कि जिला परिवहन अधिकारी ने भी प्रत्यर्थी सं॰ 4 को यह सूचित किया कि जानकी मिस्त्री की मृत्यु के पश्चात् उसके विधिक उत्तराधिकारीगण उक्त ट्रक के मालिक है। तत्पश्चात् प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने यह अभिनिर्धारित करके कि वन अपराध कारित किया गया है जिसमें प्रश्नगत ट्रक अंतर्ग्रस्त था एवं इस प्रकार, ट्रक भारतीय वन अधिनियम (बिहार संशोधन अधिनियम, 1990 द्वारा यथा संशोधित) की धारा 52 के उपबन्धों के अधीन अधिहरण किए जाने योग्य है। उक्त आदेश अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष एवं पुनरीक्षणीय प्राधिकारी के समक्ष चुनौती दिए जाने पर अक्षुण्ण रहा एवं तत्पश्चात् अधिहरण अधिकारी द्वारा पारित आदेश पुष्ट किया गया।

3. उन आदेशों से व्यथित होकर, यह रिट आवेदन दाखिल किया गया है।

4. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन किया कि याची, जानकी मिस्त्री, जिसकी घटना की तिथि से पूर्व ही मृत्यु हो चुकी थी, का विधवा एवं उसके बेटों ने, जानकी राम के उत्तराधिकारी होने के कारण ट्रक किसी तुलसी साव को बेच दी थी परन्तु प्रश्नगत ट्रक तुलसी साव के नाम पर अंतरित नहीं किया जा सका था एवं इस प्रकार, याची अभी भी मोटरगाड़ी अधिनियम के उपबन्ध के निबन्धनों में मालिक है एवं इस प्रकार, यह रिट आवेदन याची की ओर से दाखिल किया गया है।

5. यह भी निवेदन किया गया था कि आक्षेपित आदेश पूर्णरूप से अनुचित है क्योंकि अधिहरण अधिकारी, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने अधिहरण का आदेश पारित करने के पहले कभी भी यह निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया है कि वाहन के मालिक को यह ज्ञान था कि उसके वाहन का उपयोग अधिनियम के प्रावधानों के विपरीत वन उत्पाद ढोने के लिए प्रयुक्त होने की सम्भावना थी यद्यपि यह अपेक्षा अधिहरण आदेश पारित करने से पहले एक पूर्वशर्त था।

6. इस सम्बन्ध में, विद्वान अधिवक्ता ने **सहायक वन संरक्षक एवं अन्य बनाम सार्त रामचन्द्र काले [1998(1) PLJR (SC) 21]** में रिपोर्ट किए गए मामले में एवं साथ ही **नरेश सिंह एवं एक अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य के [2002(1) JLJR 660]** में रिपोर्ट किए गए मामले में धारित एक विनिश्चिय को निर्दिष्ट किया है।

7. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि अधिहरण अधिकारी एवं अपीलीय प्राधिकारी साथ ही पुनरीक्षणीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश अभिखंडित होने योग्य है।

8. इसके यथा विरूद्ध प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि स्वीकृतितः याची ट्रक का मालिक नहीं है क्योंकि उसके कथन के अनुसार, ट्रक पहले ही किसी तुलसी साव को बेचा जा चुका है एवं जब उसे ट्रक पर कोई हित या अधिकार नहीं है, तो वह इस रिट आवेदन को नहीं चला सकती है एवं, इस प्रकार, यह रिट आवेदन इस आधार पर खारिज होने योग्य है।

9. यह भी निवेदन किया गया था कि अधिहरण प्राधिकारी ने इस बात से संतुष्ट होकर कि वन अधिनियम के अधीन वन अपराध कारित किया गया है जिसमें प्रश्नगत ट्रक अंतर्ग्रस्त था, वह आदेश पारित किया है, जिसे अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षणीय प्राधिकारी द्वारा पुष्ट किया गया है, किसी अवैधता से ग्रस्त नहीं है।

10. पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने के पश्चात् यह अभिलिखित किया जाए कि जानकी मिस्त्री, जिसकी मृत्यु मामला दर्ज किए जाने से पूर्व ही हो गयी थी, प्रश्नगत ट्रक का एक रजिस्ट्रीकृत मालिक था। जानकी मिस्त्री की मृत्यु के पश्चात् याची एवं उसके बेटों ने ट्रक को किसी तुलसी साव को बेच दिया परन्तु तुलसी साव का नाम कभी भी अंतरित नहीं करवाया गया था एवं इसलिए, जिला परिवहन अधिकारी ने अधिहरण अधिकारी को यह रिपोर्ट दी थी कि जानकी मिस्त्री की मृत्यु के पश्चात् वाहन का मालिक याची एवं उसके बेटे थे। इस स्थिति में, याची मोटर वाहन अधिनियम के प्रावधान के निबन्धनों में प्रश्नगत वाहन का मालिक सदैव माना जाएगा क्योंकि याची के पति की मृत्यु के पश्चात्, जिला परिवहन अधिकारी, हजारीबाग के अनुसार रजिस्ट्रीकरण प्रमाण पत्र याची के नाम पर है।

11. इस सम्बन्ध में, **चन्द्रशेखर झा बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य का मामला,** जैसा कि **(1982 BBCJ 664)** में रिपोर्ट किया गया है, निर्दिष्ट किया गया है।

12. एक बार याची को एक वाहन का स्वामी मान लिए जाने पर, मैं राज्य की ओर से पेश किए गए निवेदन में कोई सारभूतता नहीं पाता हूँ कि याची इस रिट आवेदन का पोषण नहीं कर सकता है।

13. मामले के अन्य पहलू की ओर आते हुए, यह अभिलिखित किया जाए कि प्राधिकारीगण में से किसी ने भी, न तो अधिहरण प्राधिकारी या अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षणीय प्राधिकारी ने अभिहरण का अंतिम आदेश पारित करने के पूर्व यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि ऐसे वाहन के स्वामी को यह ज्ञान थी कि वाहन का उपयोग अधिनियम के उपबन्ध के उल्लंघन में वन उत्पाद ढोने के लिए किए जाने की सम्भावना थी, यद्यपि भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 52 की उप-धारा (5) में यथा अंतर्विष्ट प्रावधान के निबन्धनों में अधिहरण अधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए अपेक्षित हैं। उक्त उपबन्ध निम्नलिखित रूप से पठित है:

> ''उप-धारा (3) के अधीन किसी औजार, हथियार, नाव, वाहन रस्सी, चेन या किसी अन्य वस्तु (अभिग्रहित वन उत्पाद को छोड़कर) के अभिहरण का आदेश नहीं दिया जाएगा यदि उप-धारा (4) के क्लॉज (b) में निर्दिष्ट कोई व्यक्ति प्राधिकृत अधिकारी की संतुष्टि हेतु यह प्रमाणित करता है कि ऐसे किसी औजार, हथियार, नाव, वाहन, रस्सी, चेन या अन्य सामग्रियों का उपयोग उसके ज्ञान या मिलीभगत या, जैसा भी मामला हो, उसके सेवक या अभिकर्ता के ज्ञान या मिलीभगत के बिना किया गया था एवं यह कि वन अपराध कारित करने के लिए उपरोक्त उद्देश्यों में उपयोग के विरूद्ध सभी युक्तियुक्त एवं अनिवार्य पूर्वावधानियां बरती गयी थी।''

14. उक्त प्रावधान को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय ने **नरेश सिंह एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य [2002 (1) JLJR 660]** के मामले में इस **न्यायालय ने एवं सहायक वन संरक्षक एवं अन्य बनाम सार्त रामचन्द्र काले [1998(1) PLJR (SC) 21]** में रिपोर्ट किए गए मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि अधिहरण का अंतिम आदेश पारित करने से पहले अधिहरण अधिकारी को साक्ष्य का मूल्यांकन करके अनिवार्यत: एक निष्कर्ष अभिलिखित करना चाहिए कि ऐसे वाहन के मालिक को यह जानकारी थी कि उसके वाहन का उपयोग अधिनियम के उपबन्धों के उल्लंघन में वन उत्पाद ढोने के लिए उपयोग होने की सम्भावना थी।

15. यहाँ पर यह उल्लेख करना उपयोगी होगा कि जानकी मिस्त्री की मृत्यु के पश्चात्, याची वाहन का मालिक बन गया, जो वन अधिनियम के अधीन एक अपराध कारित करने में संलिप्त था एवं अभिहरण अधिकारी द्वारा यह अभिलिखित किया गया था कि वन अधिनियम के अधीन अपराध याची के कहने पर कारित किया गया है परन्तु यह प्रतीत होता है कि वह निष्कर्ष बिना किसी साक्ष्य के अभिलिखित किया गया है। मामले के तथ्यों में, जहाँ याची द्वारा यह अभिकथित किया गया है कि उसने ट्रक तुलसी साव को बेच दी थी, उस स्थिति में, उससे वाहन की जानकारी रखने की अपेक्षा नहीं की

जाती है परन्तु बल्कि तुलसी साव जिसे, इन परिस्थितियों में अभिकर्ता होना कहा जा सकता है, को प्रश्नगत वाहन के बारे में निश्चित रूप से सम्बन्धित होना कहा जा सकता है। परन्तु अभिलेख पर ऐसा कोई अभिलेख नहीं आया है कि यह अपराध उसकी जानकारी या मिलीभगत में चालक द्वारा कारित की गयी है। इसलिए, यह मामला भारतीय वन अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (5) के निबन्धनों में अधिहरण अधिकारी द्वारा पुनर्विचारित किए जाने की जरूरत है।

16. उपरोक्त कारणों से, यह रिट आवेदन अनुज्ञात एवं परिशिष्ट 3, 4 एवं 5 में यथा अंतर्विष्ट प्रत्यर्थी-प्राधिकारीगण द्वारा पारित आक्षेपित आदेशों को अपास्त किया जाता है। इन परिस्थितियों में, जैसा कि उपर अभिकथित किया गया है, इसमें इसके पूर्व किए गए सम्प्रेक्षणों के आलोक में एक आदेश पारित करने के लिए मामले को प्रमंडलीय वन अधिकारी-सह-अधिहरण अधिकारी, हजारीबाग को प्रति प्रेषित किया जाता है।

---

ekuuh; vthr dqekj flUgk] U;k;efrZ

मुद्दीन मियां

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 2748 वर्ष 2001. 22 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

छोटानागपुर भूधृति अधिनियम, 1908—धाराएँ 48 एवं 71A—भूमि पर कब्जा एवं अभिधान का प्रत्यावर्तन-भूधृति की प्रकृति पैतृक एवं विरासती था-अभिनिर्धारित किया गया, C.N.T. अधिनियम के किसी उपबन्ध के उल्लंघन की अनुपस्थिति में, भूमि को या तो C.N.T. अधिनियम की धाराएँ 71A एवं 48 के अधीन प्रत्यावर्तित करने का निर्देश प्रत्यक्षत: अवैध एवं अनवधार्य है। (पैरा 9 एवं 13)

अधिवक्तागण.—Mr. Lakshmi Narayan Deo, For the Petitioner; Mr. J.C. to S.C.-II, For the Respondents.

आदेश

अजीत कुमार सिन्हा, न्यायमूर्ति.—वर्तमान रिट याचिका दिनांक 24.4.2001 के उस आक्षेपित आदेश को अभिखंडित करने के लिए उत्प्रेषण के एक रिट के निर्गतीकरण के लिए दायर किया गया है जिसके माध्यम से 1908 के अंतिम भूकर सर्वेक्षण एवं 1935 के पुनरीक्षणीय सर्वेक्षण में अभिलिखित भूमि को प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 को प्रत्यावर्तित किया गया है।

2. संक्षेप में तथ्य निम्नलिखित रूप से अभिकथित है:-

याची के दादा अर्थात् मेदु कलाल ने तत्कालीन भू-स्वामी अर्थात्, स्व॰ लाल दुर्गा प्रताप नाथ साह देव से C.S. खाता सं॰ 87 प्लॉट सं॰ 224 के 7.65 एकड़ क्षेत्रफल वाली भूमि को 15.3.1906 को मूल्यवान प्रतिफल देकर खरीदा एवं इसके परिणामस्वरूप वे लोग क्रय की तिथि से सम्पूर्ण भूमि के कब्जेदार बन गए। याची के अनुसार, यह 1908 के भूकर सर्वेक्षण में याची के दादा को परिनिर्धारित रैयती भूमि थी। प्रश्नगत भूमि अधिकार के सर्वेक्षण अभिलेख में बे-लगान था एवं भूस्वामी द्वारा चार आना का मालगुजारी नियत किया गया था जो प्रत्येक वर्ष परिनिर्धारिति द्वारा गांव के पाहन एवं महतो को भुगतेय था एवं इस राशि का उपयोग महतो एवं पाहन द्वारा प्रत्येक वर्ष कोल्हो पुजा के डिनर में व्यवहार किया जाता था।

3. पहान एवं महतो ने भूमि के वार्षिक मालगुजारी का दावा करते हुए एक नियमित मालगुजारी वाद भी दाखिल किया जो वाद सं॰ 140 वर्ष 1923-24 था जो 15.9.1923 को अनुज्ञात किया गया था एवं याची के दादा ने 4 रु॰ 5 आना वार्षिक मालगुजारी का भुगतान किया एवं यह प्रथा 1985-86 में मामला दाखिल करने तक चलता रहा। भूधृति की प्रकृति पैतृक एवं विरासत प्रकार की थी एवं यह

घटना अधिकारों के अभिलेख के अनुरूप परिवर्तित नहीं हो सकता है। 1935 के पुनरीक्षणीय सर्वेक्षण के दौरान, यह भूमि याची के पिता के नाम से अभिलिखित किया गया है। गाँव के पहान ने यह भूमि गैराही होने का दावा करते हुए इसे दिनांक 23.1.1933 के तनाजा मामला संख्या 29, दिनांक 23.1.1933 के माध्यम से चुनौती दी थी जो सहायक परिनिर्धारण अधिकारी, रांची द्वारा याची के पूर्वजों के पक्ष में 22.2.1933 को निर्णित किया गया था।

4. 16.9.1985 को, प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 ने कार्यवाही में सम्मिलित भूमि अर्थात् खाता सं॰ 87 का C.S. प्लॉट सं॰ 224, क्षेत्रफल 7.65 एकड़ वाली भूमि के प्रत्यावर्तन के लिए विशेष अधिकारी, S.A.R. राँची के न्यायालय में C.N.T. अधिनियम की धारा 71A के अधीन एक याचिका, S.A.R. केस सं॰ 144/85-86 इस आधार पर दाखिल किया कि याची ने वर्ष 1975 में जबरदस्ती कब्जा ले लिया है। ऐसी याचिका दाखिल किए जाने पर विद्वान विशेष अधिकारी, राँची ने इस कार्यवाही को स्व प्रेरणा से C.N.T. अधिनियम की धारा 48A के अधीन कार्यवाही में परिवर्तित किया एवं विद्वान विशेष अधिकारी द्वारा भूमि प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 को प्रत्यावर्तित करते हुए 23.8.86 को एक पक्षीय आदेश पारित किया था।

5. याची ने दिनांक 23.8.86 के आदेश से व्यथित होकर विद्वान अपर समाहर्त्ता, राँची के समक्ष एक अपील, प्रकीर्ण अपील सं॰ 102/1986 दाखिल किया, जिन्होंने पक्षकारों को सुनकर मामले में निम्नलिखित के बारे में पुनः जाँच करने के लिए विद्वान विशेष अधिकारी, SAR राँची को 11.3.87 को प्रतिप्रेषित किया:-(1) पूर्व भूस्वामी द्वारा परिनिर्धारण कैसे किया गया था, (2) सर्वेक्षण अभिलेख में गैर-आदिवासी सदस्य का नाम कैसे प्रविष्ट किया गया था, (3) क्या यह मामला C.N.T. अधिनियम की धारा 71A के अधीन या धारा 48 के अधीन आता है, (4) गैर-आदिवासी द्वारा पहान को भूत पूजा के लिए धनराशि का भुगतान एवं (5) क्या पूजा धन की वसूली हेतु पहान द्वारा दाखिल की गयी सर्टिफिकेट कार्यवाही सत्य थी या नहीं। यह कि याची रिमांड के बाद, विशेष अधिकारी, S.A.R. के न्यायालय में उपस्थित हुआ जिन्होंने विद्वान विशेष अधिकारी को की गयी प्रार्थना के बावजूद मात्र प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 के तीन साक्षीयों की परीक्षा करके याची को सुने जाने का कोई अवसर प्रदान किए बिना 27/29.5.90 को अपना अंतिम निर्णय पारित किया।

6. विद्वान विशेष अधिकारी ने विद्वान अपर समाहर्त्ता, राँची के दिनांक 11.3.87 के आदेश में उठाये गए पांच बिन्दुओं पर अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग नहीं किया। याची ने दिनांक 27/29.5.90 के आदेश से व्यथित होकर पुनः अपील सं॰ 21R 15 वर्ष 90-91 के तौर पर अपीलीय मंच के समक्ष पुनः अपील दाखिल किया जो प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा सुना गया। प्रत्यर्थी सं॰ 3 अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित आदेशों का परिशीलन करके पक्षकारों के मामले का सम्यक् विचारण करके एवं अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य एवं अभिलेखों की परीक्षा करके इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि भूमियों को याची के पूर्वजों के नाम पर अभिलिखित किया गया है एवं प्रत्यर्थी से अपीलार्थियों को कोई भूमि हस्तांतरित नहीं हुआ है। उन्होंने यह भी अभिनिर्धारित किया कि चूँकि छोटानागपुर भूधृति अधिनियम के किसी उपबंध का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है इसलिए भूमियों को या तो C.N.T. अधिनियम की धारा 71A के अधीन या C.N.T. अधिनियम की धारा 48 के अधीन प्रत्यावर्तित नहीं किया जा सकता है, यदि याची द्वारा मालगुजारी का कोई बकाया भुगतेय था तब भी C.N.T. अधिनियम की धारा 71A या धारा 48 के अधीन कोई कार्यवाही प्रारंभ नहीं की जा सकती है। उपरोक्त तथ्यों एवं निष्कर्षों में, प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने दिनांक 22.1.97 के अपने आदेश के माध्यम से अपीलार्थी का अपील अनुज्ञात एवं निम्नस्थ न्यायालय के आदेशों को अपास्त किया। दिनांक 22.1.97 के आदेश के विरूद्ध प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 के समक्ष पुनरीक्षण SAR पुनरीक्षण सं॰ 100/97 के तौर पर एक पुनरीक्षण दायर किया।

7. प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने पुनरीक्षण याचिका को सुना एवं अपीली आदेश के तथ्यों एवं निष्कर्षों पर विचार किए बिना एवं इसके तर्क एवं साक्ष्य को भी निर्दिष्ट किए बिना अभिनिर्धारित किया कि प्राचीन काल में गाँवों में काफी संख्या में आदिवासी थे एवं इस प्रकार प्रथा के अनुरूप धार्मिक प्रथा भी बहुधा चलन में थी, परन्तु वर्तमान परिवर्तित परिस्थितियों में, प्राचीन धार्मिक प्रथा घट गयी है एवं इसे जारी

रखना कठिन था। उन्होंने यह भी अभिनिर्धारित किया कि यह भूमि आदिवासियों के भूत पूजा के लिए था एवं यह पहानों के कब्जे में था। तद्नुसार, प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा 22.1.1997 के पारित आदेश को अपास्त किया गया एवं दिनांक 24.4.2001 के अपने आक्षेपित आदेश के माध्यम से भूमि प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 को प्रत्यावर्तित करने का एक निर्देश निर्गत किया था, जो चुनौती के अधीन है।

8. प्रत्यर्थीगण के अनुसार, यद्यपि इसे गैराहई भूमि के तौर पर वर्णित नहीं किया गया है तथापि इसे गैराहई या आदिवासियों की धार्मिक भूमि के तौर पर माने जाने का अभिनिर्धारण किया गया था। इस प्रकार की भूमि, उनलोगों के अनुसार, गांव के पहान/महतो को भूत पूजा के लिए उपलब्ध कराया गया है एवं इस प्रकार यह सभी गांववालों का है। प्रत्यर्थीगण ने आगे निवेदन किया है कि आयुक्त ने अपने पुनरीक्षणीय अधिकारिता में उचित रूप से ही यह अभिनिर्धारित किया है कि इस भूमि के हस्तांतरण का कोई उपबन्ध नहीं है एवं इस प्रकार की भूमि का जमाबन्दी/खाता किसी भी व्यक्ति के नाम से खोला या बनाया नहीं जा सकता है एवं उनलोगों के अनुसार यह ओरावों की पारंपरिक विधि से जुड़ा है एवं इस प्रकार यह तबतक बेचा नहीं जा सकता है जबतक कि अधिकारों के अभिलेख के विरूद्ध प्रमाण पेश नहीं किया जाता है। इस प्रकार, पुनरीक्षण प्राधिकारी एवं प्रत्यर्थीगण दोनों के तर्क का बल यह है कि यद्यपि विधि का कोई उपबन्ध नहीं है परन्तु यह आदिवासियों या भूत पूजा की पारम्पारिक विधि एवं पारम्परिक समझौते पर आधारित था एवं इस पृष्ठभूमि में पुनरीक्षण प्राधिकारी ने अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अपास्त करते समय प्रश्नग्रत विवादित भूमि को चमरू पहान एवं अन्य के पक्ष में प्रत्यावर्तन का निर्देश दिया।

9. मैंने दोनों पक्षों के परस्पर विरोधी तर्कों एवं निवेदनों पर विचार किया है एवं मैं यह पाता हूँ कि विद्वान आयुक्त ने अपने पुनरीक्षणीय अधिकारिता में यह इंगित करने में भी समर्थ नहीं रहे हैं कि वर्तमान रिट याची द्वारा C.N.T. अधिनियम के किस उपबन्ध का उल्लंघन किया गया है। C.N.T. अधिनियम के किसी उपबन्ध के उल्लंघन की अनुपस्थिति में, भूमि को या तो C.N.T. अधिनियम की धारा 71-A के अधीन या C.N.T. अधिनियम की धारा 48 के अधीन प्रत्यावर्तित करने का निर्देश प्रत्यक्ष रूप से अवैध एवं अनवधार्य है। यदि रिट याची को मालगुजारी के भुगतान करने के सम्बन्ध में कोई आदेश हुआ है, तब भी, किसी भी दशा में छोटानागपुर भूधृति अधिनियम की धारा 71-A के अधीन एवं धारा 48 के अधीन कार्यवाहियाँ प्रारंभ नहीं की जा सकती थी। याची के पूर्वज अधिकार के भूकर सर्वेक्षण अभिलेख में अच्छी तरह से अभिलिखित थे। विद्वान अपर समाहर्त्ता, राँची ने उचित रूप से ही यह अभिनिर्धारित किया था कि मालगुजारी वाद केस सं 140R 8 वर्ष 1923-24 में, Sk मेदु कलाल को निजी प्रत्यर्थी चमरू पहान को मालगुजारी धनराशि का भुगतान करने का निर्देश दिनांक 19.9.1923 के आदेश के माध्यम से दिया गया था। इस प्रकार, यह भी अन्यथा स्पष्ट है कि भूमियों को रिट याची के पूर्वजों के नाम पर अभिलिखित किया गया था एवं प्रत्यर्थीगण से अपीलार्थी को भूमि का कोई हस्तान्तरण नहीं हुआ था। C.N.T. अधिनियम की धारा 71-A का अवलम्ब लेने के लिए बुनियादी अपेक्षा यह है कि उपायुक्त की पूर्वानुमति के बिना एक आदिवासी रैयत से गैर-आदिवासी रैयत को भूमि का हस्तान्तरण हुआ हो एवं वर्तमान मामले में भूमि के हस्तान्तरण की अनुपस्थिति में, धारा 71-A सह-पठित धारा 46 का अवलम्ब लेने का प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता है। पुनरीक्षण प्राधिकारी ने आगे C.N.T. अधिनियम की धारा 71-A को धारा 48 में परिवर्तित करने का निर्देश स्वप्रेरणा से दिया जो, किसी भी दशा में, भूइंहारी भूमि के हस्तान्तरण के निर्बधंनों में लागू होता है।

10. याची द्वारा किए गए प्रतिवाद के सम्बन्ध में साक्ष्य के तौर पर निम्नलिखित कागजातों को निम्नस्थ न्यायालय के समक्ष पेश किया गया था:-

1. लाल दुर्गा नाथ सहदेव द्वारा मेदु मियां के पक्ष में निष्पादित दिनांक 15.3.1906 के विक्रय विलेख की छाया प्रति।

2. C.S. प्लॉट सं॰ 224 क्षेत्रफल 7.65 एकड़ के भूकर सर्वेक्षण खाता सं॰ 87 के खतियान की छाया प्रति।

3. मंगरा पहान द्वारा सहामद मियां के विरूद्ध दाखिल किए गए दिनांक 22.2.1933 के तनाजा एवं आदेश की छाया प्रति।

4. मेदु मियां के पुत्र सहामद मियां के नाम पर 7.27 एकड़ क्षेत्रफल वाले खाता सं॰ 85 प्लॉट सं॰ 289 एवं 290 के अधिकारों के R.S. अभिलेख की छाया प्रति।

5. R.S. मानचित्र की छाया प्रति।

6. चमरू पहान द्वारा Sk मेदु कलाल के विरूद्ध दाखिल मालगुजारी वाद केस सं॰ 140 R8 वर्ष 1923-24 में याचिका एवं R.S.D.C. का दिनांक 19.9.1923 के आदेश की छायाप्रति।

7. R.S.D.C. के दिनांक 19.9.1923 के आदेश के अनुसार मालगुजारी वसूली रसीद की छाया प्रति।

8. मुद्दीन मियां एवं उसके पिता सहामद मियां द्वारा भुगतेय एवं लंगोआ पहान, सुकरा पहान एवं अन्य द्वारा मंजूर खाता सं॰ 85 के मालगुजारी रसीदों की छाया प्रति।

अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल किए गए उपरोक्त कागजातों के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि भूमियों का सहामद मियां के नाम से अभिलिखित किया गया है एवं मंगरा पहान द्वारा दाखिल की गयी याचिका को दिनांक 22.2.1933 के आदेश के माध्यम से तत्कालीन A.S.C. द्वारा अभिलिखित किया गया था। विद्वान A.S.O. के आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि सहामत अली को भूमियों का कब्जेदार पाया गया था एवं सहामद अली के पिता का नाम अधिकार के C.S. अभिलेख में अभिलिखित किया गया था। इसलिए, विद्वान A.S.O. ने आदेश दिया कि सहामद अली का नाम अधिकारों के R.S. अभिलेख में अभिलिखित किया जा सकता है एवं तद्नुसार अधिकार का R.S. अभिलेख सहामद मियां के नाम पर है। मालगुजारी वाद केस सं॰ 140R 8 1923-24 में, मालगुजारी वाद उप-समाहर्त्ता द्वारा दिनांक 19.9.1923 के आदेश के माध्यम से Sk मेदु कलाल को मालगुजारी राशि वादी चमरू पहान को भुगतान करने का निर्देश दिया था। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भूमियों को अपीलार्थीगण के पूर्वजों के नाम पर अभिलिखित किया गया है एवं प्रत्यर्थीगण से अपीलार्थीगण को भूमियों का स्थानान्तरण नहीं हुआ है। प्रत्यर्थीगण इस सम्बन्ध में इंगित करने मे सक्षम नहीं रहे हैं कि C.N.T. अधिनियम के किस उपबन्ध का उल्लंघन अपीलार्थीगण द्वारा किया गया है। चूँकि C.N.T. अधिनियम के किसी उपबंध का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है इसलिए भूमियों को C.N.T. अधिनियम की धारा 71-A के अधीन या C.N.T. अधिनियम की धारा 48 के अधीन प्रत्यावर्तित नहीं किया जा सकता है। यदि अपीलार्थीगण द्वारा मालगुजारी के किसी बकाये का भुगतान किया जाना है तब भी C.N.T. अधिनियम की धारा 71-A या धारा 48 के अधीन कार्यवाहियां प्रारंभ नहीं की जा सकती है।

11. वर्तमान मामले में, दस्तावेज अर्थात् अधिकारों का भूकर सर्वेक्षण अभिलेख यह दर्शाता है कि यद्यपि प्रश्नगत भूमि को याची के दादा अर्थात् मेदु कलाल के नाम पर 1908 में अभिलिखित किया गया था, तथापि, प्रश्नगत भूमि कभी भी आदिवासियों द्वारा धारित एवं उसके कब्जे में नहीं रहा है एवं इस प्रकार C.N.T. अधिनियम के उपबन्धों की प्रयोज्यता को नकार कर इसे अवैध बेदखली का कोई प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता है। अधिकार के R.S. अभिलेख में याची के पिता सहामद मियां का नाम रैयत के तौर पर तैयार किया गया है जिसके विरूद्ध मंगरा पहान ने तनाजा दाखिल किया था जिसे विद्वान A.S.O. द्वारा 22.2.1933 को याची के पिता के नाम पर खाता की तैयारी का निर्देश देते हुए खारिज किया गया है एवं इस प्रकार C.N.T. अधिनियम के किसी उपबंध का उल्लंघन नहीं हुआ है एवं विद्वान सहायक परिनिर्धारण अधिकारी का दिनांक 22.2.1933 के आदेश को चुनौती नहीं दी गयी थी एवं इस प्रकार, वह अंतिमता प्राप्त कर ली है। यह इंगित करना सुसंगत है कि उक्त मंगरा पहान ने याची के पिता से मालगुजारी का दावा करते हुए मालगुजारी समाहर्त्ता, राँची के समक्ष एक वाद दाखिल किया था, जो R.S. वाद सं॰ 140 R वर्ष 1923-24 में 19.9.1923 को अनुज्ञात किया गया था इसलिए मामला पहले ही लगभग 80 वर्ष पूर्व ही निर्णित हो चुका है एवं इस प्रकार प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 दिये गए निर्देश के अनुरूप मात्र मालगुजारी के हकदार हैं।

12. अन्यथा भी, वर्ष 1985-86 में C.N.T. अधिनियम की धारा 71-A के अधीन प्रत्यावर्तन आवेदन अत्यधिक विलम्बित है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रत्यावर्तन के लिए धारा **(2000)5 SCC 141** में रिपोर्ट किए गए **जय मंगल ओरांव बनाम मीरा नायक (श्रीमती) एवं अन्य** के मामले में पैरा 16 पर निम्नलिखित रूप से सम्प्रेक्षित किया:-

> ''.....मात्र इस कारण से कि धारा 71-A, शब्द ''यदि किसी समय.....'' से प्रारंभ होता है, इसका अर्थ यह नहीं लगाया जा सकता है कि वे शक्तियाँ समय सीमा के किसी बिन्दु के बिना प्रयुक्त हो सकती थी, जैसा कि इस मामले में पक्षकारों के अधिकारों की उपेक्षा करके लगभग 40 वर्षों के बाद सामान्य विधि एवं परिसीमा विधि के अधीन मध्यकाल में अर्जित किया गया था। इसलिए, हमलोग इन कार्यवाहियों में ऐसे प्रतिवादों का प्रतिकार करना अनुचित मानते हैं।''

पुन: **2008 (1) स्केल पृष्ठ 918** में रिपोर्ट किए गए **फूलचंद मुंडा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य** के मामले में, एक सदृश मुद्दे पर विचार करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि C.N.T. अधिनियम की धारा 71-A केवल तभी लागू हो सकता था जब उपायुक्त यह पाते हैं कि आक्षेपित हस्तांतरण C.N.T. अधिनियम की धारा 46 या किसी अन्य उपबन्ध के उल्लंघन में किया गया था। उन्होंने यह भी अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि उपायुक्त द्वारा C.N.T. अधिनियम की धारा 71-A के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए कोई समय सीमा विहित नहीं है, तथापि प्रभावित पक्षकार से समुचित प्राधिकारी से संपर्क करने की अपेक्षा की जाती है या उपायुक्त द्वारा यह शक्ति एक युक्तिसंगत अवधि के भीतर प्रयोग की जानी है।

13. स्वीकृत तथ्य यही रह जाता है कि वर्तमान याची गांव के पुजारी को मौखिक मालगुजारी जमा कर रहा है, जो इसका पदधारण किए हैं एवं मालगुजारी रसीदों को प्रत्येक वर्ष याची को निर्गत किया जा रहा था एवं यह प्रथा अति प्राचीन काल से जारी है। दुर्भाग्यवश, विद्वान पुनरीक्षण प्राधिकार ने अपने आक्षेपित आदेश के माध्यम से मामले के पूर्वोक्त विधिक पहलु पर एवं साथ ही स्वीकृत तथ्यात्मक स्थिति पर विचार भी नहीं किया एवं भ्रान्तिपूर्वक उन उपबन्धों का अवलम्ब लिया जो बिल्कुल ही प्रयोज्य नहीं थे और न ही उन्होंने C.N.T. अधिनियम के किसी प्रावधान के उल्लंघन को ही इंगित किया है। इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 को भूमि के कब्जे के प्रत्यावर्तन का संक्षिप्त आदेश प्रत्यक्ष रूप से विधि की दृष्टि में भ्रान्तिपूर्ण, अवैध एवं अनवधार्य है।

14. तद्नुसार, यह रिट आवेदन, अनुज्ञात एवं आयुक्त दक्षिणी छोटानागपुर प्रमंडल, राँची, द्वारा S.A.R. पुनरीक्षण सं॰ 100 वर्ष 1997 में पारित दिनांक 24.4.2001 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है एवं अपील सं॰ 21R 15 वर्ष 1990—91 में अपीली प्राधिकारी द्वारा दिनांक 22.1.97 को पारित आदेश प्रत्यावर्तित किया जाता है। व्ययों के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं होगा।

---

ekuuh; Mhñ thñ vkjñ iVuk;d] U;k;efr

BCCL के कुसुंडा क्षेत्र के अंतर्गत धनसार कोयला खान के प्रबंधन के सम्बन्ध में नियोक्तागण

बनाम

उनके कर्मकारगण

W.P. (L) No. 864 वर्ष 2005, 22 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

सेवा विधि–प्रोन्नति–11 कर्मकारों को कार्य की अत्यावश्यकता की विशेष परिस्थिति में प्रोन्नत किया गया था–ऐसी अपवादिक परिस्थिति उन कर्मकारों पर लागू नहीं था जिनकी

प्रारम्भिक नियुक्ति उत्खनन अनुभाग में की गयी थी एवं जिन्हें स्वयं अपने संवर्ग के अनुरूप नियंत्रित की जानी थी जिसमें प्रोन्नति का अधिकतम अवसर ग्रेड B तक सीमित था–ग्रेड A पर प्रोन्नति मात्र इस आधार पर नहीं दिया जा सकता है कि उत्खनन अनुभाग में कार्य करने के लिए प्रतिनियुक्त 11 EP वेल्डरों को ग्रेड A पद पर प्रोन्नति दी गयी थी–प्रोन्नति से इनकार विभेद के तुल्य नहीं है–अधिनिर्णय अनुचित है। (पैरा 12)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Mehta, For the Petitioner; Mr. M.B. Lal, For the Respondent.

आदेश

इस रिट आवेदन में याची ने संदर्भ केस सं॰ 145 वर्ष 1999 में, केन्द्र सरकार के औद्योगिक अधिकरण सं॰ 2 धनबाद द्वारा पारित दिनांक 24.8.2004 के अधिनिर्णय (परिशिष्ट-4) के अभिखंडन की प्रार्थना की है, जिसके द्वारा अधिकरण ने उत्खनन श्रेणी A हेतु कर्मकारों की प्रोन्नति के मामले पर विचार करने का निर्देश याची प्रबन्धन को देते हुए प्रत्यर्थी संघ के पक्ष में संदर्भ का उत्तर दिया है।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य निम्नलिखित रूप में हैं:

3. प्रत्यर्थी खान मजदूर संघ द्वारा दो कर्मकार को वर्ग A में प्रोन्नति नहीं दिए जाने के सम्बन्ध में उठाये गए एक विवाद को निर्देश के लिए निम्नलिखित शब्दों के माध्यम से अधिकरण में निर्दिष्ट किया गया था:–

> ''क्या मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड के कुसुंडा क्षेत्र के प्रबन्धन की धनसार/ KOCP के ऑटो ईलेक्ट्रिसियन मो॰ अब्बास, प्रेम सिंह को ग्रेड-B से उत्खनन ग्रेड-A में प्रोन्नति न देने की कार्रवाई विभेद उत्पन्न करता है यद्यपि उनलोगों ने 1991 में ग्रेड-B से ग्रेड-A में 11 लोगों को प्रोन्नति दी है। यदि ऐसा है, तो क्या मो॰ अब्बास एवं प्रेम सिंह ग्रेड-A में प्रोन्नति के पात्र हैं?''

4. इसके पहले 1991 में, प्रायोजक संघ द्वारा कोई मधुसूदन तिवारी एवं दस अन्य व्यक्तियों जो उत्खनन में वेल्डर के तौर पर नियुक्त थे, द्वारा श्रेणी B से श्रेणी A में प्रोन्नति की मांग करते हुए एक औद्योगिक विवाद उठाया गया था। बताया गया आधार यह था कि जबकि कोटि VI में E एवं M discipline में उनके सहयोगी सहायक फोरमैन ग्रेड-A में फोरमैन के तौर पर प्रोन्नति पाने के पात्र थे, तथापि इन कर्मकारों को इस आधार पर ऐसी प्रोन्नति का प्रत्याख्यान किया गया था कि उत्खनन विभाग में नियुक्त कर्मकारों को ग्रेड-B के उपर प्रोन्नति का कोई अवसर नहीं था।

इस विवाद को सुलझाने के लिए प्रबन्धन एवं संघ के प्रतिनिधियों की एक संयुक्त समिति गठित की गयी थी। समिति ने सम्प्रेक्षित किया था कि उत्खनन विभाग में वेल्डरों के लिए ग्रेड-B से ऊपर प्रोन्नति का कोई अवसर नहीं था एवं इसके फलस्वरूप, ऐसे कर्मकार उसी वेतनमान पर रूके थे जबकि कोटि VI में E एवं M discipline वेल्डरों को ग्रेड B से ग्रेड A में प्रोन्नति का विशेषाधिकार था। संयुक्त समिति ने, अपने संकल्प द्वारा, यह सिफारिश की थी कि 11 EP वेल्डरों को, जिसका विवाद संघ द्वारा प्रायोजित था, फोरमैन टेक्निकल एण्ड सुपरवाइजरी ग्रेड-B (कल्पित रूप से 1.8.1990 से प्रभावी) के पद पर प्रोन्नति दी जाए एवं उक्त तिथि से टेक्निकल एण्ड सुपरवाईजरी ग्रेड-B के वेतनमान में कल्पित वेतन नियत किया जाए। यद्यपि, उनलोगों को वित्तीय लाभ 1.7.1991 के प्रभाव से प्रोद्भूत होना था। संयुक्त समिति की सिफारिश को प्रबन्धन के निदेशक (P) द्वारा अनुमोदित किया गया था एवं यह सम्बन्धित कर्मकारों के पक्ष में कार्यान्वित किया गया था। इसी सिद्धांत के आधार पर, धनसर कोलियरी

में नियुक्त टर्नर, श्री विजय बहादुर सिंह को भी उत्खनन ग्रेड-B से टेक्निकल एवं सुपरवाईजरी में फोरमैन ग्रेड-A में उसी तिथि से प्रभावी प्रोन्नति दी गयी थी जो ALC (मध्य) धनबाद के समक्ष किए गए समझौते के अनुसरण में वेल्डरों को लागू था।

5. वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी संघ की मांग यह थी कि प्रबन्धन को ई॰ पी॰ टर्नर एवं ई॰ पी॰ ऑटो इलेक्ट्रिसियन, जो एक ही वेतनमान में थे एवं एक ही सेवा शर्तों द्वारा नियंत्रित थे, सहित उत्खनन कार्मिकों की प्रोन्नति के मामले में समरूपता की खातिर विभिन्न समूहों के सभी मामलों को विचार करना चाहिए एवं उत्खनन विभाग में नियुक्त EP वेल्डरों तक यथा विस्तारित उसी विशेषाधिकार के आधार पर उन कर्मकारों को प्रोन्नति प्रदान की जानी चाहिए थी जो EP ऑटो इलेक्ट्रिसियन के तौर पर नियुक्त थे।

6. याची प्रबन्धन ने अधिकरण के समक्ष प्रत्यर्थी के दावे का इस आधार पर प्रतिवाद किया कि सम्बन्धित कर्मकार कुसुंडा क्षेत्र के धनसर कोलियरी में ऑटो इलेक्ट्रिसियन के तौर पर स्थायी कर्मचारी हैं। उनलोगों की आर्रभिक नियुक्ति उत्खनन ग्रेड-C में की गयी थी, एवं उनलोगों को क्रमश: 20.3.1994 एवं 11.11.1996 से उत्खन्न ग्रेड-B में प्रोन्नति दी गयी थी। उत्खनन विभाग में नियुक्त कर्मकारों के सम्बन्ध में कंपनी की अनुमोदित संवर्ग योजना के अनुसार, ऑटो इलेक्ट्रिसियन के लिए उत्खनन ग्रेड-B से ऊपर प्रोन्नति का कोई अवसर नहीं है एवं इसलिए उक्त दोनों कर्मकार फिर से आगे प्रोन्नति पाने के पात्र नहीं हैं। आगे यह प्रतिवाद किया गया था कि वर्ष 1991 में किसी भी ऑटो इलेक्ट्रिसियन को जो पर्यवेक्षणीय ग्रेड था, ग्रेड A पर प्रोन्नति नहीं दी गयी थी। इसलिए, इस मामले में संघ के प्रतिनिधित्व वाले दोनों कर्मकारों में विभेद करने का कोई प्रश्न ही नहीं था। यह भी प्राख्यान किया गया है कि सम्बन्धित कर्मकारों ने कभी भी टेक्निकल एवं सुपरवाइजरी ग्रेड-B में कार्य नहीं किया था एवं इसलिए ये कर्मकार किसी अनुतोष के हकदार नहीं है।

7. परस्पर विरोधी अभिवचनों एवं पक्षकारों द्वारा पेश किए गए साक्ष्यों पर विचार करके, अधिकरण ने अपने अधिनिर्णय के निंर्बधनों में सम्बन्धित कर्मकारों के पक्ष में संदर्भ का उत्तर निम्नलिखित रूप से दिया:

> ''क्या मेसर्स BCCL के कुसंडा क्षेत्र के प्रबन्धन की धनसर/KOCP के ऑटो ईलेक्ट्रिसियन मो॰ अब्बास, प्रेम सिंह को ग्रेड-B से उत्खनन ग्रेड-A में प्रोन्नति न देने की कार्रवाई विभेद उत्पन्न करता है यद्यपि यह न्यायोचित नहीं है कि उनलोगों ने 1991 में ग्रेड-B से ग्रेड-A में 11 लोगों को प्रोन्नति दी है। परिणामत: उनके मामले को पंचाट के मध्यभाग में किए गए सम्प्रेक्षण की दृष्टि में विचार करने का निर्देश प्रबन्धन को दिया जाता है।''

पेश किए गए साक्ष्य पर विचार करके अधिकरण ने यह सम्प्रेक्षित किया था NCWA पर विचार करते हुए यह एक तथ्य है कि EP ईलेक्ट्रिसियन की प्रोन्नति का अधिकतम अवसर उत्खनन ग्रेड-B तक है। इसी तरह, EP वेल्डर्स का प्रोन्नति मार्ग भी ग्रेड-B पर समाप्त होता है। यह स्पष्ट है कि EP वेल्डर्स, EP टर्नर्स एवं ऑटो इलेक्ट्रिसियन उत्खनन अनुभाग के अंतर्गत आते हैं एवं उन्हें उत्खनन ग्रेड-B से उपर प्रोन्नति का कोई अवसर नहीं है। यह एक स्वीकृत तथ्य है कि उत्खन्न अनुभाग के EP वेल्डरों का उत्खनन ग्रेड-B से उपर प्रोन्नति का कोई अवसर नहीं है।''

अधिकरण ने निम्नलिखित रूप से सम्प्रेक्षित करने की कार्यवाही की:-

> ''उस कोटि के 11 कर्मकारों ने एक औद्योगिक विवाद उत्पन्न किया जो अंतत: संघ एवं प्रबन्धन के प्रतिनिधियों द्वारा पेश की गयी एक संयुक्त समिति रिपोर्ट के आधार पर समझौते से समाप्त हुआ। इसलिए यह स्पष्ट है कि यद्यपि प्रोन्नति का कोई अवसर नहीं था, तथापि प्रबन्धन

ने उत्खनन अनुभाग के अधीन EP वेल्डरों के तौर पर पदाभिहित 11 कर्मकारों को टेक्निकल एण्ड सुपरवाईजरी ग्रेड-B में फोरमैन के पद पर प्रोन्नति पर विचार किया। प्रबन्धन का तर्क प्रतिकूल एवं विभेदकारी प्रतीत होता है।''

8. आक्षेपित अधिनिर्णय की आलोचना करते हुए, याची के विद्वान अधिवक्ता, श्री ए॰ के॰ मेहता स्पष्ट करते हैं कि उत्खनन संवर्ग के अलावे कोयला उद्योग में, NCWA के अधीन समिति द्वारा कई अन्य संवर्ग सृजित किए गए हैं, जैसे अनुसचिवीय संवर्ग, यांत्रिकी संवर्ग, दूरसंचार संवर्ग, खनन, EDP संवर्ग, लेखा संवर्ग गुणवत्ता नियंत्रण इत्यादि। ऑटो इलेक्ट्रिसियन उत्खनन संवर्ग में नियुक्त है, जबकि वेल्डर तथा टर्नर विद्युतीय एवं यांत्रिकी विभाग के अंतर्गत आते हैं, इसलिए दोनों ही संवर्ग सुभिन्न एवं अलग-अलग हैं। विभिन्न संवर्गों के कर्मकार संवर्ग योजना एवं अपने-अपने संवर्गों में उनका उपलब्ध कैरियर समूह के अनुसार नियंत्रित है। उत्खनन संवर्ग/विभाग में नियुक्त कर्मकारों के संवर्ग योजना में ऑटो इलेक्ट्रिसियन को उत्खनन ग्रेड-B से ऊपर प्रोन्नति का कोई अवसर नहीं है। इसके अतिरिक्त, अन्य संवर्गों, जहाँ ग्रेड-B से उपर प्रोन्नति का अवसर उपलब्ध है, से सम्बन्धित संवर्ग योजना में, अनिवार्य पूर्वापेक्षित यह है कि कर्मकारों ने टेक्निकल एण्ड सुपरवाईजरी ग्रेड-B में विहित वर्षों तक अनिवार्य तौर पर कार्य किया हो जो कि निर्दिष्ट दोनों कर्मकारों नें नहीं किया है एवं इस प्रकार वे लोग ग्रेड-B से उपर किसी प्रोन्नति के हकदार नहीं है।

विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अधिकरण ने E एवं M संवर्ग में कार्यरत कर्मकारों को उत्खनन संवर्ग में कार्यरत ईलेक्ट्रिसियनों से तुलना करके त्रुटि कारित किया है।

संयुक्त समिति के उस संकल्प को निर्दिष्ट करते हुए जिसके आधार पर संयुक्त समिति ने वेल्डरों को कल्पित प्रोन्नति को सिफारिश की थी, विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करते हैं कि 11 वेल्डरों को, जिसका मामला संघ द्वारा प्रायोजित था, मूल रूप से E एवं M संवर्ग में नियुक्त किया गया था। बाद में, कंपनी कार्य के अत्यावश्यकता के आधार पर, उन लोगों को उत्खनन विभाग में प्रतिनियुक्ति किया गया था। ऐसे कर्मकारों के सह कर्मकारों, जो E एवं M संवर्ग में कार्य करते रहे थे, ने अपने संवर्ग योजना के अनुरूप सहायक फोरमैन (टेक्निकल एण्ड सुपरवाईजरी) ग्रेड-C में प्रोन्नति एवं बाद में, फोरमैन टेक्निकल एवं सुपरवाईजरी ग्रेड-B में प्रोन्नति का लाभ प्राप्त किया जबकि 11 EP वेल्डरों को, जो उत्खनन विभाग में प्रतिनियुक्त थे, उत्खनन विभाग में कार्य करते हुए उच्चतर ग्रेड में प्रोन्नत नहीं किया गया था। यद्यपि उत्खनन ग्रेड-B में उनलोगों का वेतनमान कमोबेश फोरमैन टेक्निकल एण्ड सुपरवाइजरी ग्रेड-B के समतुल्य था, तथापि उत्खनन विभाग में प्रतिनियुक्त EP वेल्डरों ने अपनी शिकायत की जिससे एक औद्योगिक विवाद उत्पन्न हुआ जो इस आधार पर सुलह के लिए निर्दिष्ट किया गया था कि उनलोगों को सहायक फोरमैन एवं E & M संवर्ग में फोरमैन के पर्यवेक्षण में कार्य करना था जो अपेक्षाकृत कम योग्य थे एवं सेवा में भी कनीय थे। विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करते हैं कि यह ऐसी परिस्थिति के अंतर्गत एवं इस तथ्य पर विचार करते हुए कि ये 11 कर्मकार मूल रूप से E & M संवर्ग में नियुक्त किए गए थे एवं बाद में उत्खनन विभाग में कार्य करने के लिए प्रतिनियुक्त किए गए थे, कमिटी द्वारा यह निर्णित किया गया था कि ये 11 वेल्डर भी अपने उन सहकर्मियों के समान विचार किए जाने के हकदार है जो E & M विभाग में ही रहे। विद्वान अधिवक्ता आगे स्पष्ट करते हैं कि चूँकि संयुक्त समिति की सिफारिश विशेष परिस्थितियों में 11 EP वेल्डरों के पक्ष में किया गया था, इसलिए यह सिफारिश ऑटो इलेक्ट्रीसियनों तक विस्तृत नहीं हो सकता है, जिसकी आरंभिक नियुक्ति उत्खनन विभाग में स्वयं अपने संवर्ग में की गयी थी जिसमें प्रोन्नति का उच्चतम अवसर मात्र ग्रेड-B तक ही सीमित है।

9. याची द्वारा अपनाये गए दृष्टिकोण का प्रतिवाद करते हुए प्रत्यर्थी का प्रतिनिधित्व करने वाले श्री एम॰ बी॰ लाल निवेदन करते हैं कि ये 11 वेल्डर जिन्हें ग्रेड-A में प्रोन्नति दी गयी थी, उत्खनन विभाग में नियुक्त थे। यद्यपि उत्खनन संवर्ग में नियुक्त कर्मकारों के संवर्ग योजना में, कर्मकारों को उपलब्ध प्रोन्नति का अधिकतम अवसर मात्र ग्रेड-B तक ही है, तथापि, प्रबन्धन ने इस विभाग में नियुक्त कर्मकारों को ग्रेड-B से ग्रेड-A में प्रोन्नति देकर इस नियम का एक अपवाद बनाया था। चूँकि ऑटो इलेक्ट्रिसियन भी उत्खनन संवर्ग के हैं, इसलिए प्रबन्धन ऑटो वेल्डरों, टर्नरों एवं EP वेल्डरों के बीच विभेद नहीं कर सकता है एवं ऑटो ईलेक्ट्रिसियनों को लाभ देने से इनकार करके, प्रबन्धन ने ऑटो इलेक्ट्रिसियनों के विरूद्ध एक मनमाना विभेद किया है।

10. परस्पर विरोधी तर्कों से, निम्नलिखित तथ्य प्रतीत हुआ:

(i) उत्खनन विभाग पूर्ण रूप से भिन्न एवं पृथक विभाग है।

(ii) उत्खनन संवर्ग की संवर्ग योजना में, प्रोन्नति का अवसर ग्रेड-B तक सीमित है, यद्यपि अन्य संवर्गों में, यह ग्रेड-A तक विस्तृत है।

(iii) 11 कर्मकारों को, जिसे उत्खनन विभाग में EP वेल्डर के तौर पर नियुक्त किया गया था। जिसके पक्ष में संयुक्त समिति ने उन्हें ग्रेड A पर प्रोन्नति की सिफारिश की थी, प्रारंभ में E & M संवर्ग में नियुक्त किया गया था एवं कंपनी कार्य की अत्यावश्यकता के कारण, उनलोगों को उत्खनन विभाग में कार्य करने के लिए प्रतिनियुक्त किया गया था।

(iv) E & M संवर्ग में नियुक्त EP वेल्डरों के सहकर्मियों को ग्रेड A में अपनी प्रोन्नति का विशेषाधिकार था। इन 11 वेल्डरों को ऐसे विशेषाधिकार से इनकार किया गया था इस आधार पर कि उत्खनन संवर्ग में प्रोन्नति का अवसर ग्रेड B तक सीमित था;

(v) संयुक्त समिति ने इन सभी विषम पहलुओं पर विचार एवं सम्प्रेक्षित किया था कि यदि इन 11 EP वेल्डरों को उत्खनन विभाग में प्रतिनियुक्त नहीं किया जाता एवं E & M अनुभाग में अपने मूल संवर्ग में कार्य करते रहते, तो उन्हें भी संवर्ग योजना में ग्रेड A पर प्रोन्नति का विशेषाधिकार प्राप्त होता। उक्त पृष्ठभूमि में संयुक्त समिति ने सिफारिश किया कि 11 EP वेल्डरों को कल्पित रूप से 1.8.1990 के प्रभाव से फोरमैन (टेक्निकल एण्ड सुपरवाईजरी ग्रेड B पर प्रोन्नति एवं 1.7.1991 से वित्तीय लाभ दिया जाए। प्रबन्धन ने EP वेल्डरों की प्रोन्नति की संयुक्त समिति की सिफारिश स्वीकार किया था यद्यपि वे लोग उत्खनन संवर्ग में कार्य करते रहे।

11. उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि 11 EP वेल्डरों को ग्रेड A पर प्रोन्नति मंजूर किया गया, यद्यपि उनलोगों को विशेष परिस्थितियों में इस तथ्य पर विचार करते हुए उत्खनन विभाग में कार्य करने के लिए प्रतिनियुक्त किया गया था कि उनलोगों को आरम्भ में E & M अनुभाग में नियुक्त किया गया था जहाँ प्रोन्नति का अवसर ग्रेड A तक विस्तृत था एवं उनके सहकर्मी, जो E & M अनुभाग में कार्य करते रहे, स्वयं अपने संवर्ग में ऐसी प्रोन्नति के हकदार थे।

12. आक्षेपित अधिनिर्णय के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि अधिकरण ने संयुक्त समिति की टिप्पणीयों एवं इसके संकल्प पर विचार किया था, परन्तु इस तथ्य पर विचार करने में असफल रहे कि 11 कर्मकारों के पक्ष में लिया गया संकल्प विशेष परिस्थिति की पृष्ठभूमि में था जिसमें 11 EP वेल्डरों को लाया गया था। ऐसी आपवादिक परिस्थिति उन कर्मकारों पर लागू नहीं था जिनकी आरंम्भिक नियुक्ति उत्खनन अनुभाग में की गयी थी एवं जिन्हें स्वयं अपनी संवर्ग योजना के अनुरूप

नियंत्रित किया जाना था जिसमें प्रोन्नति को उच्चतम अवसर ग्रेड B तक सीमित था। इसलिए, ऑटो इलेक्ट्रिसियन मात्र इस आधार पर ग्रेड A पर प्रोन्नति के किसी लाभ का दावा नहीं कर सकता है कि उत्खनन अनुभाग में कार्य करने के लिए प्रतिनियुक्त 11 EP वेल्डरों को ऐसी प्रोन्नति प्रदान की गयी थी। अधिकरण ने साक्ष्य पर लाये गए इन पहलुओं पर विचार नहीं किया। इसके द्वारा अपने अधिनिर्णय में अभिलिखित निष्कर्ष प्रत्यक्षत: अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों के विचारण से रहित है एवं यह अनुचित है एवं यह रिट याचिका हस्तक्षेप के योग्य है।

उक्त परिचर्चाओं की दृष्टि में, मैं इस रिट याचिका में बल पाता हूँ। तद्नुसार यह रिट आवेदन अनुज्ञात किया जाता है एवं अधिकरण के आक्षेपित आदेश को अभिखंडित किया जाता है।

---

ekuuh; vthr d|ekj flUgk] U;k;efr

अखौरी अखिलेश्वरी चरण लाल एवं अन्य

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य

CWJC No. 185 वर्ष 1999 (R). 19 नवम्बर, 2008 को विनिश्चित।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

(क) छोटानागपुर भूधृति अधिनियम, 1908—धाराएँ 71A, 71B एवं 72—किसी रैयत को भुस्वामियों को भूमि अभ्यर्पित करने का वैधानिक अधिकार था एवं वर्ष 1942 में रैयत द्वारा भूमि अभ्यर्पित करने के लिए उपायुक्त की पूर्वानुमति इस तथ्य के दृष्टिकोण में अपेक्षित नहीं था कि C.N.T. अधिनियम में संशोधन 5.1.1948 से प्रभावी हुआ। (पैरा 5, 9 एवं 12)

(ख) परिसीमा अधिनियम, 1963—अनुच्छेद 64 एवं 65—प्रतिकूल कब्जा–प्रत्यावर्तन का आवेदन अभ्यर्पण की तिथि से 35 वर्षों के बाद दाखिल किया गया था एवं कब्जा जारी था–अभिनिर्धारित किया गया, प्रत्यावर्तन याचिका परिसीमा द्वारा वर्जित है। (पैरा 9)

(ग) छोटानागपुर भूधृति अधिनियम, 1908—धारा 71A सह-पठित संशोधन अधिनियम, 1947—भूमि का प्रत्यावर्तन–भूमि रैयत द्वारा जमीन्दार के पक्ष में अभ्यर्पित किया गया था एवं तत्पश्चात् याची के हितबद्ध पूर्वाधिकारी को 2.4.42 को बन्दोबस्ती किया गया था–भूमि का प्रत्यावर्तन व्यक्तिगत प्रत्यर्थीगण के पक्ष में अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है क्योंकि परिनिर्धारिती पचास वर्षों से भूमि का कब्जेदार था–द्वितीयत:, व्यक्तिगत प्रत्यर्थीगण का दावा प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से वर्जित है। (पैरा 11 से 13)

निर्णयज विधि.–(2000)5 SCC 141; 2004(4) JCR 211 (SC); 1987 BLT 303; 1988 BLT 520 & 18; 1993(1) BLJR 328; 1989 BLT 404; 2004(4) JLJR (SC) 109; 2008(1) SCALE 718.

अधिवक्तागण.–Mr. Amar Kr. Sinha, For the Petitioners; Mr. H.K. Mehta, For the State.

अजीत कुमार सिन्हा, न्यायमूर्ति.–याचीगण ने परिशिष्ट 8, 9 एवं 11 में यथा अंतर्विष्ट क्रमश: राजस्व पुनरीक्षण सं० 133 वर्ष 1981 में प्रत्यर्थी सं० 2 द्वारा पारित दिनांक 25.8.1988 के आदेश, S.A.R. अपील सं० 17R 15 वर्ष 1980-81 में प्रत्यर्थी सं० 3 द्वारा पारित दिनांक 29.9.1981 का आदेश एवं S.A.R. केस सं० 139 वर्ष 1977-78 में प्रत्यर्थी सं० 4 द्वारा दिनांक 18.4.1980 का आदेश अभिखंडित करने के लिए वर्तमान रिट याचिका दाखिल किया है, जिसके माध्यम से ग्राम थेथैंटांगर में अवस्थित खाता सं० 67 से सम्बन्धित 8.70 एकड़ क्षेत्रफल वाली भूमियों प्लॉट सं० 2511, 3274, 3335, 3340, 4483, 3484, 3485, 3486, 3487, 3488, 3490, 3536 एवं 3481 को छोटानागपुर

भूधृति अधिनियम की धारा 71-A के अधीन वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 के पिता सहरू गोंड के पक्ष में प्रत्यावर्तित किया गया था।

2. तथ्य, संक्षेप में, निम्नलिखित रूप से तय किया गया है:–

रैयत द्वारा परिशिष्ट–1 में यथा अंतर्विष्ट जमीन्दार के पक्ष में एक रजिस्ट्रीकृत अभ्यर्पण था एवं परिशिष्ट–2 के माध्यम से जमीन्दार द्वारा याची के हित के पूर्वाधिकारियों को 2.4.42 को परिनिर्धारित किया गया है। निजी प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 के पिता साहरू गोड ने प्रश्नगत उपरोक्त भूमियों के प्रत्यावर्तन का दावा करते हुए विशेष अधिकारी, अनुसूचित क्षेत्र विनियमन, सिमडेगा, के समक्ष छोटानागपुर भूधृति अधिनियम, 1908 (संक्षेप में ''C.N.T. अधिनियम'') की धारा 71A के अधीन एक आवेदन दाखिल किया, जो S.A.R. केस सं॰ 139 वर्ष 1977-78 के तौर पर दर्ज किया गया था। वर्तमान याचीगण की माता अर्थात् श्रीमती बैदेही कुमारी देवी ने आवेदक की आलोचना करते हुए अपने कारण बताओ नोटिस दाखिल किया। प्रत्यावर्तन आवेदन अनुज्ञात किया गया था एवं दाखिल की गयी अपील खारिज की गयी थी। दाखिल की गयी पुनरीक्षण याचिका को काल वर्जित के तौर पर खारिज किया गया था एवं याची ने एक रिट याचिका दाखिल किया एवं माननीय उच्च न्यायालय ने एक पुनरीक्षण दाखिल करने की अनुमति दी थी जो अंतत: खारिज हुआ था एवं अब इसे वर्तमान रिट आवेदन में चुनौती दिया जा रहा है।

याची के अनुसार C.N.T. अधिनियम की धारा 46 या किसी अन्य उपबन्धों का कोई उल्लंघन नहीं हुआ था एवं न ही कोई कपटपूर्ण तरीका अपनायी गयी थी। यह प्रतिवाद किया गया है कि विपक्षी पक्षकार का मामला परिसीमा एवं प्रतिकूल कब्जा द्वारा वर्जित था एवं यह कि खाता सं॰ 67 की भूमियों को अधिकारों के पुनरीक्षणीय सर्वेक्षण अभिलेख में मंगल गोंड के पुत्र पदम गोंड, करीया गोंड, सामन गोंड, दोनों वैद्यनाथ गोंड के पुत्र, का नाम अभिलिखित किया गया था एवं अभिलिखित रैयत ने दिनांक 25.3.1942 को अभ्यर्पण के एक रजिस्ट्रीकृत विलेख के माध्यम से तत्कालिन भूस्वामियों को उपरोक्त भूमियों को स्वेच्छा से अभ्यर्पित किया था एवं इसका कब्जा भू–स्वामीयों को दिया था, एवं अभ्यर्पण के पश्चात् ये भूमियाँ तत्कालीन भूस्वामियों की वकसत् भूमि बन गयी एवं वे लोग इसके कब्जेदार बन गए। यह भी निवेदन किया गया है कि तत्कालीन भूस्वामियों ने बाद में उपरोक्त भूमियों को स्थायी, विरासती एवं अंतरणीय रैयती बन्दोबस्त दिनांक 2.4.1942 के एक रजिस्ट्रीकृत बन्दोबस्ती विलेख के माध्यम से श्रीमती सोना कुमारी देवी के पक्ष में किया एवं settlee को इसका कब्जा दिया एवं वह बन्दोबस्ती की तिथि से कब्जेदार हो गया। उक्त settlee ने पूर्व भूस्वामी के सरिस्ता में अपना नाम दाखिल खारिज कराया एवं अपने नाम से मालगुजारी का भुगतान किया एवं बिहार भूमि सुधार, अधिनियम, 1950 के उपबन्धों के अधीन संपदायें निहित होने के पश्चात् वह तत्कालीन बिहार राज्य द्वारा एक रैयत के तौर पर जानी गयी थी एवं उसने राज्य को भी मालगुजारी का भुगतान किया था। याचीगण ने यह भी दावा किया है कि श्रीमती सोना कुमारी देवी ने दिनांक 30 जनवरी, 1956 के एक रजिस्ट्रीकृत विक्रय–विलेख के माध्यम से उपरोक्त संपत्ति याचीगण की माता, अर्थात् श्रीमती बैदेही कुमारी देवी को बेचा एवं वह क्रय की तिथि से इसका शांतिपूर्ण कब्जेदार रहीं एवं उसकी मृत्यु के पश्चात् वर्तमान याचीगण कब्जेदार हैं।

याचीगण के अनुसार, उनकी माता, श्रीमती बैदेही कुमारी देवी ने भी तत्कालीन बिहार राज्य के सरिस्ता में अपना नाम दाखिल खारिज करवाया एवं अपने नाम से नियमित रूप से मालगुजारी का भुगतान किया।

3. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा पेश किया गया मुख्य तर्क यह है कि C.N.T. अधिनियम की धारा 72 के अनुसार किसी रैयत को इन भूमियों को भूस्वामियों को अभ्यर्पित करने का वैधानिक अधिकार था एवं रैयतों द्वारा भूमि के अभ्यर्पण के लिए वर्ष, 1942 में इस तथ्य की दृष्टि में उपायुक्त की पूर्वानुमति आवश्यक नहीं थी कि C.N.T. अधिनियम में संशोधन 1947 के अधिनियम XXV द्वारा 5.1.1948 से ही प्रभावी हुआ। याचीगण ने यह भी प्रतिवाद किया कि यह भविष्यलक्षी प्रकृति का था

एवं रैयतों द्वारा भूमियों के अभ्यर्पण हेतु उपायुक्त की अनुमति 5.1.1948 के बाद से ही अनिवार्य थी एवं, इस प्रकार, दिनांक 20.3.1942 का रजिस्ट्रीकृत विलेख पूर्णत: विधिक एवं वैध था एवं तत्कालीन भूस्वामी द्वारा हितबद्ध पूर्ववर्ती के पक्ष में दिनांक 2.4.1942 को निष्पादित बन्दोबस्ती यह प्रमाणित करता है कि तत्कालीन भूस्वामी द्वारा settlee के पक्ष में स्थायी विरासती एवं अंतरणीय बन्दोबस्त किया गया है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने इस परिप्रेक्ष्य में **1987 B.L.T. पृष्ठ-303 (बिश्राम साहू बनाम भैरो ओरांव एवं अन्य)** एवं **1988 B.L.T. पृष्ठ-18 (नन्द कुमार साहु बनाम बिहार राज्य एवं अन्य)** में रिपोर्ट किए गए विनिश्चियों को निर्दिष्ट एवं इसपर विश्वास व्यक्त किया है कि मात्र इस कारण से कि बन्दोबस्ती अभ्यर्पण की तिथि के कुछ दिनों या महीनों बाद किया गया है, इसे अवैध अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है जबतक कि यह साक्ष्य न हो कि वे एक ही संव्यवहार के भाग एवं parcel बनाते हैं, इसे अवैध अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है। याचीगण के अनुसार, उपरोक्त मामलों में अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के पक्ष में पारित प्रत्यावर्तन का आदेश माननीय उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए अभिखंडित किया गया था कि ऐसे किसी साक्ष्य की अनुपस्थिति में कि अभ्यर्पण एवं बन्दोबस्ती एक ही सम्व्यवहार का भाग एवं parcel है, भूमियों के प्रत्यावर्तन का कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता था। इस सम्बन्ध में, उन्होंने **1988 B.L.T. पृष्ठ 520 (पारस नाथ मुंडा बनाम रामा साहु) 1993 (1) B.L.J.R. पृष्ठ-328 (झलकू अहीर बनाम बिहार राज्य एवं अन्य)** एवं **1989 B.L.T. पृष्ठ-404** पर रिपोर्ट किए गए निर्णयों को भी निर्दिष्ट किया है।

4. याचीगण के अधिवक्ता ने **जय मंगल ओरांव बनाम मीरा नायक (श्रीमती) एवं अन्य** के **(2000)5 SCC पृष्ठ-141** एवं **2004 (4) J.L.J.R. पृष्ठ-109 (SC)** में रिपोर्ट किए गए मामलों में धारित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के विनिश्चय को भी निर्दिष्ट एवं इस पर इस प्रतिपादन हेतु विश्वास किया है कि अभ्यर्पण, कृषि वर्ष के दौरान भी वैध है एवं वर्ष 1942 में भूमियों के अभ्यर्पण हेतु उपायुक्त की कोई अनुमति अपेक्षित नहीं थी।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा पेश किया गया अगला तर्क यह है कि भूमियों के प्रत्यावर्तन हेतु आवेदन वर्ष, 1977 में अर्थात् अभ्यर्पण की तिथि से 35 वर्षों के पश्चात् दाखिल किया गया था एवं यह घोर विलम्ब एवं त्रुटियों से ग्रस्त था। याचीगण के अनुसार, 1969 के विनियम-1 द्वारा परिसीमा अधिनियम का अनुच्छेद 65 में संशोधन को भी भूतलक्षी प्रभाव से लागू नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह भविष्यलक्षी प्रवर्तन प्रवृत्ति का है एवं यथा उपरोक्त सुस्थापित विधि एवं निर्णयों की दृष्टि में, C.N.T. अधिनियम की धारा 71A के अधीन आरम्भिक हस्तांतरण की तिथि से 30 वर्षों की समाप्ति के पश्चात् भूमियों के प्रत्यावर्तन के लिए कोई याचिका ग्रहण नहीं की जा सकती है।

6. प्रतिवाद कर रहे व्यक्तिगत प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने निवेदन किया है कि दिनांक 1.9.1986 के असाधारण राजपत्र सं॰ 480 में प्रकाशित अधिसूचना की दृष्टि में, भूईयारी, मुंडारी, खुटकारी इत्यादि सहित सभी भूमि रैयती भूमि होने के कारण इस पर C.N.T. अधिनियम की धारा 71 लागू थी एवं तद्नुसार, प्रत्यावर्तन का आदेश पूर्णत: न्यायोचित था। यह भी निवेदन किया गया है कि पुनरीक्षण याचिका में, दक्षिणी छोटानागपुर प्रमण्डल, राँची के आयुक्त ने पक्षकारों को सुनने एवं साक्ष्य की संवीक्षा करने के पश्चात् एक सुविचारित निर्णय के माध्यम से यह अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 के पिता को जबरदस्ती बेदखल किया गया था एवं इस प्रकार, C.N.T. अधिनियम की धारा 71A लागू था।

7. राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि C.N.T. अधिनियम की धारा 71A 1969 के संशोधन के माध्यम से अंत:स्थापित किया गया था एवं यह 1969 से प्रभावी हुआ एवं, इस प्रकार, परिसीमा 1969 से प्रारम्भ होगा। यद्यपि, राज्य की ओर से दाखिल लिखित अभिकथन के पैरा 2 एवं 3 पर, निम्नलिखित रूप से यह अभिकथित किया गया है:-

"2. वर्तमान मामले में, प्रत्यावर्तन प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 द्वारा वर्ष 1977-78 में दाखिल किया गया था, धारा 71A 1969 के संशोधन द्वारा अंत:स्थापित एवं 1969 में प्रभावी हुआ था, इसलिए, क्या परिसीमा 1969 से प्रारम्भ होगा या अभ्यर्पण की तिथि अर्थात् 1942 से। राज्य के अनुसार, यह 1969 से प्रारंभ होता है जब 71A का उपबन्ध अधिनियम में अंत:स्थापित किया गया था।

3. यह सत्य है कि याची वर्ष 1942 में भूमि का कब्जेदार हो गया एवं प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 द्वारा प्रत्यावर्तन आवेदन वर्ष 1969 में दाखिल किया गया था। इसलिए, याची या उसका हितबद्ध पूर्वाधिकारी 45 वर्षों से अधिक समय से बिना किसी बाधा के भूमि का कब्जेदार है इस प्रकार याची अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के विरूद्ध प्रतिकूल कब्जा का दावा कर सकता है एवं उस स्थिति में धारा 71A 1988 B.L.T. 18, 1987 B.L.T. 301 (Rep) में रिपोर्ट किए गए निर्णय की दृष्टि में लागू नहीं होता है। इसलिए, रिट आवेदन में सारभूतता नहीं है।''

8. समस्त अभिवचनों एवं तर्कों तथा परस्पर प्रतिविरोधी अभिकथनों का अवलोकन करने पर, विचारण हेतु निम्नलिखित विवादित प्रश्न उत्पन्न होता है:

(1) क्या अभ्यर्पण एवं बन्दोबस्ती एक ही संव्यवहार है जिसका अभिप्राय है क्या यह विक्रय है अथवा नहीं?

(2) परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 64 एवं 65 किस तिथि से लागू होगा?

(3) क्या याचीगण व्यक्तिगत प्रत्यर्थीगण के विरूद्ध संपत्ति का प्रतिकूल कब्जेदार है?

(4) क्या C.N.T. अधिनियम की धारा 46 या किसी अन्य उपबन्ध का उल्लंघन हुआ है?

9. यह उच्च न्यायालय ने अभ्यर्पण एवं व्यवस्थापन के सम्बन्ध के मुद्दे पर बार-बार विचार किया है कि क्या यह एक ही संव्यवहार है एवं विक्रय/अंतरण की कोटि का है। C.N.T. अधिनियम की धारा 72 (4) के अनुसार, जब किसी रैयत ने अपनी होल्डिंग अभ्यर्पित की है, तो भूस्वामी होल्डिंग धारण कर सकता है एवं या तो उसे एक अन्य अभिधारी को बन्दोबस्त कर सकता है या वह स्वयं कृषि कार्य कर सकता है एवं, इस प्रकार, भूस्वामी को किसी अन्य व्यक्ति को भूमि बन्दोबस्त करने का संविधिक अधिकार है एवं वर्तमान मामले में, भूमि का रैयती बन्दोबस्त तत्कालीन भूस्वामी द्वारा याचीगण के हितबद्ध पूर्वाधिकारी के पक्ष में किया गया था। यही दृष्टिकोण **1987 B.L.T. पृष्ठ-303 (उपर), 1988 B.L.T. पृष्ठ-520 (उपर), 1993(1) B.L.J.R. 328 (उपर)** एवं **1988 B.L.T. 404 (उपर)** में, यह अभिनिर्धारित करते हुए बरकरार रखा गया है कि कुछ दिनों एवं/या महीनों की अवधि में भूमि का अभ्यर्पण या व्यवस्थापन पूर्णत: विधिक एवं विधिमान्य है एवं इस प्रकार, प्रत्यावर्तन का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है एवं तद्नुसार आदेश अवैध है।

तत्कालीन भूस्वामी द्वारा श्रीमती सोना कुमारी देवी के पक्ष में निष्पादित दिनांक 2.4.1942 का बन्दोबस्ती का रजिस्ट्रकृत विलेख का एक परिशीलन यह तथ्य भी प्रमाणित करता है कि यह तत्कालीन भूस्वामी द्वारा settlee के पक्ष में कृत स्थायी, विरासती एवं हस्तान्तरणीय रैयती बन्दोबस्त था। C.N.T. अधिनियम की धारा 72(4) में अंतर्विष्ट उपबन्धों के अनुरूप, भूमि धारक को रैयती भूमि बंदोबस्त करने का संविधिक अधिकार था।

10. परिसीमा के दूसरे मुद्दे के सम्बन्ध में, अविवादित तथ्य यही रहता है कि याचीगण के हितबद्ध पूर्वाधिकारियों के साथ प्रश्नगत भूमि का शांतिपूर्ण, निरन्तर एवं अबाधित कब्जा 2.3.1942 से जारी रहा एवं प्रत्यावर्तन का आवेदन अभ्यर्पण की तिथि से 35 वर्षों के पश्चात् दाखिल किया गया था एवं इस प्रकार, वर्ष 1977 में दाखिल प्रत्यावर्तन आवेदन परिसीमा द्वारा वर्जित था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **(2000)5 SCC पृष्ठ-141 (उपर)** में पैरा 16 पर निम्नलिखित रूप से अभिनिर्धारित किया है:-

''... ... ... मात्र इस कारण से कि धारा 71-A के शब्दों ''यदि किसी समय.....'' से प्रारम्भ होता है, इसका अर्थ यह नहीं लगाया जा सकता है कि वे शक्तियाँ समय सीमा के किसी बिन्दु के बिना प्रयुक्त हो सकती थी, जैसा कि इस मामले में पक्षकारों के अधिकारों की उपेक्षा करके लगभग 40 वर्षों के बाद सामान्य विधि एवं परिसीमा विधि के अधीन मध्यकाल में अर्जित किया गया था। इसलिए हमलोग इन कार्यवाहियों में ऐसे प्रतिवादों का प्रतिकार करना अनुचित मानते हैं।''

11. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **2004 (4) JCR पृष्ठ 211 (SC)** में एक सदृश मुद्दे पर विचार किया गया था, जिसमें परिसीमा के मुद्दे एवं अनुसूचित जनजाति के सदस्यों एवं खतियानी धारकों को भूमि के प्रत्यावर्तन के सम्बन्ध में धारा 71A एवं 71B के अधीन शक्ति की पोषणीयता पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया था कि परीक्षण इस सम्बन्ध में नहीं है कि क्या 1963 के अधिनियम में विहित परिसीमा की अवधि समाप्त हो चुकी थी बल्कि धारा 71A के अधीन शक्ति अयुक्तियुक्त विलम्ब के पश्चात् प्रयोग किया जाना इप्सित किया गया था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 13 एवं 14 पर निम्नलिखित रूप से अभिनिर्धारित किया था:–

"13. हम यह धारित कर सकते हैं 7.2.1938 को अभिधृति का अभ्यर्पण एवं 25.2.1938 को वर्तमान अपीलार्थी को भूमियों की बन्दोबस्ती द्रुत अनुक्रम में था एवं इसे अधिनियम द्वारा यथा अभिप्रेत शब्द 'अंतरण' के तात्पर्य के अन्तर्गत एक ही संव्यवहार के भागों के रूप में देखा जा सकता था। यद्यपि, हमारे समक्ष यह स्थापित नहीं किया गया है कि अंतरण अधिनियम के किसी अन्य उपबन्धों के विपरीत था।

14. अब हम श्री नरसिम्हा के अन्तिम तर्क की परीक्षा करेंगे कि अंतरण कपटपूर्ण था। इस पर भी, हम चिंतित है कि अपीलार्थीगण सफल होने के हकदार हैं। हमें संव्यवहार के विवरणों पर विचार करने की जरूरत नहीं है क्योंकि हम यह भी मान सकते हैं कि अंतरण कपटपूर्ण था। तब भी, जैसा कि इब्राहिम पटनम्, (उपर) में अभिनिर्धारित किया गया है, कि धारा 71-A के अधीन शक्ति का प्रयोग मात्र एक युक्तियुक्त अवधि के अंतर्गत ही किया जा सकता था। वर्तमान अपील के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करके हम इस बात से सहमत नहीं है कि विशेष अधिकारी ने धारा 71-A के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग एक युक्तिसंगत अवधि के अंतर्गत किया था। 40 वर्ष व्यतीत होना निश्चित रूप से शक्ति के प्रयोग के लिए एक युक्तिसंगत अवधि नहीं है, यद्यपि इसे परिसीमा की अतिरिक्त संभावना की अवधि को शामिल नहीं किया जाय। हम जय मंगल ओंराव मामले (ऊपर) में इस न्यायालय द्वारा किए गए सम्प्रेक्षणों से समर्थन पाते हैं, वह भी एक ऐसा मामला था जो विधि के उसी उपबन्ध के अंतर्गत उत्पन्न हुआ था। वहाँ इस न्यायालय ने यह दृष्टिकोण अपनाया था कि धारा 46(4)(a), को जो इसमें अभिकथित किसी भी रीति से प्रभावित करने से पहले उपायुक्त की पूर्वानुमति परिकल्पित करता है, मात्र वर्ष 1947 (5.1.1948 से प्रभावी) पुर: स्थापित किया गया था एवं उस सुसंगत अवधि के दौरान ऐसा कोई उपबन्ध विद्यमान नहीं था जब उस मामले में अभ्यर्पण (15.1.1942) को किया गया था। स्पष्टत: इसलिए, 1938 में कोई उपबन्ध विद्यमान नहीं था, एवं यही युक्ति लागू है।''

12. पुन: **2008(1) SCALE पृष्ठ–718** में रिपोर्ट किए गए **फूलचन्द मुंडा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य** के मामले में भी, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एक सदृश मुद्दे पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि C.N.T. अधिनियम की धारा 71-A केवल उसी दशा में लागू हो सकता था जब उपायुक्त यह पाते हैं कि आक्षेपित अंतरण C.N.T. अधिनियम की धारा 46 या किसी अन्य उपबन्ध के उल्लंघन में किया गया था। इसने यह भी अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि उपायुक्त द्वारा C.N.T. अधिनियम की धारा 71-A के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए परिसीमा की अवधि विहित नहीं है, तथापि प्रभावित पक्षकार को समुचित प्राधिकारी से संपर्क करने की अपेक्षा की जाती है या इस शक्ति

को उपायुक्त द्वारा एक युक्तियुक्त अवधि में प्रयोग किया जाना है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह भी निश्चायक रूप से अभिनिर्धारित किया गया है कि C.N.T. अधिनियम की धारा 46 (4)(a) के अधीन अंतरण को प्रभावी बनाने से पूर्व उपायुक्त का पूर्वानुमोदन वर्ष 1947 में ही 5.1.1948 के प्रभाव से पुर:स्थापित किया गया था एवं अभ्यर्पण के सुसंगत समय के दौरान ऐसा कोई उपबन्ध विद्यमान नहीं था जो वर्तमान मामले में 1942 था एवं, इस प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह बिल्कुल ही अनिवार्य नहीं था कि क्या संशोधन द्वारा समाविष्ट धारा 71A प्रश्नगत भूमि के सम्बन्ध में लागू है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विनिर्दिष्ट तौर पर अभिनिर्धारित किया है कि कानूनी प्रावधान, जैसा कि वर्ष 1942 में लागू था, न तो किसी अभिधारी द्वारा अभ्यर्पण से पहले उपायुक्त के पूर्वानुमोदन की अभिप्राप्ति ही अभिकल्पित करता है और न ही सुसंगत समय पर कुछ भी अवैध या अनुचित था, एवं तद्नुसार, उसे सुसंगत समय पर प्रवृत्त कानूनी उपबन्धों के अनुरूप मान्य ही ठहराया गया।

13. तथ्य यही रहता है कि प्रतिकूल कब्जा याचीगण एवं उनके हितबद्ध पूर्वाधिकारियों के पास पिछले पचास वर्षों से रहा है एवं, इस प्रकार, प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से भी, एक अधिकार कब्जा प्रतिधारित करने के लिए उनलोगों के पक्ष में प्रोद्भूत हुआ है। मामले के उपरोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण ने उपरोक्त सुस्थापित विधि का मूल्यांकन करने में त्रुटि कारित की है एवं, इस प्रकार, परिशिष्ट 8, 9 एवं 11 में यथा अंतर्विष्ट क्रमश: S.A.R. केस सं॰ 139 वर्ष 1977-78 में प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा पारित दिनांक 18.4.1980, S.A.R. अपील सं॰ 17R15 वर्ष 1980-81 में प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा पारित 29.9.1981 एवं राजस्व पुनरीक्षण सं॰ 133 वर्ष 1981 में प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा पारित 25.8.1988 के आक्षेपित आदेशों को, किसी गुणागुण से रहित होने के कारण एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है एवं इस प्रकार, रिट आवेदन को अनुज्ञात किया जाता है। लेकिन, व्ययों के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं होगा।

---

ekuuh; je'k dekj ejkfB;k] U;k;efr

राजेन्द्र पण्डित

बनाम

अध्यक्ष-सह-प्रबन्ध निदेशक, कोयला भवन, कोयला नगर, धनबाद के माध्यम से मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड एवं अन्य

द्वितीय अपील सं॰ 322 वर्ष 2005. 24 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

सेवा विधि–जन्म तिथि–कोयला उद्योग के लिए संयुक्त बाईपार्टाइट कमिटी का दिनांक 25.4.1988 का अनुदेश सं॰ 76—किसी कर्मचारी को अपनी सेवा के अंतिम चरण में उम्र/जन्मतिथि के सम्बन्ध में विवाद उत्पन्न करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है–कर्मचारी को मेडिकल बोर्ड के समक्ष स्वयं को पेश करने का अवसर दिया गया था परन्तु उसने इसमें शामिल होने से इन्कार किया–अभिनिर्धारित किया गया, अनुदेश सं॰ 76 ऐसे कर्मचारी के मामले में लागू नहीं है। (पैरा 3 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Kalyan Banerjee, For the Appellant; Mr. A.K. Mehta, For the Respondents.

आदेश

यह अपील अभिधान अपील सं॰ 130 वर्ष 2004 में श्री नागेन्द्र कुमार, अपर जिला न्यायाधीश–XIII, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 30.7.2005 के उस निर्णय एवं डिक्री के विरूद्ध दाखिल की गयी है, जिसमें अभिधान वाद सं॰ 63 वर्ष 2001 में श्री के॰ के॰ शुक्ला, अपर मुंसिफ, द्वितीय धनबाद द्वारा पारित दिनांक 11.8.2004 के निर्णय एवं डिक्री को पुष्ट किया गया था।

2. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने निवेदन किया वाद को 25.4.1988 को निर्गत J.B.C.C.I. के अनुदेश सं॰ 76 के निबन्धनों में मैट्रिक प्रमाण पत्र इत्यादि, में वर्णित जन्म तिथि के आधार पर डिक्री किया जाना चाहिए था।

3. अपीलार्थी ने प्रश्नगत कोलियरी में वर्ष 1969 को नियुक्ति ग्रहण किया था। पदभार ग्रहण करते समय, उसने अपने जन्म-तिथि के तौर पर 8.5.1942 घोषित किया एवं, तद्नुसार यह वैधानिक प्रारूप B रजिस्टर में वर्णित था जो उसके द्वारा सम्पूष्ट किया गया था। अपीलार्थी ने अपनी जन्मतिथि के सम्बन्ध में कोई विवाद खड़ा नहीं किया। वर्ष 1987 में, सेवा उद्धरण अपीलार्थी सहित कर्मचारियों के बीच उसकी सेवा में उक्त जन्म तिथि दर्शाते हुए वितरित किया गया था परन्तु उसने लगभग तेरह वर्षों तक भी कोई विवाद खड़ा नहीं किया एवं तत्पश्चात् सेवा के अंतिम चरण पर उसने वर्ष 2000 में यह दावा करते हुए विवाद खड़ा किया कि मैट्रिक प्रमाण पत्र इत्यादि के अनुसार जन्मतिथि 6.1.1949 के तौर पर संशोधित की जानी चाहिए। उसने मेडिकल बोर्ड में शामिल होने से इनकार किया जब उसे प्रबन्धन द्वारा ऐसा कहा गया था। तब उसने वर्तमान वाद दाखिल किया। निम्नस्थ न्यायालयों ने एक रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी ने अपनी नियुक्ति के समय मैट्रिक प्रमाण पत्र इत्यादि को उपलब्ध नहीं कराया था। इस प्रकार, 25.4.1988 को निर्गत J.B.C.C.I. का उक्त अनुदेश सं॰ 76 वर्तमान मामले में प्रयोज्य नहीं है। निम्नस्थ न्यायालय ने यह भी पाया कि अपीलार्थी ने ऐसा विवाद अपनी सेवा के अंतिम समय पर खड़ा किया था एवं इसलिए, वाद खारिज किया गया था।

4. इसके अतिरिक्त, वाद के लंबित रहने के दौरान, अपीलार्थी ने अपनी जन्म तिथि के संशोधन हेतु एक रिट याचिका W.P. (C) No. 5689 वर्ष 2001 दाखिल किया जिसमें निम्नलिखित आदेश पारित किया गया था:-

> ''यह आवेदन दिनांक 25 अप्रैल, 1988 के कोयला उद्योग हेतु संयुक्त बाईपार्टाइट कमिटी के अनुदेश सं॰ 76 के निबन्धनों में याची के जन्म तिथि को 6 जनवरी, 1949 के तौर पर रिकॉर्ड को संशोधित करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को देने के लिए याची द्वारा दायर की गयी है।
>
> स्वीकार्यत: याची ने कोलियरी की सेवा में 1969 में शामिल हुआ था, जो मेसर्स B.C.C.L. द्वारा वर्ष 1972 को अधिग्रहण किया गया था। उसकी जन्मतिथि वैधानिक प्रारूप B रजिस्टर में अभिलिखित की गयी है।
>
> इन परिस्थितियों में, सेवा कैरियर के अंतिम समय पर, यह न्यायालय जन्म तिथि से सम्बन्धित मुद्दे पर नये सिरे से विचार करने के लिए कोई आदेश पारित करने का इच्छुक नहीं है।
>
> उपरोक्त सम्प्रेक्षणों की दृष्टि में, याची के अधिवक्ता ने अन्य उपचार का लाभ प्राप्त करने के लिए रिट याचिका वापस लेने की अनुमति मांगी जिसपर श्री मेहता को कोई आपत्ति नहीं है।
>
> तद्नुसार, रिट आवेदन वापस लिये जाने के तौर पर खारिज की जाती है।''

5. अपीलार्थी ने उक्त आदेश निम्नस्थ न्यायालय से छिपाया था।

6. अपीलार्थी के अधिवक्ता को सुनने एवं अभिलेखों का अवलोकन करने के बाद, मेरी राय में, इस अपील में विधि का कोई सारभूत प्रश्न अंतग्रस्त नहीं है। तथ्य का सर्वसम्मत निष्कर्ष है एवं यह एक विधिक स्थिति है कि किसी कर्मचारी को अपनी सेवा के अंतिम समय में अपनी उम्र/जन्म तिथि के सम्बन्ध में कोई विवाद खड़ा करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

तद्नुसार, यह द्वितीय अपील खारिज की जाती है। लेकिन, कोई व्यय नहीं।

ekuuh; vthr dekj flUgk] U;k;efr

दारस्तुल खलीफ

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं अन्य

Cr. Appeal (SJ) No. 828 वर्ष 2008. 17 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

(क) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 340 एवं 341—वैधानिक अपील–संहिता की धारा 340 के अधीन जाँच हेतु कोई प्रकीर्ण वाद दाखिल नहीं की गयी थी–संहिता की धारा 341 के अधीन वैधानिक अपील पोषणीय नहीं है। (पैरा 7 एवं 8)

(ख) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 341—वैधानिक अपील–पोषणीयता–दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के अधीन पारित कोई आदेश, संहिता की धारा 341 के अधीन–अपील योग्य एवं पोषणीय है। (पैरा 7 एवं 8)

निर्णयज विधि.–AIR 1982 SC 785; 1997 CrLJ 1543 (Ker.); (2002)1 SCC 253—आश्रित।

अधिवक्तागण.–Mr. Indrajit Sinha, For the Appellant; Mr. Manoj Kumar, For the State.

आदेश

अपीलार्थी ने अभिधान अपील सं॰ 97 वर्ष 2005 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त (त्वरित न्यायालय सं॰ VII) द्वारा पारित दिनांक 11 मार्च, 2008 के आदेश को चुनौती देते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 341 के अधीन वैधानिक अपील दायर किया गया है जिसके माध्यम से प्रतिवादी सं॰ 2 से 6 को उनके नमूना हस्ताक्षर लेने के लिए न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने के लिए निर्देश निर्गतीकरण हेतु 11 जनवरी, 2007 एवं 25 मई, 2007 को दाखिल याचिकायें साथ ही एक प्रकीर्ण वाद प्रारम्भ करने के लिए 20 नवम्बर, 2007 को दाखिल याचिका खारिज की गयी है।

2. इस माननीय न्यायालय ने दिनांक 17 जुलाई, 2008 के आदेश के माध्यम से अभिधान अपील सं॰ 97 वर्ष 2005 में पारित दिनांक 11 मार्च, 2008 के आक्षेपित आदेश के विरूद्ध दाण्डिक अपील की पोषणीयता के सम्बन्ध में कार्यालय से एक रिपोर्ट की मांग की थी। उसके अनुसरण में, दिनांक 28 जुलाई, 2008 एवं 31 जुलाई, 2008 के अपने रिपोर्ट के माध्यम से कार्यालय ने यह राय दी है कि यदि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के अधीन जाँच हेतु किसी याचिका को इनकार एवं/या अनुज्ञात किया जाता है, तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 341 के अधीन कोई अपील पोषणीय होना माना जाता है। उसी समय, कार्यालय ने यह भी रिपोर्ट दिया है कि अपीलार्थी के आवेदन को, जिसे अस्वीकार किया गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के अधीन दायर नहीं किया गया था एवं इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 341 के अधीन दायर अपील पोषणीय नहीं था।

3. मैंने दिनांक 11 मार्च, 2008 के आक्षेपित आदेश का परिशीलन किया है एवं कार्यालय की रिपोर्ट साथ ही विधि के प्रयोज्य उपबन्धों पर भी विचार किया है। यह प्रतीत होता है कि एक प्रकीर्ण वाद हस्ताक्षरों की सत्यता प्रमाणित करने के लिए एवं अभिधान वाद सं॰ 252 वर्ष 2002 में प्रत्यर्थी सं॰ 2 से 6 तक द्वारा वकालतनामा दाखिल किए जाने के बारे में उचित जांच प्रारम्भ करने के लिए दाखिल किया गया था। अभिकथन यह था कि यह जाली एवं मनगढ़ंत था। विद्वान विचारण न्यायालय ने सामग्रियों पर विचार करके एवं अभिलेख का परिशीलन करके यह राय दी कि उक्त अभिधान वाद में वकालतनामा 24 फरवरी, 2003 को दाखिल किया गया था एवं प्रत्यर्थी सं॰ 2 से 6 ने अपील में अपने-अपने वकालतनामा 2 मार्च, 2006 अर्थात् तीन वर्षों के अंतराल के पश्चात् दाखिल किया था

एवं, इस प्रकार, प्रत्यर्थी 2 से 6 के हस्ताक्षरों में कुछ भिन्नता का एक अवसर था। यह भी राय दिया गया था कि इस सम्बन्ध में कोई कारण या आधार नहीं था कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 से 6 के वकालतनामा पर क्यों अन्य लोग हस्ताक्षर करेंगे। उक्त पृष्ठभूमि में, प्रतिवादी सं॰ 2 से 6 को अपने-अपने हस्ताक्षर देने के लिए न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने के निर्देश निर्गतीकरण का प्रार्थना एवं जाँच हेतु एक विविध मामला प्रारम्भ करने के लिए 20 नवम्बर, 2007 को दाखिल याचिका को अस्वीकार किये गये थे।

4. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 की उप-धारा (1) या उप-धारा (2) के अधीन परिवाद दाखिल करने के लिए आवेदन अस्वीकृत किए जाने की दशा में दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 341 के अधीन यथा उपबंधित वैधानिक अपील के अधिकार के सम्बन्ध में कोई विवाद नहीं है।

5. कोई व्यक्ति दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के अधीन या तो परिवाद दाखिल करने से इनकार करने या परिवाद दाखिल करने वाले किसी आदेश से व्यथित होकर उस न्यायालय में अपील दायर कर सकता है, जिसका, आदेश पारित करने वाला न्यायालय अधीनस्थ है। इस प्रकार, दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के अधीन आवेदन खारिज करने वाले आदेश के विरूद्ध पुनरीक्षण दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 341 (2) के अधीन यथा उपबन्धित वर्जन के कारण पोषणीय नहीं है। इसी प्रकार, यदि अपीलीय न्यायालय द्वारा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 341 के अधीन कोई आदेश पारित किया जाता है तो यह उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण योग्य नहीं है। यद्यपि, उच्च न्यायालय किसी समुचित मामले में दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अपनी अंतर्निहित शक्ति का अवलम्ब ले सकता है, जिसे, तद्नुसार, **A.I.R. 1982 SC पृष्ठ-785** में रिपोर्ट किए गए **ललित मोहन बनाम बिनयेन्द्र नाथ** के मामले में मान्य ठहराया गया है। इसी प्रकार जब अपील में चुनौती दिया गया आदेश ऐसा आदेश है जो अधीनस्थ न्यायालय द्वारा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के अधीन सम्बन्धित प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट न्यायालय को एक परिवाद दर्ज किए जाने का निर्देश देते हुए पारित किया गया है, तब दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 195 की उप-धारा (4) के पहले भाग एवं सह-पठित दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 341 की दृष्टि में, अपील जिला न्यायालय में होगा एवं इस प्रकार, ऐसे मामलों में उच्च न्यायालय में प्रस्तुत सीधे तौर पर अपील पोषणीय नहीं है। माननीय केरल उच्च न्यायालय ने **जोस जोसेफ बनाम सिंडिकेट बैंक, श्रीकानापुरम** के **1997 Cr. L.J. पृष्ठ-1543 (केरल)** में रिपोर्ट किए गए एक सदृश मामले में अपील को जिला न्यायालय में प्रस्तुतीकरण हेतु दाखिलकर्ता अधिवक्ता को लौटाने का निर्देश दिया था।

6. माननीय सर्वोच्च न्यायालय को **(2002)1 SCC पृष्ठ-253** में रिपोर्ट किए गए, **प्रीतिश बनाम महाराष्ट्र राज्य** के मामले में एक सदृश मामले पर विचार करने का एक अवसर हुआ था, जिसमें, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यह न्यायालय पर है कि वह न्याय के हित में समीचिनता का प्रश्न विनिश्चित करने के क्रम में एक प्रारम्भिक जाँच कराये एवं पैरा 14 पर निम्नलिखित रूप से अभिनिर्धारित किया:-

> ''संहिता की धारा 341 उस पक्षकार को, जिसके आवेदन पर न्यायालय ने परिवाद करने या न करने का विनिश्चिय किया है साथ ही उस पक्षकार को, जिसके विरूद्ध ऐसा परिवाद करने का विनिश्चिय किया गया है, उस न्यायालय में एक अपील दाखिल करने की शक्ति प्रदान करता है जिसका पूर्ववर्ती न्यायालय अधीनस्थ है। परन्तु मात्र यह तथ्य कि ऐसे अपील का प्रावधान किया गया है, यह निष्कर्ष निकालने का आधार नहीं है कि न्यायालय (उन व्यक्तियों को जिनके विरूद्ध परिवाद दाखिल किया जाएगा) परिवाद दाखिल किए जाने से पहले सुनवाई का एक अवसर प्रदान करने को बाध्य है। इन निष्कर्षों पर आने के लिए संहिता में अन्य प्रावधान भी हैं कि क्या किसी व्यक्ति को दाण्डिक कार्यवाहियों में एक अभियुक्त के तौर पर पंक्ति में रखा जाना चाहिए या नहीं, परन्तु उन कार्यवाहियों में से अधिकतर में न्यायालय या सम्बन्धित प्राधिकारीगण पर, संभावित अभियुक्त को सुनवायी का एक अवसर प्रदान करने की कोई विधिक बाध्यता नहीं है। किसी भी स्थिति में, अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दाखिल करके संहिता

की धारा 341 के उपबन्धों के अवसर का लाभ पहले ही प्राप्त कर चुका है, जैसा कि पूर्व में कथित किया गया है।''

7. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के अधीन पारित किसी आदेश के विरूद्ध उस न्यायालय में अपील करने का प्रावधान दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 341 में किया गया है जिसका पूर्ववर्ती न्यायालय अधीनस्थ है।

8. यद्यपि, वर्तमान मामले में, मुद्दा भिन्न है क्योंकि न तो दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के अधीन जाँच के लिए प्रकीर्ण वाद ही दाखिल किया गया था और न ही अस्वीकृति का दिनांक 11 मार्च, 2008 का आक्षेपित आदेश ही दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के अधीन पारित किया गया है एवं, इसलिए दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 341 के अधीन दायर की गयी वर्तमान वैधानिक अपील अन्यथा भी पोषणीय नहीं है। उपरोक्त पृष्ठभूमि में, दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 341 के अधीन अपील पोषणीय न होने के कारण अस्वीकृत की जाती है। लेकिन, यह आदेश विधि में यथा उपबंधित किसी समुचित उपचार का अवलम्ब अपीलार्थी को लेने से वर्जन नहीं करेगा। व्ययों के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं होगा।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

दीपक चौरसिया @ दीपक कुमार चौरसिया

बनाम

झारखण्ड राज्य

ए॰ बी॰ ए॰ सं॰ 1173 वर्ष 2008. 20 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 438—अग्रिम जमानत–यह अभिवाक् की भारतीय दण्ड संहिता एवं भारतीय वन अधिनियम के अधीन कोई अपराध आकर्षित नहीं होता और अधिक से अधिक केवल M.M.R.D. अधिनियम की धारा 21 के अधीन अपराध, जो जमानती है, आकर्षित होता है–जब याची द्वारा नियमित जमानत के लिए एक आवेदन दाखिल किया जाता है तो अधीनस्थ न्यायालय को मामले के इस पहलु पर विचार करने का निर्देश दिया गया। (पैरा 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Ananda Sen, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 379/411/34, भारतीय वन अधिनियम की धाराएँ 26/33 एवं M.M.R.D. अधिनियम की धारा 21 के अधीन गुआ पुलिस थाना केस संख्या 7 वर्ष 2008 में याची को अपनी गिरफ्तारी की आशंका है।

3. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अभियोजन मामले के अनुसार, जब दो डम्परों को लौह-अयस्क का वहन करते हुए पाया गया था तो, इसे पुलिस कर्मियों द्वारा रोका गया था। तदुपरि, इसके अधिभोगियों ने भागना प्रारंभ कर दिया, परन्तु चालक को रोक लिया गया, जिसने प्रकट किया कि इस याची के कहने पर, वाहनों पर लौह-अयस्क लादे गए थे और, इसलिए, भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 379/411/34 के अधीन और साथ-साथ भारतीय वन अधिनियम की धाराएँ 26/33 के अधीन और M.M.R.D. अधिनियम की धारा 21 के अधीन भी मामला संस्थित किया गया, परन्तु अगर, प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए समूचे आरोप को सत्य मान भी लिया जाता है तो भी, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 379 या 411 के अधीन कोई अपराध नहीं बनता है। इसके अतिरिक्त, यह भी निवेदन किया गया कि भारतीय वन अधिनियम की धारा 21 के

अधीन भी कोई अपराध नहीं बनेगा क्योंकि ऐसा कोई मामला नहीं है कि लौह-अयस्क को वन क्षेत्र से निकाला गया है और अगर कोई अपराध बनता है तो वह M.M.R.D. की धारा 21 के अधीन बनता है जो जमानती है और M.M.R.D. अधिनियम की धारा 21 के अधीन एक मामला संस्थित करने के लिए किसी को एक परिवाद दाखिल करने की आवश्यकता होती है।

4. यद्यपि, राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अभियोजन मामले के अनुसार, याची के कहने पर लौह-अयस्क का वहन किया जा रहा था।

5. मामले के तथ्यों पर एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मैं इसे अग्रिम जमानत के लिए एक उपयुक्त मामला नहीं समझता और इसलिए अग्रिम जमानत के लिए याची की प्रार्थना एतद् द्वारा खारिज की जाती है।

6. तथापि, अगर याची आत्म-समर्पण करता है और नियमित जमानत के लिए प्रार्थना करता है तो इस न्यायालय को इस आदेश द्वारा पूर्वाग्रहित हुए बगैर भारतीय दण्ड संहिता के अधीन अपराधों और भारतीय वन अधिनियम के अधीन भी अपराधों के आकर्षित न होने के संबंध में निवेदन और इस निवेदन को ध्यान में रखते हुए कि अभिकथन केवल M.M.R.D. अधिनियम की धारा 21 के अधीन अपराध, जो जमानती है, का गठन करते हैं, इसका निस्तारण किया जा सकता है।

---

ekuuh; vthr d|ekj flUgk] U;k;efr

बिशपका स्कूल, राँची एवं एक अन्य

बनाम

बिहार राज्य (अब झारखण्ड) एवं अन्य

सी० डब्ल्यू० जे० सी० सं० 1339 वर्ष 1998 (आर०). 25 सितम्बर, 2008 को विनिश्चित।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

(क) कारखाना अधिनियम, 1948—धारा 85—अधिसूचना–विद्यालय को एक कारखाने के तौर पर विचारण–''कारखाना'' को परिभाषित करने वाले सांविधिक प्रावधान में धारा 85 की परिधि को आगे विस्तार नहीं किया जा सकता। (पैरा 8 एवं 9)

(ख) कारखाना अधिनियम, 1948—धारा 2(m) 'कारखाना'–एक विद्यालय को कारखाना की परिभाषा के अधीन आच्छादित होने के लिए एक विनिर्माण प्रक्रिया में अंतर्ग्रत नहीं बताया जा सकता। (पैरा 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Satish Bakshi, For the Petitioner; Mr. Siddharth, For the State.

अजीत कुमार सिन्हा, न्यायमूर्ति.–प्रत्यर्थी संख्या 2 कारखाना निरीक्षक, सर्किल संख्या 2, डोरांडा, राँची द्वारा निर्गत, दिनांक 17/18.3.1998 एवं 28.4.1998 की उन नोटिसों को निरस्त करने के लिए उत्प्रेषण की प्रकृति का एक यथोचित रिट, आदेश या निर्देश निर्गत करने हेतु वर्तमान रिट याचिका को दाखिल किया गया है, जिसके द्वारा उसने याची संख्या 2, अर्थात्, रिचड इयान थार्टन, प्राचार्य बिशप स्कूल, पुरानी हजारीबाग रोड, राँची और याची संख्या 1 के अध्यक्ष फादर जेड० ए० थेरॉम को भी सम्मन किया है, और कारखाना अधिनियम, 1948 एवं बिहार कारखाना नियमावली, 1950 के प्रावधानों के अधीन विद्यालय को पंजीकृत कराने और उक्त अधिनियम और नियमावली के विभिन्न प्रावधानों का अनुपालन करने का भी उन्हें निर्देश दिया है।

2. अभिनिर्धारण के लिए याचीगण द्वारा उठाया गया मुख्य मुद्दा यह है कि क्या आक्षेपित नोटिस प्रथम द्रष्टया अवैधानिक, मनमाना और प्रतिशोधात्मक है। याचीगण ने प्रत्यर्थी संख्या 3 के विरूद्ध दुर्भावना भी अभिकथित किया है, क्योंकि उनके अनुसार वह शत्रुतापूर्ण और क्रुद्ध हो गया था क्योंकि याचीगण द्वारा उसकी पुत्री की प्रवेश के आग्रह को स्वीकार नहीं किया गया था।

3. याचीगण के अनुसार, कारखाना अधिनियम के अधीन पंजीकरण के लिए नोटिस मात्र इस आधार पर निर्गत की गई थी कि विद्यालय में एक generator था, जिसे लोड-शेडिंग के समय इस्तेमाल किया जा रहा था और, इस प्रकार, यह कारखाना अधिनियम के प्रावधानों के अधीन आच्छादित था।

4. प्रत्यर्थीगण ने अपने प्रति शपथपत्र में कारखाना अधिनियम की धारा 85 के अधीन निर्गत एक अधिसूचना पर भरोसा किया है, जिसे निम्नांकित रूप से उत्कथित किया गया है:–

"85. **कतिपय परिसरों पर अधिनियम को लागू करने की शक्ति.**-(1) राज्य सरकार अधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा घोषित कर सकती है कि इस अधिनियम का कोई या सभी प्रावधान किसी ऐसी जगह पर लागू होंगे जहाँ विद्युत की सहायता से या इसके बिना विनिर्माण प्रक्रिया चल रही है या सामान्य रूप से ऐसा किया जाता हो बावजूद इसके कि-

(i) उसमें नियोजित व्यक्तियों की संख्या दस से कम हो, अगर विद्युत की सहायता से कार्य कर रहे हों और बीस से कम हो अगर विद्युत की सहायता के बिना कार्य कर रहे हों, या

(ii) उसमें कार्य कर रहे व्यक्ति उसके मालिक द्वारा नियोजित नहीं हो परन्तु ऐसी मालिक की सहमति से या उसके साथ किसी समझौते के अधीन कार्य कर रहे हों:

परन्तु यह कि विनिर्माण प्रक्रिया मालिक द्वारा केवल अपने परिवार की सहायता से नहीं चलाई जा रही हो।

(2) एक स्थान को ऐसा घोषित करने के उपरांत इसे इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए एक कारखाना माना जाएगा और मालिक को अधिभोगी और उसमें कार्यरत किसी व्यक्ति को एक कर्मकार माना जाएगा।

स्पष्टीकरण.–इस धारा के प्रयोजन के लिए 'मालिक' से परिसर का कब्जा रखने वाला एक पट्टेदार या बंधकदार भी शामिल होगा।''

धारा 83 एक सक्षमकारी प्रावधान है जिसके अधीन अधिनियम के किसी प्रावधान के लागू करने के लिए अधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना निर्गत की जा सकती है। परन्तु यह ऐसे स्थान पर लागू होती है जहाँ विनिर्माण प्रक्रिया विद्युत या विद्युत की सहायता के बिना चलती हो, अन्य शर्तों के अध्यधीन रहते हुए कि वहाँ कम-से-कम दस कर्मचारी होने चाहिए इत्यादि। इस प्रकार, धारा 85 के अधीन एक अधिसूचना दो अनिवार्य अपेक्षाओं पर निर्भरशील है, अर्थात्, इसे अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार होना है और दूसरा यह केवल उसी स्थान पर लागू हो सकता है। जहाँ विनिर्माण प्रक्रिया चल रही हो।

5. याचीगण का तर्क यह है कि अधिनियम की धारा 85 के अधीन एस॰ ओ॰ संख्या 131, दिनांक 24 जनवरी, 1985 राज्य के ट्रान्स्फार्मरों द्वारा स्थानान्तरण को अपवर्जित करते हुए विद्युत के उत्पादन और सम्परिवर्तन के संबंध में है, जैसा कि अनुसूची Y के खण्ड 7 में प्रावधान किया गया है।

6. धारा 2(m) के अधीन ''कारखाना'' को कारखाना अधिनियम, 1948 के अधीन परिभाषित किया गया है और उसे नीचे उत्कर्षित किया गया है।

''2. **व्याख्या**''

xxx xxx xxx

(m) 'कारखाना' का अर्थ किसी अहाते से है, जिसमें उसकी प्रसीमा सम्मिलित है–

(i) जहाँ दस या दस से अधिक कर्मकार कार्य कर रहे हो या पिछले बारह महीनों में से किसी दिन कार्य कर रहे थे और जिसके किसी भाग में विद्युत की सहायता से एक विनिर्माण प्रक्रिया चलती हो या सामान्यत: ऐसा किया जाता हो, या

(ii) जहाँ बीस या इससे अधिक कर्मकार कार्य कर रहे हो या पिछले बारह महीनों में किसी दिन कार्य कर रहे थे और जिसके किसी भाग में विद्युत की सहायता के बिना एक विनिर्माण प्रक्रिया चल रही हो या सामान्यत: ऐसा किया जाता हो परन्तु [खान अधिनियम, 1952 (35 वर्ष 1952) की प्रभाविता के अध्यधीन रहते हुए एक खान या संघ की सशस्त्र सेनाओं की एक स्थल इकाई, एक रेलवे चलायमान शेड या एक होटल, रेस्तरॉ या भोजन करने के स्थान को शामिल नहीं करता;

स्पष्टीकरण I.—इस खण्ड के प्रयोजनों के लिए कर्मकारों की संख्या का परिकलन करने के लिए (विभिन्न समूहों एवं रिले) एक दिन के सभी कर्मकारों की गणना की जाएगी।

स्पष्टीकरण II.— इस खण्ड के प्रयोजनों के लिए मात्र यह तथ्य कि किसी परिसर या इसके किसी भाग में एक इलेक्ट्रॉनिक डाटा प्रोसेसिंग यूनिट है एक कम्प्युटर ईकाई को स्थापित किए जाने से इसका अर्थान्वयन करके इसे एक कारखाना नहीं माना जाएगा अगर ऐसे परिसर या इसके किसी भाग में कोई विनिर्माण प्रक्रिया चलाई नहीं जा रही है।''

यह एक समावेशी परिभाषा है। तथापि, धारा 2(m) के अधीन सांविधिक अपेक्षा के अनुसार परिसर में केवल एक ऐसा परिसर शामिल होगा जहाँ विनिर्माण प्रक्रिया विद्युत की सहायता से चल रही हो। इसके अतिरिक्त, कारखाना अधिनियम, 1948 की धारा 2(k) के अधीन विनिर्माण प्रक्रिया परिभाषित की गई है और इसे नीचे उत्कथित किया गया है:

"2(k) ''विनिर्माण प्रक्रिया'' का अर्थ निम्न को करने के लिए किसी प्रक्रिया से है–

(i) किसी वस्तु या पदार्थ को इसकी बिक्री, उपयोग, परिवहन, प्रदाय या निस्तारण को दृष्टिगत रखते हुए इसको बनाना, परिवर्तित करना, मरम्मत करना, सजाना, अन्तिम रूप देना पैक करना, चिकनाई करना, धोबन कार्य करना, सफाई करना, टुकड़ो में बाँटना, ध्वस्त करना या अन्यथा इसे इस्तेमाल में लाना या इसके अनुकूल बनाना, या

(ii) तेल, जल, मल या किसी अन्य पदार्थ को बाहर निकालना, या

(iii) विद्युत का उत्पादन, रूपान्तरण या पोषण करना; या

(iv) मुद्रण के लिए टाईप तैयार करना, लेटर प्रेस द्वारा मुद्रण, शिला मुद्रण photogravure या इसी प्रकार के अन्य प्रक्रिया या जिल्दसाजी करना; या

(v) पोतो या जलयानों का निर्माण, पुनर्निमाण, मरम्मत, पुन: समायोजन करना, अन्तिम रूप देना या टुकड़ो में बाँटना; या

(vi) शीतागार में किसी सामान का परिरक्षण या भण्डारण करना।''

7. यह परिभाषा किसी भी प्रकार की कल्पना के विस्तार से विद्यालय को सम्मिलित नहीं करेगी। धारा 2(f) के अधीन यथा प्रावधान की गई 'कर्मकार' की परिभाषा के अनुसार भी, एक कर्मकार का किसी विनिर्माण प्रक्रिया में नियोजित एक व्यक्ति से है और अन्यथा नहीं।

8. पूर्वोक्त संविधिक प्रावधानों को पढ़ने पर यह स्पष्ट है कि पंजीकरण के प्रयोजनों के लिए कारखाना अधिनियम के प्रावधानों का आलम्ब लेने हेतु यह अनिवार्यत: है कि प्रश्नाधीन परिसर में एक विनिर्माण ईकाई प्रक्रिया चलती हो और जबतक कि परिसर का इस्तेमाल विनिर्माण प्रक्रिया के लिए नहीं किया जाता हो, कारखाना अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होंगे। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी तर्क दिया गया है कि उनके विद्यालय को एकमात्र निशाना बनाया गया है, क्योंकि किसी भी अन्य विद्यालय को कारखाना अधिनियम के अधीन पंजीकृत कराने के लिए नहीं कहा गया है और, इस प्रकार, प्रत्यर्थीगण की आक्षेपित कार्रवाई मनमानी और अवैधानिक होने के अतिरिक्त भेदभावपूर्ण और दुष्प्रेरित है।

9. यह सुस्थापित है कि कारखाना अधिनियम की धारा 85 के अधीन इस प्रकार निर्गत अधिसूचना उस मुख्य संविधिक प्रावधान की परिधि के आगे नहीं जा सकती जिसके अधीन यह

अधिसूचित की गई है, अन्यथा यह अवैधानिक करार दी जाएगी और किसी प्राधिकार एवं अधिकारिता से रहित होगी। किसी भी स्थिति में, एक अधिसूचना को मुख्य संविधि के प्रावधानों के अनुकुल होना है। एक विद्यालय को एक विनिर्माण प्रक्रिया में शामिल नहीं कहा जा सकता जिससे कि कारखाना अधिनियम की धारा 2(m) के अधीन यथा प्रावधान की गई परिभाषा के अधीन वह आच्छादित हो।

10. पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, यह रिट याचिका अनुज्ञात किया जाता है और तद्नुसार, 'प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा निर्गत दिनांक 17/18.3.1998 और 24.4.1998 की आक्षेपित नोटिसें निरस्त की जाती है। तथापि, व्ययों को लेकर कोई आदेश नहीं होगा।

---

ekuuh; ,eñ okbñ bdcky ,o Mhñ dñ fIUgk] U;k;efrlx.k

सईदुर रहमान

बनाम

नौशाबा शाहीन

एफ० ए० सं० 464 वर्ष 2006. 16 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

अभिभावक एवं प्रतिपालन अधिनियम, 1890—धारा 17—एक अवयस्क बालक की अभिरक्षा–बच्चे को न्यायालय के समक्ष पेश किया गया–न्यायालय के समक्ष कहा कि वह अपनी माता के साथ प्रसन्न है–अपने पिता के साथ नहीं जाना चाहता जो कुवैत में रहता है क्योंकि उसने अपने पिता को कभी नहीं देखा है–पिता ने दूसरी महिला के साथ निकटता स्थापित की और उस महिला के साथ दूसरा विवाह किया–पिता ने न अपना तलाक शुदा पत्नी और न हीं अपने बच्चे को कोई वित्तीय सहायता प्रदान की–बच्चे की अभिरक्षा को बच्चे की माता के साथ बने रहने का आदेश दिया गया। (पैरा 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Awadhesh Pandey, For the Appellant(s).

आदेश

हमने दाखिला करने के चरण में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. गारजियनशीप केस संख्या 18 वर्ष 2004 में प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, राँची द्वारा पारित दिनांक 27.5.2006 के निर्णय एवं डिक्री के विरूद्ध यह अपील निर्दिष्ट है, जिसके द्वारा विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा उसके अवयस्क पुत्र को अभिभावक के तौर पर उसकी नियुक्ति के लिए अपनी पत्नी, प्रत्यर्थी के विरूद्ध दाखिल आवेदन को खारिज कर दिया था।

3. जो तथ्य विवादित नहीं है, वो ये हैं कि दोनों पक्ष मुसलमान हैं और मुस्लिम पर्सनल विधि द्वारा नियंत्रित होते हैं। अपीलार्थी का 1997 में प्रत्यर्थी के साथ विवाह हुआ था और उनके विवाहबंधन में एक पुरूष संतान, अर्थात, शांद-बिन-सईद का 1998 में जन्म हुआ था। चूंकि दोनों पक्षों के बीच संबंध सामान्य नहीं रहे, इस कारण से अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को 4.11.1998 को तलाक दे दिया।

4. अपीलार्थी का मामला यह था कि प्रत्यर्थी बेरोजगार है और अपने सेवानिवृत्त पिता के घर में रह रही है। वित्तीय कठिनाइयों के कारण प्रत्यर्थी अवयस्क बालक को बेहतर भोजन, कपड़े, किताबें और शैक्षणिक सुविधाएं उपलब्ध कराने में असमर्थ है। अपीलार्थी कुवैत में रह रहा है और अपने अवयस्क पुत्र को एक आवासीय विद्यालय में प्रवेश दिलाकर उसे अच्छी शिक्षा प्राप्त कराना चाहता है। प्रत्यर्थी द्वारा उक्त आवेदन का विभिन्न आधारों पर विरोध किया गया था।

अधीनस्थ न्यायालय ने पक्षों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार करके निम्नांकित निष्कर्ष अभिलिखित किया:–

''मामले में अंतर्ग्रस्त विधि की उपरोक्त व्याख्या करने पर मैं पाता हूँ कि एक मुस्लिम पिता को अपने बच्चे की अभिरक्षा के मामले में वरीयता प्राप्त है। जबतक कि उसे न्यायालय द्वारा अयोग्य नहीं पाया जाए। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य स्पष्टतया दर्शाता है कि बच्चे का जन्म अप्रैल, 1998 में हुआ था और उस समय वादी भारत में उपस्थित था। बच्चे के बारे में सूचना मिलने पर भी उसने नवजात शिशु को देखने या बच्चे के प्रसव खर्च देने का प्रयत्न नहीं किया। अगर यह मान भी लिया जाए कि वह प्रसव के समय कुवैत में था तो भी उसने नवजात शिशु के लिए बधाई का कोई पत्र या कोई उपहार या सामान नहीं भेजा यद्यपि एक पिता से यह अपेक्षित होता है कि अपनी पहली संतान के प्रति अपने स्नेह और प्रेम को दर्शाने के लिए उसे वह उपहार एवं खिलौने प्रदान करे। जो एकमात्र साक्ष्य वादी की ओर से रखा गया है वह यह है कि वह प्रतिवादी से अधिक आय अर्जित कर रहा है और शिक्षा एवं उत्तम परिवेश देने की बेहतर स्थिति में है। तथापि, यह तथ्य रह जाता है कि प्रतिवादी के परिवार के सदस्यों वादी के परिवार की तुलना में अधिक संस्कारी और शिक्षित है। यहाँ तक कि स्वयं वादी एक क्रीड़ा शिक्षक है। जबकि स्वयं प्रतिवादी छात्रों को निजी तौर पर, ट्यूशन देने के अतिरिक्त, एक विद्यालय में पढ़ाती है। यह भी स्पष्टतः दर्शाता है कि वह भी अपनी क्षमता के अनुसार अपने पुत्र को शिक्षा प्रदान कर रही है। अपने बच्चे को सर्वोत्तम शिक्षा देने का उसका संकल्प इस तथ्य से प्रदर्शित होता है कि उसने उसे संत थॉमस स्कूल, राँची में प्रवेश दिलाया है, जो निस्संदेह राज्य के सर्वश्रेष्ठ विद्यालयों में से एक है। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य यह भी दर्शाता है कि वादी या उसके परिवार से किसी सहायता के बगैर अकेले प्रतिवादी द्वारा बच्चे की शिक्षा का भार वहन किया जा रहा है। इससे भी बढ़कर, इस तथ्य की अनदेखी नहीं की जा सकती कि 8 वर्ष पहले बच्चे के जन्म के समय से, न वादी ने और न ही उसके परिवार के किसी सदस्य ने, बच्चे को देखने का प्रयास किया या बच्चे के प्रति अपना लगाव प्रदर्शित करने के लिए कोई सामान दिया। आज तक, वादी द्वारा एक पैसा भी नहीं दिया गया है और उसने बच्चे को उसकी माता की दया पर छोड़ दिया है जिसने अपने क्षमता एवं संसाधनों के मुताबिक उसका पालन-पोषन किया है। विद्यालय प्रमाण-पत्र और केयर (Care) ऐसे विभिन्न संगठनों द्वारा प्रदान किए गया प्रमाण-पत्र दर्शाते हैं कि उसकी माता ने उसे न केवल सर्वोत्तम शिक्षा प्रदान की है बल्कि अपनी उम्र के बच्चों के साथ मुकाबला करने की शक्ति एवं सामर्थ्य भी प्रदान किया है और इसमें कोई संदेह नहीं है कि उसने उत्कृष्ट प्रदर्शन किया है।

दूसरी ओर, वादी ने, कुवैत में रहते समय एक अन्य स्त्री से निकटता स्थापित किया जिसके साथ उसने बाद में दूसरा विवाह किया। इसलिए, वादी का आचरण बेदाग नहीं है। उसने कभी अपने बच्चे की चिन्ता नहीं की और अपनी दूसरी पत्नी के साथ कुवैत में मौज-मौस्ती करता रहा जिसके साथ उसने दूसरा विवाह किया और अब वह दावा करता है कि बच्चे का भलाई सौतेली माँ की अभिरक्षा में सुरक्षित रहेगा।

बच्चे को न्यायालय के समक्ष पेश किया गया था और मैंने किसी भी पक्ष की मौजूदगी के बगैर उससे एकान्त में वार्तालाप किया था। मैंने बच्चे को स्वस्थ और तीव्र बुद्धि का पाया। वह अपने माता की अभिरक्षा और घर के परिवेश में प्रसन्न प्रतीत हुआ जहाँ उसे अपने नानी और मामा लोगों का स्नेह एवं प्रेम मिलता है। जब मैंने उसे बताया कि उसके पिता उसकी अभिरक्षा चाहते हैं और उसकी बेहतर शिक्षा और कल्याण के लिए कुवैत ले जाना चाहते हैं तो बच्चा सदमे और आघात की स्थिति में प्रतीत हुआ। उसने अभिवाक् करना प्रारम्भ किया कि उसने अपने पिता को कभी नहीं देखा था और उसे उसकी माता के साथ से वंचित नहीं किया जाना चाहिए जिससे उसे इतना अधिक लगाव है कि वह उसे किसी भी कीमत पर छोड़ने के लिए तैयार नहीं है।

बच्चे के एक अभिभावक की नियुक्ति के मामले में न्यायालय के लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण बच्चे का कल्याण देखना होता है। जैसा की ऊपर परिचर्चा की गई है। मैं पाता हूँ कि वादी बच्चे के अभिभावक के तौर पर नियुक्त किए जाने और उसकी अभिरक्षा प्राप्त करने के लिए अयोग्य है। बच्चे का पालन-पोषण एक स्वस्थ वातावरण में हो रहा है और उसे उपयुक्त प्रशिक्षण एवं शिक्षा दी जा रही है ताकि वह समाज का एक अच्छा नागरिक बन सके। अगर उसकी अभिरक्षा बलपूर्वक उसके पिता को सौंप दी जाती है तो वह सदमे और आघात में जा सकता है जिससे वह संभवत: कभी उबर न पाए और उसका भविष्य खतरे में पड़ जाएगा। मुझे यह अवधारित करने में कोई संकोच नहीं है कि वादी अवयस्क शांद-बिन-सईद @ असदुर रहमान के अभिभावक के तौर पर नियुक्त किए जाने और उसकी अभिरक्षा प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है।

5. बहस के अनुक्रम में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता इस तथ्य को विवादित नहीं किया कि अपीलार्थी ने कुवैत में रहने के दौरान एक अन्य महिला के साथ निकटता स्थापित की और बाद में उसके साथ दूसरा विवाह रचाया। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी विवादित नहीं किया गया है कि बच्चे के जन्म के समय से अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी या बच्चे को किसी प्रकार की वित्तीय सहायता प्रदान नहीं की है।

6. हमारे सुविचारित मत में, अधीनस्थ न्यायालय ने अवयस्क अभिभावक के तौर पर नियुक्त किए जाने के लिए अपीलार्थी द्वारा दाखिल आवेदन को उचित रूप से खारिज कर दिया।

7. इस अपील में कोई गुण नहीं है और तद्नुसार खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

देयनत हुसैन एवं अन्य

बनाम

सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार के माध्यम से झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2365 वर्ष 2007. 24 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

झारखंड प्राथमिक शिक्षक नियुक्ति नियमावली, 2002—नियुक्ति–प्राथमिक शिक्षक–नयी नियमावली द्वारा वांछित योग्यता के तौर पर दो वर्षों के शिक्षक प्रशिक्षण अथवा समकक्ष प्रशिक्षण सहित इंटरमीडिएट या समकक्ष परीक्षा/B.El. Ed/B.Ed शारीरिक शिक्षकों के लिए द्विवर्षीय C.P.Ed. नियत की गयी है–नियुक्ति का कोई भी दावा अवधार्य नहीं है क्योंकि नियुक्ति की प्रक्रिया समाप्त हो चुकी है एवं अब नया विज्ञापन निर्गत किया गया है।

(पैरा 7 एवं 8)

निर्णयज विधि.–S.L.P. (Civil) No. 23187/96 CWJC No. 13246/03—चर्चा की गई।

अधिवक्तागण.–Mr. Rajiv Ranjan, For the Petitioners; Mr. P. Modi, For the State; Mr. S.K. Tiwary, For the Intervener.

आदेश

यह रिट आवेदन याचीगण के मामले पर विचार करने का निर्देश प्राधिकारीगण को देने के लिए दाखिल की गयी है, जिनमें से सभी नंद **किशोर ओझा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य (C.W.J.C. No. 13246 वर्ष 2003)** के मामले में धारित निर्णय के आलोक में प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों के पद पर एक दशक से अधिक समय से अपनी-अपनी नियुक्तियाँ की प्रतीक्षा कर रहे सभी प्रशिक्षित शिक्षक हैं।

2. याचीगण का मामला यह है कि 1988 से पहले, बिहार राज्य में शिक्षकों के पद पर सभी नियुक्तियाँ सभी प्रशिक्षित शिक्षकों के लिए जिलावार तैयार एक पैनल के आधार पर की जा रही थी

परन्तु वर्ष 1991 में बिहार सरकार ने दिनांक 5.3.1991 की अधिसूचना निर्गत करके वर्तमान नियम को समाप्त कर दिया जिसमें शिक्षकों के पद पर नियुक्ति हेतु प्रशिक्षण की पात्रता को अभिमुक्ति प्रदान किया गया एवं तद्नुसार, प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों के पद पर नियुक्तियाँ हेतु अप्रशिक्षित शिक्षकों से भी आवेदन आमंत्रित किया।

3. प्रशिक्षण योग्यता रखने वाले व्यक्तियों में से कुछ ने, उस निर्णय से क्षुब्ध होकर, बिहार लोक सेवा आयोग की चयन प्रक्रिया को इस आधार पर आलोचना करते हुए पटना उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट आवेदन दाखिल किया कि जिलावार चयन का निर्णय उचित नहीं है एवं न्यायालय ने इस निवेदन को स्वीकार करके यह अभिनिर्धारित किया कि पात्र अभ्यार्थियों को सहायक शिक्षकों की किसी एक अथवा अन्य जिला संवर्ग में नियुक्ति हेतु विचारण का अधिकार है एवं राज्य किसी व्यक्ति को किसी विशेष संवर्ग हेतु उसके आवेदन तक सीमित करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता था। परन्तु पटना उच्च न्यायालय ने चयन की प्रक्रिया को अपास्त नहीं किया था। बाद में उसी आधार पर नियुक्तियाँ की गयी। यद्यपि, उक्त निर्णय को S.L.P. (सिविल) सं॰ 23187 वर्ष 1996 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी थी जिसमें यह तथ्य रखा गया था कि प्राथमिक विद्यालय में शिक्षकों की नियुक्तियाँ हेतु विज्ञापित 25,000 पदों में से, 19272 व्यक्तियों को पहले ही विभिन्न विद्यालयों में सहायक शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था एवं उनमें से, प्रशिक्षित शिक्षकों की संख्या 1991 थी जबकि 6000 पद खाली रहे। न्यायालय ने मामले के सभी पहलुओं पर विचार करके विशेष अनुमति याचिका को कुछ विशेष निर्देशों सहित निस्तारित किया, उनमें से कुछ, जो इस मामले पर निर्णय के प्रयोजन से सुसंगत है, उसे यहाँ पर नीचे उत्कथित किया जा रहा है:

(i) यह कि आयोग उन आवेदकों में से इन अकौशलपूर्ण पदों पर नियुक्ति के प्रयोजन से एक विशेष चयन आयोजित करेगा जिन्होंने आवेदन जमा किया है।

(ii) चयन उन आवेदकों तक सीमित होगा जिनके पास सरकारी/निजी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों से प्राप्त प्रशिक्षण योग्यता है।

ऐसे निर्देश के बावजूद, जब बिहार सरकार द्वारा कुछ भी नहीं किया गया, तो यह मामला पुनः एक रिट याचिका में उठाया गया जो **सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 13246 वर्ष 2003 (नंद किशोर ओझा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य)** था जब यह मामला सुनवायी हेतु लिया गया तो बिहार राज्य की, S.L.P. सं॰ 23187 वर्ष 1996 में पारित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के गैर-अनुपालन के आधार पर गंभीर आलोचना की गयी थी। यद्यपि, चयन या अन्यथा के माध्यम से नियुक्ति हेतु प्रशिक्षित शिक्षकों के मामले पर विचार करके **एस॰ एल॰ पी॰ (सिविल) संख्या 23187 वर्ष 1996** में **विजय कुमार एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय एवं निर्देश का पालन करने का निर्देश प्रत्यर्थी को देकर रिट आवेदन निस्तारित किया गया था।

4. उस निर्णय से क्षुब्ध होकर राज्य सरकार ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति याचिका दाखिल किया, परन्तु बाद में उसे वापस ले लिया गया था।

5. आगे मामला यह है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय एवं पटना उच्च न्यायालय द्वारा भी निर्देश दिए जाने के बावजूद, जब बिहार राज्य ने न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश के अनुरूप कार्य नहीं किया, तो एक अवमानना याचिका, जो अवमान याचिका सं॰ 287 वर्ष 2006 था, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष दाखिल किया गया जिसमें बिहार राज्य की ओर से एक शपथ-पत्र इसमें यह अभिकथित करते

हुए दाखिल किया गया कि नियुक्ति के मामले में प्रशिक्षित शिक्षकों को प्राथमिकता दी गयी है एवं केवल तभी जब प्रशिक्षित शिक्षकों पर्याप्त संख्या में उपलब्ध नहीं है, अप्रशिक्षित शिक्षकों के मामले पर विचार किया जाएगा, उक्त प्राख्यान को ध्यान में रखते हुए अवमान याचिका निस्तारित किया गया।

6. इन सभी परिस्थितियों में, याचीगण की ओर से यह निवेदन किया गया था कि याचीगण, जिन्होंने एक दशक से अधिक समय पूर्व विभिन्न सरकारी प्रशिक्षण महाविद्यालयों से प्रशिक्षण प्राप्त किया है, उन्हें माननीय सर्वोच्च न्यायालय एवं पटना उच्च न्यायालय के भी निर्देश के अनुसरण में, प्राथमिक विद्यालय में शिक्षकों के पद पर नियुक्त किए जाने का निर्देश दिया जाए।

7. पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने के पश्चात्, यह प्रतीत होता है कि जब प्राथमिक विद्यालय में प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति से जुड़ा मामला एस॰ एल॰ पी॰ (सिविल) संख्या 23187 वर्ष 1996 में सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष आया, तो आयोग (बिहार लोक सेवा आयोग) को उन आवेदकों में से खाली पदों पर नियुक्ति के प्रयोजन से विशेष चयन प्रक्रिया आयोजित करने का निर्देश दिया गया जिन्होंने आवेदन जमा किए है एवं सरकारी/निजी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान से प्रशिक्षण प्राप्त किया है। बाद में, पटना उच्च न्यायालय ने **नंद किशोर ओझा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य (उपर)** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय एवं निर्देश का पालन करने का निर्देश बिहार राज्य को दिया। इस प्रकार, जो भी निर्णय दिया गया था, या तो माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा या पटना उच्च न्यायालय द्वारा, वह बिहार राज्य के विरूद्ध था न कि झारखंड राज्य के विरूद्ध एवं वह भी उक्त निर्देश राज्य के विभाजन के काफी पश्चात् दिया गया था एवं इस प्रकार, पटना उच्च न्यायालय द्वारा बिहार सरकार को दिया गया कोई निर्देश, झारखंड राज्य पर बाध्यकारी नहीं है। इसके अलावा, झारखंड राज्य की ओर से दाखिल प्रति-शपथ पत्र से यह प्रतीत होता है कि झारखंड राज्य के अस्तित्व में आने के बाद, ''झारखंड प्रारंभिक शिक्षक नियुक्ति नियमावली, 2002" के रूप में नामित एक नयी नियमावली को प्रारंभिक विद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति के प्रयोजन से विरचित किया गया था, जिसमें प्रारंभिक विद्यालय में सहायक शिक्षक की नियुक्ति हेतु पात्रता के रूप में दो वर्षों के शिक्षक प्रशिक्षण या समकक्ष प्रशिक्षण सहित इंटरमीडियट अथवा समकक्ष परीक्षा/B.El.Ed (प्रारंभिक शिक्षा में स्नातक)/शारीरिक शिक्षकों हेतु दो वर्षों का B.Ed. C.P.Ed नियत किया गया था। तब झारखंड लोक सेवा आयोग ने अपने नियुक्ति नियमावली के उपबन्धों के निबन्धनों में अगस्त, 2002 में समाचार पत्र में विज्ञापन निर्गत किया जिसके द्वारा पात्र अभ्यर्थियों से आवेदन आमंत्रित किया गया एवं उन्हें प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों के पद पर नियुक्ति हेतु आमंत्रित किया गया एवं उसी समय, उम्र में पाँच वर्षों का शिथिलीकरण मंजूर किया गया। बाद में, नियुक्ति की प्रक्रिया पूरी की गयी एवं अब प्राथमिक विद्यालय में शिक्षकों के पद पर नियुक्ति हेतु पात्र अभ्यर्थियों के लिए एक नया विज्ञापन निर्गत किया गया है।

8. इस स्थिति में, याचीगण किसी अनुतोष प्राप्ति के हकदार नहीं हैं एवं, इस प्रकार, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vej'oj lgk; ,oa t;k jk;] U;k;efr.k

मथाई मरांडी एवं अन्य (336 में)

मंगल मरांडी (494 में)

बनाम

बिहार राज्य (अब झारखंड) (दोनो में)

दाण्डिक अपील सं॰ 336, 494 वर्ष 1990P. 23 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

सत्र विचारण सं॰ 323 वर्ष 1984 में द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, संथाल परगना, दुमका द्वारा पारित दिनांक 26 जुलाई, 1990 के दोषसिद्धि एवं दण्डादेश के निर्णय के विरूद्ध।

(क) किशोर न्याय अधिनियम, 1986—धारा 24—किशोर एवं उन व्यक्तियों, जो किशोर नहीं हैं, का संयुक्त विचारण–उच्च न्यायालय ने दो अपीलार्थीगण का घटना के समय पर उम्र किशोर के रूप में निर्धारित किया–अभिनिर्धारित किया गया, वे लोग किशोर न्याय अधिनियम के उपबंध के लाभों के हकदार हैं। (पैरा 11)

(ख) भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या का विचारण–अभियोजन साक्षियों ने अपीलार्थी के विरूद्ध आरोपों को सभी युक्तिसंगत संदेहों से परे प्रमाणित किया है–विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश को अभिपुष्ट किया गया–यद्यपि, दो अपीलार्थी जो घटना के समय पर अल्पवयस्क थे, को उन्मोचित करने का निर्देश दिया गया है। (पैरा 12)

निर्णयज विधि.–(2005)3 SCC 592; (1997)8 SCC 720; (1984) Supp. SCC 228; (1995) Supp. 4 SCC 419—भरोसा किया गया।

अधिवक्तागण.–Mr. Lakhan Chandra Roy, For the Appellants; Mr. A.P.P., For the State; Mr. Sagarmoy Binerjee *Amicus Curiae*..

जया रॉय, न्यायमूर्ति.–चूँकि पूर्वोक्त दोनों ही अपीलें एक सम्मिलित निर्णय से उद्‌भूत होते हैं, इस प्रकार उन सभी को एक साथ सुना गया एवं इस सम्मिलित निर्णय द्वारा निस्तारित किया जा रहा है। इन दोनों अपीलों को श्री जुगल किशोर प्रसाद, द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, संथाल परगना, दुमका द्वारा S.T. सं॰ 323 वर्ष 1984 में पारित दिनांक 26 जुलाई, 1990 के निर्णय के विरूद्ध दायर किया गया है, जिसके द्वारा दाण्डिक अपील सं॰ 494/1990 (P) में एकमात्र अपीलार्थी मंगल मरांडी को IPC की धारा 302 के अधीन दण्डनीय अपराध हेतु दोषसिद्ध किया गया है एवं आजीवन कारावास भुगतने का दण्ड दिया गया है, जबकि दाण्डिक अपील सं॰ 336 वर्ष 1990 (P) के तीन अन्य अपीलार्थीगण अर्थात्, मथाई मरांडी, नन्दलाल मरांडी एवं सुनी राम मरांडी को IPC की धारा 302/34 के अधीन दण्डित किया गया है एवं उनलोगों को आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दण्ड दिया गया है। विचारण न्यायालय ने सुनी राम मरांडी एवं नन्दलाल मरांडी को पुनः IPC की धारा 323 के अधीन दोषसिद्ध किया है एवं तीन माह का कठोर कारावास भुगतने का दण्ड दिया गया है एवं उनलोगों पर आरोपित दोनों दण्ड साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया है।

2. चूँकि, अपीलार्थी की ओर से इन अपीलों पर बल देने के लिए कोई भी व्यक्ति उपस्थित नहीं हुआ एवं, इसलिए, हमलोगों ने दोनों अपीलों में अपीलार्थीगण की ओर से इस न्यायालय के सहायता करने के लिए न्यायमित्र के रूप में अधिवक्ता, श्री सागरमय बनर्जी को नियुक्त किया।

3. इन अपीलों को लाने वाले, संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि 28.6.1982 को लगभग 7.00 बजे शाम को उपर नामित सभी चारो अपीलार्थीगण लखन बेसरा (मृतक) के मकान के पास पश्चिम में स्थित अपने मक्के के खेत में बाड़ लगा रहे थे, जिसपर लखन बेसरा एवं उसके दो बेटों, साधु बेसरा एवं धीबा बेसरा ने आक्षेप किया, जिससे उनलोगों के बीच झगड़ा हो गया। इसी बीच, अभियुक्त मंडल मरांडी ने लखन बेसरा पर कटारी से उसके सिर पर प्रहार किया जिससे रक्तस्त्राव कारित होने की उपहति हुई एवं उपर नामित अन्य तीन अपीलार्थीगण ने भी लाठी से उसपर प्रहार किया। उनलोगों ने साधु एवं धीबा पर भी लाठी से प्रहार किया। लखन बेसरा के पारिवारिक सदस्य उसे अपने घर में लाए जहाँ पर उसकी मृत्यु अभिकथित घटना के तुरंत बाद हो गयी।

फर्दबयान में यह भी अभिकथित किया गया है कि लखन बेसरा के घर के पिछे अर्थात्, उसी के पश्चिम में स्थित लगभग दस कट्‌ठा माप के एक मक्के का खेत विद्यमान है। यह प्लॉट घटना की तिथि से लगभग बारह वर्षों पूर्व लखन बेसरा द्वारा स्वयं अपनी भूमि के बदले में अभियुक्त मंगल मरांडी

के नाना से अर्जित किया गया था। परन्तु उनलोगों के बीच कुछ न्यायालय-केस लम्बित था। लखन बेसरा अभिकथित घटना से पूर्व उक्त भूमियों का कब्जेदार था।

4. छोटु बेसरा, लखन बेसरा का भतीजा ने मसनजोर चौकी पर 29.6.1982 को 8.00 बजे सुबह एक फर्दबयान (प्रदर्श 3) दर्ज कराया एवं उक्त फर्दबयान के आधार पर औपचारिक FIR (प्रदर्श 4) तैयार किया गया। अन्वेषण के पश्चात्, सभी चारों अपीलार्थीगण के विरूद्ध आरोप-पत्र पेश किए गए थे एवं उनलोगों को लखन बेसरा की हत्या कारित करने के लिए IPC की धारा 302/34 के अधीन एवं पुनः साधु बेसरा एवं धीबा बेसरा को स्वेच्छया उपहति कारित करने के लिए IPC की धारा 323 के अधीन अपराध के लिए उनलोगों के विरूद्ध आरोप की विरचना के पश्चात् विचाराधीन रखा गया।

5. अपीलार्थीगण ने मिथ्या फंसाये जाने एवं दोषी न होने एवं विचारित होने का दावा किया।

6. अभियोजन पक्ष ने 12 साक्षीयों का परीक्षण किया है जिसमें से अ॰ सा॰-9 एवं अ॰ सा॰-10 चौकीदार हैं, जो लखन बेसरा के शव को शव-परीक्षण हेतु 29.6.1982 को सदर अस्पताल, दुमका ले गए। अ॰ सा॰-1 सूचनादाता है परन्तु वह उक्त घटना का एक प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य नहीं है। अ॰ सा॰-2 चतुर बास्की लखन बेसरा का दामाद है। उसने हल्ला सुनकर P. O. की ओर दौड़ने एवं उक्त घटना को देखने का दावा किया था। अ॰ सा॰-3 धीबा बेसरा मृतक का पुत्र है, जो सुनीराम एवं नन्दलाल द्वारा चलायी गयी लाठी से घायल हुआ था परन्तु उसे पक्षद्रोही घोषित किया गया था। अ॰ सा॰-4 माकु टुड्डू साधु बेसरा की पत्नी है, उसने उक्त घटना देखने का दावा किया है। अ॰ सा॰-5, साधु बेसरा, मृतक का एक दुसरा पुत्र है, वह भी घायल हुआ था। अ॰ सा॰-6, टुरी बेसरा, मृतक की पुत्री है, उसने भी उक्त घटना देखे जाने का दावा किया है। अ॰ सा॰-7 रावण बेसरा ने भी हल्ला सुनकर P. O. की ओर जाने एवं अपीलार्थी, मंगल मरांडी को सोंधा (कटारी) से लैस एवं शेष तीन अपीलार्थीगण को लाठी से लैस होकर घटना स्थल से भागते हुए देखने का दावा किया। अ॰ सा॰-8 वह डॉक्टर हैं, जिन्होंने शव परीक्षण किया। अ॰ सा॰-11 वह डॉक्टर हैं, जिन्होंने साधु बेसरा का परीक्षण किया एवं उन्होंने उपहति रिपोर्ट (प्रदर्श-2) प्रमाणित किया। अ॰ सा॰-12 इस मामले के अन्वेषण अधिकारी है।

7. अपीलार्थीगण के विरूद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि एवं दण्ड को चुनौती देते हुए, अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान न्याय मित्र, श्री बनर्जी ने यह निवेदन किया कि विचारण न्यायालय ने उन हितबद्ध साक्षीयों के परिसाक्ष्यों पर अपीलार्थीगण को अनुचित रूप से दोषसिद्ध किया है, जो शत्रुतापूर्ण शर्त्तों में थे। उन्होंने आगे यह भी अभिकथित किया कि अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में महत्वपूर्ण प्रतिकूलतायें है एवं, इसलिए, उनलोगों के साक्ष्य खारिज होने योग्य है। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि इस प्रभाव का कोई साक्ष्य नहीं है कि घटना के पूर्व विचारों का कोई मेल था एवं, इसलिए, अपीलार्थीगण को IPC की धारा 34 के अधीन अपराध हेतु दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था।

8. हमलोगों ने मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्य सहित अपीलार्थीगण की ओर से किए गए निवेदनों पर विचार किया है। अ॰ सा॰-8 डॉ॰ सुल्तान अहमद ने लखन बेसरा का शव परीक्षण किया एवं निम्नलिखित ऐंटी-मॉर्टम उपहतियाँ पायी:-

(i) बायें पेरियेटल क्षेत्र पर 4" x 3" x हड्डी तक की गहरायी का एक छिन्न घाव। स्कैल्प का विच्छेदन करने पर, यह पाया गया था कि मस्तिष्क एवं मेम्ब्रन विदीर्ण एवं फटे भाग के भीतर रक्तस्त्राव पाया गया था।

(ii) ओक्सीपिटल क्षेत्र पर 3" x 1/2" x हड्डी तक की गहरायी का एक छिन्न घाव।

(iii) चेहरे के बायें भाग पर 6" x 1" एवं कमर के पिछले भाग पर 5" x 3" का सूजन सहित इसीमोसिस।

(iv) बायें केहुनी पर 1" x 1/2 x मांसपेशी की गहरायी का छिन्न घाव।

उक्त उपहति सं॰ (i), (ii) एवं (iv) कुछ तीक्ष्ण धारदार हथियार जैसे कटारी से कारित किया गया था जबकि उपहति सं॰ (iii) कठोर एवं भोथरे पदार्थ जैसे लाठी से कारित किए गए थे।

उनकी राय में, मृत्यु उपहति सं॰ (i) एवं (ii) द्वारा कारित रक्तस्त्राव एवं सदमें के कारण हुई थी जो सामान्य स्थिति में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थे।

इस प्रकार, शव परीक्षण रिपोर्ट के साक्ष्य से, यह स्पष्ट है कि लखन बेसरा की मृत्यु मानव वध प्रकृति का था।

9. साक्ष्य की सावधानीपूर्वक संवीक्षा करने पर, यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 2, चतुर बास्की ने अपने साक्ष्य में अभिकथित किया है कि वह हल्ला सुनकर घटनास्थल की ओर दौड़ा एवं अभियुक्त मंगल मरांडी को लखन बेसरा पर कटारी से तीन बार प्रहार करते हुए देखा एवं यह कहा गया है कि अन्य तीन अभियुक्तों ने लाठी से प्रहार किया। अ॰ सा॰ 4, माकु टुड्डु, साधु बेसरा की पत्नी ने भी अभियोजन मामले को विस्तारपूर्वक वर्णित किया है। उसने अभियुक्त मंगल मरांडी को लखन बेसरा पर कटारी से एवं अन्य तीन अभियुक्तों को लाठी से प्रहार करते हुए देखने का दावा किया। उसने यह भी अभिकथित किया है कि वह तूरी बेसरा, अ॰ सा॰ 6 की मदद से लखन बेसरा को अपने घर लायी। अ॰ सा॰ 6 तूरी बेसरा ने भी अपने साक्ष्य में इसी बात को सम्पुष्ट किया है। अ॰ सा॰ 5, साधु बेसरा, जो स्वयं एक घायल साक्षी है, ने भी यह अभिकथित किया है कि मंगल मरांडी, लखन बेसरा पर कटारी से एवं अन्य तीन अभियुक्त व्यक्ति भी लाठी से प्रहारित किए गए।

इस प्रकार, प्रत्यक्षदर्शीयों अ॰ सा॰–2, 4, 5 एवं 6 के साक्ष्य तथा अ॰ सा॰–7 के सम्पोषक साक्ष्य से, जिन्होंने हमलावरों को अपने–अपने हाथों में हथियार सहित P.O. से भागते हुए देखा, यह स्थापित हो गया है कि अपीलार्थी मंगल मरांडी ने लखन बेसरा (मृत) पर जानबूझकर 'कटारी' के समान घातक हथियार से उसके शरीर के सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग, सिर पर वार किया, जिससे उसके मस्तिष्क पर उपहति कारित हुआ जिसके फलस्वरूप लगभग तत्क्षण उसकी मृत्यु हो गयी। प्रत्यक्षदर्शी के उपरोक्त साक्ष्य से, यह भी स्थापित हुआ है कि शेष तीन अपीलार्थीयों ने लखन बेसरा की हत्या करने के सामान्य आशय से उसपर प्रहार करने में भी सक्रिय रूप से भागीदारी की थी। साक्ष्य में यह भी आया है कि दो अपीलार्थीगण अर्थात्, सुनी राम मरांडी एवं नन्दलाल मरांडी ने जानबूझकर साधु बेसरा एवं धीबा बेसरा को सुसंगत समय पर क्षति कारित किया। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपीलार्थीगण द्वारा किए गए प्रहारों की संख्या के सम्बन्ध में अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में कुछ विरोधाभाष है परन्तु उसी समय इस तथ्य को ध्यान में रखा जाना है कि जब हत्या के आशय से प्रहार किया जाता है तब उस समय यह किसी के लिए सम्भव नहीं है कि वह प्रत्येक हमलावरों द्वारा वार किए गए प्रहारों की संख्या को गिने। इसलिए, विद्वान अधिवक्ता द्वारा यथा इंगित ऐसा कोई विरोधाभाष किसी भी प्रकार से अभियोजन मामले को प्रभावित नहीं करता है।

10. श्री बनर्जी ने यह भी तर्क किया, अपीलार्थीगण द्वारा सूचनादाता पक्षकार द्वारा दर्ज किया गया एक प्रति मामला था।

इस सम्बन्ध में, हम पाते हैं कि अ॰ सा॰–12 अन्वेषण अधिकारी ने अपने साक्ष्य में यह अभिकथित किया है कि उन्होंने किसी भी अभियुक्त के शरीर पर कोई उपहति नहीं पायी थी। उन्होंने यह भी अभिकथित किया कि उन्होंने उक्त प्रति मामले में अंतिम रिपोर्ट पेश किया था। मामले की इस दृष्टि में, यह बिन्दु भी निराधार है।

11. अंत में, श्री बनर्जी ने निवेदन किया कि अपीलार्थी अर्थात् मथाई मरांडी एवं नन्दलाल मरांडी को अभिकथित घटना की तिथि, अर्थात् 28.6.1982 को लगभग मात्र 12 वर्ष अभिकथित किया गया था एवं, इसलिए, वे लोग तत्समय प्रवृत्त अधिनियम अर्थात् किशोर न्याय अधिनियम, 1986 के उपबंधों

का लाभ प्राप्त करने का अधिकारी है। हमलोग इस सम्बन्ध में विद्वान अधिवक्ता के तर्क में बल पाते हैं। इस मामले के अभिलेखों से, यह प्रतीत होता है कि 14.3.1990 को विचारण न्यायालय ने Cr. P.C. की धारा 313 के अधीन अभिलिखित अभिकथन में मथाई मरांडी एवं नन्दलाल मरांडी की उम्र 20 वर्ष होना अभिलिखित किया है। इस प्रकार, इस बात में कोई संदेह नहीं है कि वर्ष 1982 में, वे लोग 12/13 वर्ष से अधिक उम्र के नहीं थे एवं, इसलिए, किशोर न्याय अधिनियम, 1986 के अधीन यथा परिभाषित किशोर थे। तद्नुसार, उनलोगों को किशोर न्याय अधिनियम, 1986 के उपबंधों का हकदार अभिनिर्धारित किया गया है जो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि की दृष्टि में, तत्समय प्रवृत्त था। **(2005)3 SCC 592** में रिपोर्ट किए गए **उपेन्द्र कुमार बनाम बिहार राज्य, (1997)8 SCC 720** में रिपोर्ट किए गए **भोला भगत बनाम बिहार राज्य, (1984) Supp. SCC 228** में रिपोर्ट किए गए **गोपीनाथ घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य** एवं **(1995) Supp. 4. SCC 419** में रिपोर्ट किए गए **प्रदीप कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य** के मामलों को निर्दिष्ट किया गया है।

12. उक्त निर्णयों एवं निष्कर्षों की दृष्टि में, हम इस दृष्टिकोण के हैं कि विचारण न्यायालय ने उचित रूप से ही यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अभियोजन साक्षियों ने अपीलार्थीगण के विरूद्ध आरोपों को सभी युक्तिसंगत संदेहों से परे प्रमाणित किया है। परिणामत:, दाण्डिक अपील सं॰ 494/1990P में अपीलार्थी मंगल मरांडी एवं अपीलार्थी सुनीराम मरांडी के विरूद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश को एतद् द्वारा संपुष्ट किया गया एवं उनलोगो का अपील खारिज किया जाता है। चूँकि वे लोग जमानत पर हैं, इसलिए उनलोगों के जमानत पत्रों को रद्द किया जाता है एवं दण्डादेश की शेष अवधि को भुगतने हेतु अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करने का निर्देश दिया जाता है। विचारण न्यायालय इन सभी अपीलार्थीगण को दण्डादेश के शेष भाग की तामीला विधि के अनुरूप करने के लिए उपस्थिति सुनिश्चित करने के सभी प्रभावी कदम उठाने का भी निर्देश दिया जाता है। जहाँ तक कि अपीलार्थीगण मथाई मरांडी एवं नन्दलाल मरांडी का सम्बन्ध है, विचारण न्यायालय द्वारा यथा पारित उनलोगों की दोषसिद्धि को भी संपुष्ट किया जाता है परन्तु चूँकि उनलोगों को अभिकथित घटना की तिथि को किशोर होना पाया गया था एवं, उनलोगों को किशोर न्याय अधिनियम, जो तत्समय प्रवृत्त था, के उपबंधों का लाभ दिया गया है एवं परिणामत: विचारण न्यायालय द्वारा यथा अधिनिर्णित उनलोगों के दण्डादेश को एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है। दण्डादेश में उक्त उपान्तरण सहित उनके अपीलों को खारिज किया जाता है। दोनों अपीलार्थीगण, अर्थात, मथाई मरांडी एवं नन्द लाल मरांडी जमानत पर हैं। उनलोगों को अपने-अपने बंध-पत्रों के दायित्व से मुक्त किया जाता है।

अमरेश्वर सहाय, न्यायमूर्ति.—मैं सहकत हूँ।

---

ekuuh; ,eñ okbñ bdcky] U;k;efr!

झारी महतो एवं अन्य

बनाम

सागर महतो एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3582 वर्ष 2008. 21 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

न्यायालय शुल्क अधिनियम, 1870—वाद मूल्यांकन अधिनियम की धारा 8 के साथ पठित धारा 7(iv)—मौद्रिक अधिकारिता—वादी द्वारा कथित न्यायालय-शुल्क का मानक एक महत्वपूर्ण कारक होता है—वाद-पत्र में वादी द्वारा मूल्यांकन के कथित मानक पर अधिकारिता के मूल्य को अभिनिर्धारित करना है। **(पैरा 4 एवं 5)**

निर्णयज विधि.—AIR 1958 SC 245—भरोसा किया गया।

अधिवक्तागण.—M/s Suchendra Prasad, P.K. Deomani, For the Petitioners.

आदेश

चूंकि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन दाखिल इस आवेदन में विधि का एक साधारण प्रश्न अन्तर्गत है, इसलिए आदेश पारित करने से पहले मैं प्रत्यर्थीगण को सुनना आवश्यक नहीं समझता।

2. विधि के अन्तर्ग्रस्त प्रश्न इसको लेकर है कि क्या अभिधान वाद संख्या 237 वर्ष 2007 में दिनांक 3.1.2008 के आक्षेपित आदेश को पारित करने में अधीनस्थ न्यायाधीश का न्यायालय औचित्य पर है जिसके द्वारा उसने इस आधार पर वाद-पत्र को वापस करने का आदेश किया है कि अधीनस्थ न्यायाधीश के न्यायालय को कोई मौद्रिक अधिकारिता नहीं होती है। विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश के अनुसार, चूँकि वाद का मूल्य केवल एक लाख रुपय थे, इसलिए यह मुंसिफ की मौद्रिक अधिकारिता के भीतर आता है।

3. प्रथम दृष्टया यह प्रतीत होता है कि आक्षेपित आदेश को पारित करते समय अधीनस्थ न्यायालय ने अपनी बुद्धि का इस्तेमाल नहीं किया है। वादीगण-याचीगण ने अधिकार, अभिधान और हित के अधिनिर्णयन के लिए और वाद-परिसर के ऊपर उनके कब्जे की घोषणा के लिए पूर्वोल्लिखित वाद दाखिल किया और वादीगण को कब्जा-विहीन करने की स्थिति में कब्जे की पुर्नप्राप्ति के लिए डिक्री पारित की जाए। इसके अतिरिक्त, वाद भूमि के ऊपर वादीगण के शान्तिपूर्ण कब्जे को भंग करने से प्रतिवादीगण और उनके आदमियों, अनुचरों एवं अभिकर्ताओं को रोकने वाले स्थायी व्यादेश की भी वादीगण ने इप्सित किया। वादीगण ने प्रथम अनुतोष के लिए वाद का मूल्य एक लाख एक सौ रुपए यानि एक लाख रुपए रखा और स्थायी व्यादेश के द्वितीय अनुतोष के लिए सौ रूपए रखा। वाद-पत्र का अनुच्छेद 16 निम्नांकित रूप से पठित है:-

> "16. कि अधिकारिता के प्रयोजन के लिए वाद का मूल्य 1,00,100/- रुपए रखा गया है, जिनमें से 1,00,000/- रुपए वाद भूमि का मूल्य है और 100/- रुपए स्थायी व्यादेश के लिए मूल्य है, जिसके ऊपर मूल्यानुसार *ad-valorem* न्यायालय शुल्क का भुगतान किया जाता है।''

4. इसलिए, यह स्पष्ट है कि न्यायालय शुल्क और अधिकारिता दोनों प्रयोजनों के लिए वाद का मूल्य 1,00,100/- रुपए रखा गया था जो अधीनस्थ न्यायाधीश की मौद्रिक अधिकारिता के भीतर आता है। यह सुस्थापित है कि अधिकारिता के प्रयोजन के लिए मूल्य का अभिनिर्धारण वाद मूल्यांकन अधिनियम की धारा 8 के अर्थ के भीतर न्यायालय शुल्क के भुगतान के प्रयोजन के लिए मूल्य के अभिनिर्धारण पर निर्भर करता है। न्यायालय शुल्क अधिनियम की धारा 7(iv) के अन्तर्गत वादों में न्यायालय शुल्क का परिकलन उस मूल्य पर निर्भर करता है जो वादी अपने दावे के संबंध में करता है। वादी द्वारा एक बार अपने विकल्प का इस्तेमाल करने पर और न्यायालय शुल्क के प्रयोजन के लिए अपने दावे की मूल्य रख देने पर वही अधिकारिता के लिए मूल्य अभिनिर्धारित करता है। **सथप्पा चेट्टियार बनाम रामानाथन चेट्टियार [ए॰ आई॰ आर॰ 1958 एस॰ सी॰ 245]** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह सिद्धांत स्थापित किया गया है जहाँ न्यायाधीशों ने सम्परीक्षित किया है:-

> "15. ऐसे वादों में अधिकारिता के प्रयोजन के लिए मूल्य क्या होगा यह एक अन्य प्रश्न है जो प्राय: विचारण के लिए उद्भूत होता है। वाद मूल्यांकन अधिनियम की धारा 8 के साथ अधिनियम की धारा 7(iv) को पठित करके इस प्रश्न का फैसला करना है। यह वाद वाली धारा प्रावधान करती है कि न्यायालय शुल्क अधिनियम धारा 7, पैरा 5, 6 एवं 9 एवं पैरा 10 खण्ड (d) में निर्दिष्ट वादों को छोड़कर किसी वाद में न्यायालय-शुल्क अधिनियम के अधीन मूल्यानुसार देय है, न्यायालय शुल्क के लिए अभिनिर्धारणीय मूल्य और अधिकारिता के प्रयोजन के लिए मूल्य एक ही होगा। अन्य शब्दों में, जहाँ तक अधिनियम की धारा 7 उप-धारा (iv) के अधीन आने वाले वादों का संबंध है, तो वाद मूल्यांकन अधिनियम की धारा 8 प्रावधान करती है कि न्यायालय शुल्क के परिकलन के लिए अभिनिर्धारणीय मूल्य और अधिकारिता के प्रयोजनों

के लिए मूल्य एक ही होगा। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि धारा 8 के प्रावधानों का प्रभाव अधिकारिता के प्रयोजन के लिए मूल्य को न्यायालय-शुल्क के परिकलन के लिए यथा अभिनिर्धारणीय मूल्य पर निर्भर बनाना है और यह बिल्कुल स्वाभाविक है। अधिनियम की धारा 7(iv) के अन्तर्गत आने वाले वादों में, न्यायालय-शुल्क का परिकलन उस मूल्य पर निर्भर करता है जो वादी अपने दावे के संबंध में करता है। वादी द्वारा एक बार अपने विकल्प का इस्तेमाल कर लेने पर और न्यायालय-शुल्क के प्रयोजन के लिए अपने दावे का मूल्य रख देने पर यही अधिकारिता के लिए मान का अभिनिर्धारण करता है। निस्संदेह ऐसे मामलों में न्यायालय-शुल्क के लिए मान और अधिकारिता के लिए मान एक ही होगा। परन्तु वादी द्वारा न्यायालय-शुल्क के लिए जो मूल्य कथित किया गया है वही प्राथमिक महत्व का है। इसी मूल्य से अधिकारिता के मूल्य को अनिवार्यत: अभिनिर्धारित करना है। परिणाम यह है कि यही वह राशि है जो न्यायालय-शुल्क के प्रयोजनों के लिए इप्सित अनुतोष हेतु वादी ने रखी है। जो वाद में अधिकारिता के मूल्य को अभिनिर्धारित करता है और यह विपर्ययेन नहीं है। प्रसंगवश हम निर्दिष्ट कर सकते हैं कि अपीलार्थी के अनुसार वर्तमान मामले में अधिकारिता के प्रयोजन के लिए मूल्यांकन के तौर पर 15,00,000/- रुपए उल्लिखित करना आवश्यक नहीं था क्योंकि 1953 के पहले मद्रास उच्च न्यायालय के मूल पक्ष पर दाखिल वादों पर किसी अधिकारिता संबंधी मूल्यांकन को करने की कोई आवश्यकता नहीं थी।''

5. न्यायालय-शुल्क अधिनियम और वाद मूल्यांकन अधिनियम में यथा निहित प्रावधानों के आलोक में, आक्षेपित आदेश विधि में टिक नहीं सकता। पूर्वोक्त कारणों से, यह रिट आवेदन अनुज्ञात किया जाता है और आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। यह अवधारित किया जाता है कि वादी-याचीगण द्वारा दाखिल वाद अधीनस्थ न्यायालय की मौद्रिक अधिकारिता के भीतर आता है।

---

ekuuh; vej'oj lgk; ,oa vkjs vkjs çlkn] U;k;efrx.k

शिवलाल कोड़ा एवं अन्य

बनाम

झारखण्ड राज्य

दाण्डिक अपील संख्या 141 वर्ष 2001. 25 अक्टूबर, 2008 को विनिश्चित।

सत्र केस संख्या 95 वर्ष 1999/16 वर्ष 1999 मे अपर सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 15.2.2001 एवं 16.2.2001 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दण्डादेश के विरूद्ध।

भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34 एवं 324/34—हत्या–भूमि विवाद स्वीकृत–हत्या की मंशा सिद्ध परन्तु दण्डादेश के प्रश्न पर विचारण न्यायालय ने सभी अभियुक्तों के साथ एक प्रकार का व्यवहार किया है–अभिनिर्धारित, जहाँ तक धारा 302/34 के अधीन अपराध का सवाल है, विचारण न्यायालय ने सभी अपीलार्थीगण के विरूद्ध उचित ही दोषसिद्धि का आदेश एवं दण्डादेश अभिलिखित किया है–भारतीय दण्ड संहिता की धारा 324/34 के अधीन आरोपों से अन्य अपीलार्थीयों को बरी किया जाता है। (पैरा 15)

अधिवक्तागण.–Mr. Kanti Kumar Ojha, For the Appellants; A.P.P., For the Respondent.

आर॰ आर॰ प्रसाद, न्यायमूर्ति.–अपने साझा आशय को अग्रतर करने में सुखचन्द कोड़ा की हत्या कारित करने और खतरनाक हथियार से सूचनादाता (अ॰ सा॰ 10) रासमुनि कुड़ी को चोट पहुँचाने के लिए भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302/34 एवं 324/34 के अधीन सभी पाँच अपीलार्थीगण को विचारण पर रखा गया था। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थीगण को दोषी पाकर उनमें से प्रत्येक को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302/34 के अधीन आजीवन कारावास भुगतने का दण्डादेश किया है।

तथापि, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 324/34 के अधीन अपीलार्थीगण के विरूद्ध कोई पृथक दण्डादेश पारित नहीं किया गया था, यद्यपि उन्हें उक्त अपराध का दोषी पाया गया था।

2. अभियोजन का मामला यह है कि 10.11.1998 को लगभग 6-7 बजे पूर्वाह्न में सूचनादात्री रासमुनि कुड़ी (अ॰ सा॰ 10)का कोई चचेरा भैंसुर सुखचन्द कोड़ा शौच करने के लिए एक तालाब की ओर जा रहा था जब वह सूचनादात्री के घर के उत्तर में स्थित एक खेत पर पहुंचा तो लाठी, धनुष और तीर से लैस अपीलार्थी लोगों ने सुखचन्द कोड़ा को वहाँ रोका और उस पर हमला करना प्रारम्भ कर दिया। सूचनादात्री रासमुनि कुड़ी (अ॰ सा॰ 10) को वहाँ देखकर शिवमति कुड़ी (अ॰ सा॰ 6) वहाँ पहुँची और मामले में हस्तक्षेप करने का प्रयास किया परन्तु अपीलार्थी कदम कोड़ा ने एक दरोती द्वारा एक वार किया और अपीलार्थी शिवलाल कोड़ा ने लाठी से वार किया जिसके परिणामस्वरूप उसे उसकी दांया केहुनी और उसके माथे पर चोट आई। उसी समय सुखचन्द कोड़ा को सभी अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा चोट किए जाने के कारण गंभीर उपहतियाँ आई और वह मर गया। तत्पश्चात, अपीलार्थीगण भाग गया।

3. अभियोजन का आगे मामला यह है कि उसी दिन लगभग 11 बजे पूर्वाहन में महेशपुर पुलिस थाने में कोई सूचना प्राप्त की गई कि सीतारामपुर गांव में कोई अप्रिय घटना घटित हुई है। तदुपरि स्टेशन डायरी में प्रविष्टि की गई और थाना प्रभारी नरेश चन्द्र मिश्रा (अ॰ सा॰ 11) आरक्षी उप-निरीक्षक, कमलेश्वर मिश्रा (अ॰ सा॰ 12) के साथ लगभग 11.30 बजे पूर्वाह्न में घटना-स्थल पहुँचा और वहाँ सुखचन्द कोड़ा का शव पड़ा पाया और लगभग 12 बजे दोपहर में रासमुनि कुड़ी (अ॰ सा॰ 10) के फर्दबयान (प्रदर्श 3) को अभिलिखित किया। तदुपरि एक मामला पंजीकृत किया गया और एक औपचारिक प्रथम सूचना रिपोर्ट (प्रदर्श 7) तैयार की गई और अन्वेषण अधिकारी कमलेश सिंह द्वारा अन्वेषण के लिए मामला अपने हाथ में लिया गया जिसने शव के मृत्यु-समीक्षा की और एक मृत्यु-समीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श 5) तैयार की। अन्वेषण पदाधिकारी ने घटना-स्थल पर तीन तीर और एक फरसा पाया जिन्हें एक अभिग्रहण सूची (प्रदर्श 4) के अधीन रक्त-रंजित मिट्टी के साथ अभिग्रहित किया गया। तत्पश्चात्, पोस्ट-मार्टम परीक्षण के लिए शव को अनुमंडल अस्पताल, पाकुड़ भेज दिया गया। तत्पश्चात डॉ॰ सुशील कुमार मल्होत्रा (अ॰ सा॰ 1) ने 11.11.1998 को 2:30 अपराह्न में शव का शव-परीक्षण किया और निम्नांकित मृत्यु-पूर्व उपहतियां पाई:-

(i) विसरा की 2-½" x 1-½" गहराई तक गया एक छिद्रित घाव और बांए हाइपोकोन्ड्रियम के ऊपर इससे होकर omeutum के एक भाग का बाहर निकलना।

(ii) बांए हाइपोकोन्ड्रियम के ऊपर आंत गुहा की 1" x ½" गहराई तक गया एक छिद्रित घाव।

(iii) iliac region क्षेत्र के ऊपर आंत गुहा की ½" x ½" गहराई तक गया एक छिद्रित घाव।

(iv) दांए कंधे पर अस्थि की 3" x ½" गहराई तक गया तीव्र कटाव वाला घाव और दांए. seapnla की प्रक्रिया को आंशिक रूप से काटता हुआ।

(v) अस्थि की 1" x ½" गहराई तक गया तीव्र कटाव और दांए posterior क्षेत्र के ऊपर पश्च भाग की ओर दांयी तरफ की 8वी और 9वी पसली का कटना।

(vi) शीर्ष के ऊपर खोपड़ी की 3" x ½" गहराई तक गया तीव्र कटाव।

(vii) दांए parietal क्षेत्र के ऊपर 2' x ½" माप वाला खोपड़ी की गहराई तक गया तीक्ष्ण कटाव।

(viii) बांए अंगूठे की जड़ के स्तर से होकर हड्डी को काटते हुए ½" x ½" माप का तीक्ष्ण कटाव वाला घाव।

(ix) दांए अंगूठे के आधार के ऊपर ½" x ½" माप का तीक्ष्ण कटाव वाला घाव।

इन उपहतियों के अलावा फेफड़े का दांयाँ पक्ष छिद्रित पाया गया और यकृत भी ½" x ¼" माप से कटा पाया गया।

चिकित्सक ने इस मत के साथ पोस्ट-मार्टम परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 1) निर्गत किया की उपहतियाँ ''हसुआ'' जैसे एक तीक्ष्ण धारदार हथियार द्वारा कारित की गई थी और पूर्वोक्त उपहतियों द्वारा कारित सदमे एवं रक्तस्त्राव के कारण मृत्यु कारित हुई थी।

4. अन्वेषण के अनुक्रम में, अन्वेषण पदाधिकारी ने 10.11.1998 को डॉ॰ विजय कुमार ठाकुर द्वारा सूचनादात्री रासमुनि कुड़ी को भी परीक्षित करवाया, जिसने उसपर निम्नांकित उपहतियाँ उसके शरीर पर पाई।

''पार्श्विक रूप से दांयी केहुनी के ठीक ऊपर 2" x 1/4" x 1/4" का विदीर्ण घाव।

तीक्ष्ण धारदार हथियार से कारित उपहति की प्रकृति साधारण पाई गई। तद्नुसार, उन्होंने उपहति रिपोर्ट (प्रदर्श 8) निर्गत किया।

5. अन्वेषण के समापन के पश्चात, जब पुलिस ने अपीलार्थीगण के विरूद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया, तो, अपराध का संज्ञान लिया गया और सम्यक् अनुक्रम में, जब मामले को सत्र न्यायालय भेजा गया, तो आरोप विरचित किए गए जिनको लेकर अपीलार्थीगण ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया।

6. विचारण के अनुक्रम में, अभियोजन ने कुल मिलाकर 13 गवाहों को परीक्षित किया। उनमें से, अ॰ सा॰ 6 शिवमति कुड़ी (मृतक की बहन), अ॰ सा॰ 7 पन्सुरी कुड़ी (मृतक की पत्नी) और अ॰ सा॰ 10 रासमुनि कुड़ी चश्मदीद गवाह हैं जबकि अ॰ सा॰ 2 निरेन कोड़ा, अ॰ सा॰ 3 नकुल कोड़ा, अ॰ सा॰ 4 संजय कोड़ा और अ॰ सा॰ 8 कलाचन्द कोड़ा अनुश्रुत गवाह हैं। अ॰ सा॰ 4 संजय कोड़ा मृत्यु समीक्षा और साथ-साथ रक्त-रंजित मिट्टी, फरसा एवं तीन तीरो के अभिग्रहण का भी गवाह है। अ॰ सा॰ 5 बुद्धेश्वर कोड़ा भी मृत्यु समीक्षा का गवाह है।

7. अभियोजन के मामले के समापन के पश्चात् उनके विरूद्ध प्रतीत होने वाली दोषसिद्धि करने वाली परिस्थितियों के बारे में दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपीलार्थीगण से पूछताछ की गई थी जिससे उन्होंने इन्कार किया।

8. विचारण न्यायालय ने अ॰ सा॰ 6, 7 एवं 10 के परिसाक्ष्य पर प्रच्छन्न भरोसा करके और अभियोजन की ओर से प्रस्तुत अन्य साक्ष्यों पर भी भरोसा करके अपीलार्थीगण को वाकई दोषी पाया और इसलिए उन्हें पूर्वोक्त रूप से दोषसिद्ध किया एवं दण्ड दिया।

9. दोषसिद्धि के निर्णय एवं दण्डादेश से व्यथित होकर अपीलार्थीगण ने यह अपील दाखिल की है।

10. अपीलार्थीगण के ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चश्मदीद गवाह होने का दावा किए गए सभी गवाहों के मृतक के संबंधी होने के कारण वे अत्यधिक हितबद्ध हैं और, इसलिए, किसी स्वतंत्र चश्मदीद गवाह की अनुपस्थिति में, विचारण न्यायालय को चश्मदीद गवाह पर प्रच्छन्न भरोसा नहीं करना चाहिए या विशेषकर जब मृतक और अपीलार्थीगण एक दूसरे के प्रति शत्रुतापूर्ण हैं और यह कि अ॰ सा॰ 6 शिवमति कुड़ी (मृतक की बहन) ने अपनी प्रति-परीक्षा में स्पष्ट रूप से कहा है कि सूचनादात्री रासमुनि कुड़ी अ॰ सा॰ 10 घटना स्थल पर उससे पहले जा चुकी थी और जब तक वह घटना स्थल पहुँची, अभियुक्त व्यक्ति भाग चुके थे। परन्तु, दूसरी ओर अ॰ सा॰ 10 रासमुनि कुड़ी ने अपने साक्ष्य में कहा है कि शिवमति कुड़ी अ॰ सा॰ 6 उससे पहले घटना स्थल गई थी और मामले की उस दृष्टि में न तो अ॰ सा॰ 6 और न ही अ॰ सा॰ 10 चश्मदीद गवाह है। परन्तु विचारण न्यायालय ने मामले के इस पहल पर विचार नहीं किया और, इसलिए, अपीलार्थीगण को दोषी अवधारित करने में त्रुटि की और, इसलिए, दोषसिद्धि का निर्णय एवं दण्डादेश अपास्त किए जाने के अधिकारी हैं।

11. राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना।

12. पक्षों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्तागण की सुनवाई करके और अभिलेखों का परिशीलन करके मैं पाता हूँ कि अ॰ सा॰ 6 शिवमति कुड़ी मृतक की बहन है जबकि मृतक की पत्नी अ॰ सा॰ 7 पन्सुरी कुड़ी और मृतक के भाई की पत्नी अ॰ सा॰ 10 रासमुनि कुड़ी अपने आपको घटना का चश्मदीद गवाह होने का दावा किया है। यह सत्य है कि सभी तीन गवाह मृतक से संबंधित हैं परन्तु केवल इसी आधार पर उनके परिसाक्ष्य पर संदेह नहीं किया जा सकता जबकि यह दर्शाने के लिए कुछ न हो कि वास्तविक दोषियों को बचाने की खातिर उनके पास अपीलार्थीगण को झूठ-मूठ फँसाने का कुछ कारण है। मैं अभिलेख पर इसको लेकर ऐसा कुछ नहीं पाता हूँ कि पूर्वोक्त गवाह अपीलार्थीगण को झूठ-मूठ क्यों फँसाएंगे। गवाहों का एक-दूसरे का संबधी होने के कारण सदा उन्हें हितबद्ध नहीं बताया जा सकता। यहाँ, वर्तमान मामले में सभी तीनों गवाह स्वाभाविक गवाह प्रतीत होते हैं। सूचनादात्री (अ॰ सा॰ 10) के अनुसार, जब मृतक शौच के लिए एक खेत की ओर गया तो उसने उस समय अपीलार्थीगण शिवलाल कोड़ा को फरसा, पाण्डु किस्कू को धनुष एवं तीर और शेष को दरोती के साथ देखा और सभी अपीलार्थीगण ने मृतक को घेर लिया और उसपर हमला प्रारम्भ कर दिया यह देखकर, वह मृतक को बचाने के लिए दौड़ी परन्तु अपीलार्थी कदम कोड़ा ने दांयी केहुनी पर उपहति कारित करते हुए उसपर दरौती से हमला कर दिया। तदुपरि उसे चोट आई जो तथ्य अ॰ सा॰ 13 डॉ॰ विजय कुमार ठाकुर के साक्ष्य से सिद्ध होता है जिसने दांयी केहुनी के ऊपर तीक्ष्ण कटाव वाली उपहति पाई। इन परिस्थितियों के अधीन, घटना स्थल पर इस गवाह (अ॰ सा॰ 10) की उपस्थिति किसी युक्तिसंगत संदेह से परे होकर सिद्ध होती है। इसके आगे इस गवाह के परिसाक्ष्य को फर्दबयान (प्रदर्श 3) में पहले ही वर्णन से संपोषण प्राप्त होता है।

13. इन परिस्थितियों के अधीन, अ॰ सा॰ 10 के परिसाक्ष्य को त्याग करने का कोई कारण नहीं रहा है। मामले में आगे जाते हुए मैं पाता हूँ कि अ॰ सा॰ 10 के परिसाक्ष्य को दोनों गवाहों अ॰ सा॰ 6 एवं 7 से संपोषण प्राप्त होता है। जिन्होंने गवाही दी है कि जब हल्ला सुनने पर वे अपने घर से बाहर निकले तो उन्होंने अपीलार्थीगण को मृतक पर उन हथियारों से हमला करते देखा जो वे पकड़े हुए थे। दोनों ने कहा है कि शिवलाल फरसा रखे था जबकि पाण्डु के पास तीर और कमान था और अन्य तीन अपीलार्थीगण के पास दरौती थी। उनके परिसाक्ष्य वास्तव में इंगित करते हैं कि उन्होंने अपने घरों से बाहर पहली बार अपीलार्थी को मृतक पर हमला करते देखा। उनकी प्रति-परीक्षा में यह इंगित करने के लिए कुछ नहीं है कि घटना स्थल उनके घरों से दृश्य नहीं था। इसके विपरीत, अन्वेषण पदाधिकारी (अ॰ सा॰ 11) द्वारा दिए गए वर्णन और खाका चित्र (प्रदर्श C) के परिशीलन से भी कोई जान सकता है कि घटना स्थल और अ॰ सा॰ 6 एवं 7 के घर के बीच गवाहों की दृष्टि को अवरोधित करने के लिए कुछ नहीं है। इन परिस्थितियों में बचाव पक्ष की ओर रखे इस निवेदन को स्वीकारना कठिन है कि अ॰ सा॰ 6 एक चश्मदीद गवाह नहीं है क्योंकि उसके अनुसार, जब वह घटना स्थल पहुँची तो उस समय तक अभियुक्त व्यक्ति भाग चुके थे। यह सही है कि घटना स्थल पर किसके पहले पहुँचने के बिन्दु पर अ॰ सा॰ 6 एवं अ॰ सा॰ 10 के साक्ष्य के बीच कुछ असंगतता है। परन्तु यह बहुत तात्विक नहीं है और अभियोजन मामले की जड़ तक नहीं जाता है विशेषकर जब यह अभियोजन द्वारा सिद्ध कर दिया गया है कि अ॰ सा॰ 10 पर अभियुक्त द्वारा तब हमला किया गया जब उसने मृतक को बचाने का एक प्रयास किया और उसे चोट आई। इन परिस्थितियों में, अ॰ सा॰ 6, 7 एवं 10 के परिसाक्ष्यों को त्याग करने का कोई कारण ही नहीं रहा है। इससे भी बढ़कर, आँखो देखा साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से संपोषण पाता है क्योंकि डाक्टर (अ॰ सा॰ 1) ने छिद्रित और साथ-साथ तीक्ष्ण कटाव वाली उपहतियां भी पाई है जो मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त था। इसके अतिरिक्त आंखों देखा साक्ष्य अन्वेषण पदाधिकारी के वस्तुपरक निष्कर्ष से भी संपोषण प्राप्त करता है। जिसने घटना स्थल पर तीन तीर सामग्री

प्रदर्श III में III/2 और फरसा (सामग्री प्रदर्श I)पाया था। इससे भी बढ़कर, अ॰ सा॰ 2, 3 एवं 10 ने स्पष्ट रूप से कहा है कि कुछ भूमि विवाद के कारण कार्यवाही चल रही थी और उस कारण से अभियुक्त ने अपराध कारित किया है। बचाव-पक्ष द्वारा इससे कभी इन्कार नहीं किया गया है और इस प्रकार मृतक की हत्या कारित करने के लिए अपीलार्थीगण के पास एक सबल मंशा प्रतीत होती है।

14. अगले आरोप पर आकर यह अभिलिखित किया जाए कि सभी अपीलार्थीगण को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 324/34 के अधीन भी आरोपित किया गया था क्योंकि अपीलार्थी कदम कोड़ा ने अ॰ सा॰ 10 पर दरौती से वार किया था जबकि शिवलाल कोड़ा ने अ॰ सा॰ 10 के सिर पर लाठी से वार किया था परन्तु ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि अन्य तीन अपीलार्थीगण बबाई कोड़ा, सबाई कोड़ा एवं पाण्डु किस्कू ने अ॰ सा॰ 10 पर प्रहार किया था, और न ही यह दर्शाने के लिए कोई परिस्थिति है कि अ॰ सा॰ 10 को उपहति कारित करने के लिए अन्य अभियुक्त के साथ उनकी साझा मंशा थी। इसलिए, जहाँ तक अपीलार्थीगण बबाई कोड़ा, सबाई कोड़ा और पाण्डु किस्कू का सवाल है तो विचारण न्यायालय ने भारतीय दण्ड संहिता की धारा 324/34 के अधीन दोषसिद्धि के आदेश को अभिलिखित करने में त्रुटि की। इसके अतिरिक्त, इसे अभिलिखित किया जाए कि अ॰ सा॰ 10 के अनुसार, शिवलाल कोड़ा ने लाठी से उसके सिर पर वार किया परन्तु डॉक्टर (अ॰ सा॰ 13) द्वारा कोई तत्सम उपहति नहीं पाई गई है। इससे भी बढ़कर, अ॰ सा॰ 10 की गवाही के अनुसार, अपीलार्थी शिवलाल कोड़ा अपने हाथ में फरसा पकड़े हुए था। मामले की उस दृष्टि में, अ॰ सा॰ 10 का परिसाक्ष्य यह है कि शिवलाल कोड़ा ने उसके सिर पर लाठी में वार किया कभी भी सत्य एवं विश्वसनीय प्रतीत नहीं होता, यद्यपि कदम कोड़ा द्वारा दरौती से हमला किए जाने का उसका परिसाक्ष्य उपहति रिपोर्ट (प्रदर्श 8) से संपोषण पाता है और इसलिए, शिवलाल कोड़ा और पूर्वोक्त तीन अपीलार्थी, अर्थात्, बबाई कोड़ा, सबाई कोड़ा एवं पाण्डु किस्कू भी भारतीय दण्ड संहिता की धारा 324/34 के अधीन आरोपों से दोषमुक्त किए जाते हैं जबकि अपीलार्थी कदम कोड़ा को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 324/34 के स्थान पर धारा 324 के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है।

15. इस प्रकार, मामले के इन सारे पहलुओं को ध्यान में रखकर, जहाँ तक धारा 302/34 के अधीन अपराध का सवाल है तो विचारण न्यायालय ने सभी अपीलार्थीगण के विरूद्ध उचित रूप से दोषसिद्धि का आदेश और दण्डादेश किया है जिसमें इस न्यायालय द्वारा किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। और तद्नुसार, इसे बरकरार रखा जाता है। तथापि, ऊपर परिचर्चा किए गए कारण से अपीलार्थीगण शिवलाल कोड़ा, बबाई कोड़ा, सबाई कोड़ा और पाण्डु किस्कू को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 324/34 के अधीन आरोपों से बरी किया जाता है और अपीलार्थी कदम कोड़ा को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 324/34 के स्थान पर धारा 324 के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है।

परिणामतः, दोषसिद्धि के आदेश में, यथा पूर्वोक्त उपान्तरण के साथ, यह अपील खारिज की जाती है।

अमरेश्वर सहाय, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

---

ekuuh; vej'oj lgk; ,oa t;k jk;] U;k;efrx.k

महेन्द्र प्रसाद एवं एक अन्य (240 में)

चंचल भास्कर @ चंचल कुमार भास्कर (252 में)

कुसल टोप्पो (302 में)

बनाम

झारखण्ड राज्य (सभी में)

दाण्डिक अपील सं॰ 240, 252, 302 वर्ष 2002. 12 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

सत्र विचारण केस सं॰ 119 वर्ष 2000 में प्रथम अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, लातेहार, श्री आर॰ जी॰ सिंह नागेश द्वारा पारित दिनांक 17.5.2002 एवं 18.5.2002 के क्रमशः दोषसिद्धि के आदेश एवं दण्डादेश के विरूद्ध एक अपील के मामले में।

हत्या का विचारण–न्यायिकेतर संस्वीकृति–अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा किए गए संस्वीकारात्मक अभिकथन को बचाव पक्ष द्वारा प्रति-परीक्षण में चुनौती नहीं दी गयी है–अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा की गयी ऐसी न्यायिकेतर संस्वीकृति को साक्ष्य में, जो अभिलेख पर विधिसम्मत रूप से लाया गया है, अग्राह्य होना नहीं कहा जा सकता है। (पैरा 15)

अधिवक्तागण.–M/s B.M. Tripathy, Laljee Sahay, Rakesh Kumar, For the Appellants; Md. Ajeemuddin, For the Respondent.

अमरेश्वर सहाय, न्यायमूर्ति.–तीनों अपीलें एक ही आक्षेपित निर्णय से उद्‌भूत हुए हैं एवं इसलिए, उन्हें एक साथ सुना गया एवं इस सम्मिलित निर्णय द्वारा निस्तारित किया जा रहा है।

2. एक अन्य सह-अभियुक्त अर्थात् नन्दलाल प्रसाद @ नन्द प्रसाद यादव (दोषमुक्त) सहित इन चारों अपीलार्थियों को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 396 के अधीन अपराध हेतु आरोपित किया गया था एवं विचाराधीन रखा गया था। विद्वान विचारण न्यायालय, आक्षेपित निर्णय के माध्यम से, इन चारों अपीलार्थियों को भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 302 एवं 392 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया है एवं उन्हें आजीवन कठोर कारावास एवं 5,000/- रु॰ के जुर्माने से दण्डित किया है, जुर्माने के व्यतिक्रम में पुनः भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन दो वर्षों का कठोर कारावास भुगतना होगा एवं भारतीय दण्ड संहिता की धारा 392 के अधीन अपराध हेतु सात वर्षों की अवधि का कठोर कारावास एवं प्रत्येक को 1,000/- रु॰ के जुर्माने से दण्डित किया है। दोनों ही दण्डादेशों को साथ-साथ चलने का आदेश दिया गया था।

3. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि 3.12.1999 को ट्रक सं॰ BR-24M-8171 लातेहार के किसी आदित साह @ आदित साव @ आदित्य साहू (अ॰ सा॰ 4) ने लाख लादकर बलरामपुर पहुँचा था। उपरोक्त ट्रक ने उक्त लाख को 4.12.1999 को पुरूलिया (पश्चिम बंगाल) जिले के बलरामपुर में उतार कर 4.12.1999 को बलरामपुर से लातेहार लौट रहा था। यह 4.00 बजे शाम में राँची पहुँचा। इसने अपने मालिक मोस्मात सीता देवी (सूचनादाता की भाभी, अब मृत) को सेवा सदन, राँची से लिया एवं लातेहार की ओर बढ़ा। जब उक्त ट्रक 5.12.1999 की सुबह तक लातेहार नहीं पहुँचा, तब सूचनादाता (अ॰ सा॰ 2) ने अन्यों के साथ उक्त ट्रक की तलाश प्रारम्भ की। तलाश के दौरान, वह राँची, रोड, कुरू पर कुरू से डेढ़ K.M. दूर स्थित बिन्देश्वर साह @ बिन्देश्वर साहू (अ॰ सा॰ 1) के लाइन होटल पर गया, जहाँ उक्त ट्रक सामान्यतया रूका करता था। सूचनादाता ने उपरोक्त होटल मालिक (अ॰ सा॰ 1) से यह सूचना इकट्ठा किया कि उसका ट्रक 4.12.1999 को लगभग 6.45 बजे शाम को होटल पर ठहरा था। चालक (अब मृत) एवं खलासी (अब मृत) ने उक्त ट्रक से उतरा और होटल मालिक को बिना किसी विलम्ब के चार कप चाय बनाने का निर्देश दिया क्योंकि ट्रक के मालिक (मृत सीता देवी) भी ट्रक के अन्दर बैठी थी। जब चाय तैयार हो गया, तब चालक एवं खलासी ने होटल में चाय पीया एवं दो गिलास चाय खलासी द्वारा ट्रक के अन्दर ले जाया गया, जिसमें से, एक गिलास चाय लौटा दिया गया। तत्पश्चात्, चालक द्वारा यह कहा गया कि महेन्द्र (अपीलार्थी) चाय नहीं लेगा परन्तु उक्त ट्रक के केबिन के अंदर से कुछ भी सुना नहीं गया था। तत्पश्चात्, उक्त ट्रक लातेहार की ओर बढ़ा। लिखित रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि सूचनादाता ने उक्त होटल मालिक से यह भी सूचना प्राप्त किया कि लगभग 25 से 30 वर्ष उम्र के दो अज्ञात व्यक्ति भी उस होटल में उसी दिन 5.00 बजे शाम में आए थे। एक होटल के बाहर ही रहा एवं दूसरे ने, जो

फुलपैंट, टी-शर्ट एवं जैकेट पहने हुए था एवं एक आँख से 'बगडेर' था, होटल मालिक से पूछा कि क्या बुलेट सिंह चालक, वाहन के साथ आया था? होटल मालिक ने उत्तर दिया कि वह अभी तक नहीं लौटा था।

सूचनादाता अपनी लिखित रिपोर्ट में यह भी दावा करता है कि उसने कुरू में एक व्यक्ति से यह सूचना भी प्राप्त किया कि 4.12.1999 को उक्त ट्रक लातेहार से कुरू चौक की ओर मुड़ा एवं जब सड़क के खराब हालत होने के कारण उसकी चाल धीमी हो गयी थी, तब कुरू थाने के सामने, ट्रक के केबिन दरवाजे के पास दो व्यक्ति आए। दोनों केबिन दरवाजे के दोनों ओर से आए एवं केबिन का दरवाजा खोला तथा उक्त ट्रक के केबिन में प्रवेश किया।

अभियोजन का मामला यह भी है कि उक्त ट्रक अमझरिया घाटी के उत्तर में पड़ा था एवं यह भी उक्त ट्रक के पास दो शव भी पड़े थे एवं एक शव ट्रक के केबिन के अंदर पड़ा था। ऐसी सूचना पर, सूचनादाता F.I.R. दर्ज करने के लिए कुरू थाने गया परन्तु कुरू थाने की पुलिस ने उसकी सूचना दर्ज नहीं की। तत्पश्चात्, वह आरक्षी अधीक्षक से संपर्क करने के लिए लोहरदग्गा गया, जो उपलब्ध नहीं थे परन्तु आरक्षी अधीक्षक के रीडर ने उसे बताया कि F.I.R. उसी थाने में दर्ज किया जाएगा जिस थाने की अधिकारिता में शव बरामद किया गया था। इसलिए, सूचनादाता घटनास्थल पर गया एवं चांदवा थाने के तत्कालीन प्रभारी द्वारा 7.12.1999 को अमझरिया घाटी के पास 10.00 बजे सुबह में उसका F.I.R. दर्ज किया गया।

अभियोजन पक्ष के अनुसार, उक्त ट्रक को कुछ बदमाशों द्वारा चंदवा थाने की अधिकारिता के अंतर्गत अमझरिया घाटी के उत्तर की ओर बलपूर्वक ले जाया गया था एवं उनलोगों ने हत्या कारित किया एवं नकद 2 लाख रुपये तथा 32,000/- रु॰ का बैंक ड्राफ्ट लूट लिया जो उक्त लाख व्यापारी को दिया जाना था।

4. F.I.R. भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 364, 302, 201, 120-B, 379, 34 के अधीन दर्ज किया गया था। अन्वेषण के दौरान, पुलिस द्वारा तीन व्यक्तियों अर्थात् ट्रक मालिक यानि सीता देवी, ट्रक के चालक सुरेन्द्र सिंह @ बुलेट सिंह एवं ट्रक का सफाईवाला, जितेन्द्र ठाकुर का शव बरामद किया गया था। अभियोजन पक्ष के अनुसार, अन्वेषण के दौरान, अभियुक्त महेन्द्र प्रसाद एवं अभियुक्त चंचल भास्कर ने न्यायिकेतर संस्वीकृति की जिससे अपराध में प्रयुक्त वस्तुओं की बरामदगी हुई।

5. अन्वेषण पूरा होने के बाद, अपीलार्थीगण एवं एक अन्य अभियुक्त अर्थात नन्दलाल प्रसाद @ नन्द प्रसाद यादव के विरूद्ध भारतीय दण्ड संहिता की धारा 396 के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया गया था। अभियुक्त ने दोषी न होने का अभिवाक् किया एवं तत्पश्चात्, अभियोजन पक्ष ने मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्य, दोनों पेश किया जिसके आधार पर, विद्वान विचारण न्यायालय ने, जैसा कि इसमें इसके पूर्व पहले ही कहा गया है, अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध एवं दंडित किया।

6. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता, श्री बी॰ एम॰ त्रिपाठी ने विचारण न्यायालय के दोषसिद्धि एवं दण्डादेश को चुनौती देते हुए निवेदन किया कि यह एक साक्ष्यरहित मामला है। घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है एवं विचारण न्यायालय ने अभियुक्त महेन्द्र प्रसाद एवं चंचल भास्कर की अभिकथित न्यायिकेतर संस्वीकृति पर, जो साक्ष्य में ग्राह्य नहीं थे अनुचित रूप से विश्वास करते हुए अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध करने में गंभीर त्रुटि कारित की है। यह भी निवेदन किया गया है कि अभियोजन साक्षियों ने सभी तात्विक बिन्दुओं पर बुरी तरह से एक दूसरे का खण्डन किया है एवं इसलिए, उनके साक्ष्य खारिज होने योग्य हैं।

7. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों का परीक्षण करने के क्रम में हम अपीलार्थीगण के विरूद्ध अभिलेख पर लाए गए अभियोजन साक्ष्य की संवीक्षा करेंगे।

अ॰ सा॰ 1 बिन्देश्वर साहू ने, जो कि लाइन होटल का मालिक है, अभियोजन कथन का समर्थन नहीं किया एवं इसलिए, वह पक्षद्रोही घोषित किया गया।

अ॰ सा॰ 2 बिनोद कुमार अग्रवाल सूचनादाता है। उसने कहा है कि 3.12.1999 को, ट्रक सं॰ BR-24M-8171 लातेहार से लाख लेकर बलरामपुर गया था। बलरामपुर से लौटते समय, उसकी भाभी अर्थात् सीता देवी (पीड़ितों में से एक), जो उस समय रांची में थी, को सेवा सदन से जहाँ उनके भतीजे का ईलाज चल रहा था, को साथ ले लिया गया था। सुरेश @ बुलेट सिंह चालक था एवं जितेन्द्र ठाकुर उक्त ट्रक का खलासी था। जब ट्रक 4.12.1999 की शाम तक लातेहार नहीं पहुँचा तब उसने पूछताछ करना प्रारम्भ किया एवं उस दौरान, वह लाइन होटल, कुरू गया, जहाँ उसका ट्रक सामान्यतया जलपान के लिए रूका करता था, वहाँ उसने यह सूचना पाया कि ट्रक उक्त होटल के सामने रूका था एवं ट्रक के अधिभोगियों ने चाय पी थी। उसने यह भी जाना कि कोई महेन्द्र वहाँ ट्रक पर सवार हुआ था एवं तत्पश्चात् ट्रक अपने गंतव्य की ओर रवाना हुई थी। उसने आगे यह भी कहा कि महेन्द्र लातेहार का स्थानीय व्यक्ति था, जो उक्त ट्रक द्वारा अक्सर यात्रा किया करता था। उसने आगे यह भी कहा कि उसे 6.12.1999 को दूरभाष पर समाचार प्राप्त हुआ था कि ट्रक अमझरिया घाटी में परित्यक्त पड़ा था एवं दो शव ट्रक के पास पड़े थे जबकि एक शव ट्रक के केबिन में पड़ा था। ऐसी सूचना पर, सूचनादाता अन्य लोगों के साथ घाटी गया जहाँ उसने ट्रक सहित इसके केबिन के भीतर सीता देवी का शव पाया। उसके हाथ बंधे एवं गर्दन कटी हुई पायी गयी थी। चालक एवं खलासी का शव भी ट्रक के पास पड़ा था जिनके गर्दनों पर कटने की उपहतियाँ थी।

F.I.R. दर्ज करने के पश्चात्, सूचनादाता महेन्द्र के घर गया जहाँ से उसे पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया एवं उसने उनके समक्ष यह संस्वीकार किया कि उसने बजरंगी, कौशल टोप्पों एवं चंचल भास्कर के साथ उक्त तीनों व्यक्तियों की हत्या कारित की थी एवं नकद 2 लाख रुपये सहित 32,000/- रु॰ का बैंक ड्राफ्ट एवं स्वर्ण आभूषण भी मृतक सीता देवी से लूटे थे।

8. अ॰ सा॰ 3 राम नरेश शर्मा डॉक्टर हैं, जिन्होंने तीनों पीड़ितों, सीता देवी, सुरेश सिंह @ बुलेट सिंह एवं जितेन्द्र ठाकुर के शव का मृत्योपरांत परीक्षण किया था। मृत्योपरांत परीक्षण रिपोर्ट से, यह प्रतीत होता है कि मृतक के शरीर पर निम्नलिखित उपहतियाँ पायी गयी थी:–

(1) मृतक सीता देवी के शरीर पर उपहतियाँ:–

गर्दन पर मृत्यु पूर्व कटने का निशान, धारदार हथियार द्वारा कारित गर्दन पर [6" x 4" x 4"] की छिन्न घाव। इसोफेगस कटा हुआ था।

(2) मृतक सुरेश सिंह @ बुलेट सिंह के शरीर पर उपहतियाँ:–

गर्दन पर धारदार हथियार द्वारा कारित [7" x 3" x 4"] का मृत्यु पूर्व छिन्न उपहति। श्वासनली कटी हुई थी। इसोफेगस कटा हुआ था।

(3) मृतक जितेन्द्र ठाकुर के शरीर पर उपहतियाँ:–

धारदार हथियार द्वारा कारित गर्दन पर [7/2" x 5" x 5"] का मृत्यु पूर्व छिन्न जख्म। श्वास नली कटी हुई थी, इसोफेगस कटा हुआ था।

9. अ॰ सा॰ 4 आदित्य साहू ने अपने साक्ष्य में कहा है कि वह उक्त ट्रक सं॰ BR-24M-8171 द्वारा 2,50,000/- रु॰ मूल्य का लाख बलरामपुर से लातेहार ले गया था। चालक एवं खलासी ने बलरामपुर में लाख व्यवसायी से 2 लाख रु॰ नकद एवं 32,000/- रु॰ का बैंक ड्राफ्ट प्राप्त किया था। लातेहार लौटते समय रास्ते में, ट्रक की मालकिन सीता देवी भी सेवा सदन, राँची से ट्रक पर सवार हुई। 7.12.1999 को, उसे घटना की जानकारी हुई।

10. अ॰ सा॰ 5 सुशील कुमार अग्रवाल ने कहा है कि 7.12.1999 को, वह ट्रक सं॰ BR-24M-8171 की तलाश में अमझरिया घाटी गया था जहाँ उसने ट्रक के केबिन में सीता देवी का शव देखा एवं चालक तथा खलासी का शव ट्रक के पास धरती पर पड़ा था। उसने यह भी कहा कि मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट उसकी उपस्थिति में पुलिस द्वारा तैयार की गयी थी।

11. अ॰ सा॰ 6 बिभूति नारायण मिश्र मामले के अन्वेषण अधिकारी हैं। उन्होंने F.I.R एवं अभिग्रहण सूची प्रमाणित किया है। उन्होंने कहा कि अन्वेषण के दौरान, उपरोक्त तीनों पीड़ितों का शव अभिग्रहित किया गया था एवं अभियुक्त चंचल भास्कर ने उनके समक्ष संस्वीकार किया एवं उसकी संस्वीकृति पर, घटनास्थल से एक पटूवा (जूट) की रस्सी बरामद की गयी थी जिसे अभिग्रहित किया गया था। मृतक सीता देवी की गर्दन ट्रक के स्टीयरिंग के साथ एक रस्सी से बंधी थी। अभियुक्त महेन्द्र प्रसाद ने भी न्यायिकेतर संस्वीकृति की।

12. विद्वान विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में अन्वेषण अधिकारी के लापरवाह अन्वेषण की कठोर आलोचना यह कहते हुए किया कि अन्वेषण अधिकारी ने इस सम्बन्ध में साक्ष्य एकत्रित करने का कष्ट नहीं उठाया कि ट्रक का मालिक कौन था एवं सुसंगत समय पर चालक कौन था एवं उन्होंने यह अन्वेषण नहीं किया कि प्रश्नगत मारूती वैन का मालिक कौन था। उन्होंने बैंक से पूछताछ करके 32,000/- रु॰ के बैंक ड्राफ्ट बरामद करने के लिए भी कोई कदम नहीं उठाया। मारूती वैन का अभिग्रहण भी प्रमाणित नहीं किया गया था।

13. विद्वान वरीय अधिवक्ता, श्री बी॰ एम॰ त्रिपाठी ने निवेदन किया कि अभियोजन पक्ष के अनुसार, अभियुक्त महेन्द्र प्रसाद ने सूचनादाता अ॰ सा॰ 2 बिनोद कुमार अग्रवाल की उपस्थिति में संस्वीकारात्मक अभिकथन किया था परन्तु उक्त साक्षी बिनोद कुमार अग्रवाल ने अभियुक्त महेन्द्र प्रसाद द्वारा किये गए न्यायिकेतर संस्वीकृति के बारे में एक शब्द भी नहीं बोला। विद्वान अधिवक्ता का निवेदन सत्य होना प्रतीत नहीं होता है क्योंकि उक्त साक्षी बिनोद कुमार अग्रवाल (अ॰ सा॰ 2) ने अपने साक्ष्य के पैरा-8 में, विशेषकर यह कहा है कि पूछे जाने पर, महेन्द्र ने कहा कि उसने बजरंगी, कौशल टोप्पों एवं चंचल भास्कर के साथ मिलकर घटना कारित की थी। जिसमें उनलोगों ने 2 लाख रु॰ नकद, 32,000/- रु॰ के बैंक ड्राफ्ट भी लूटे थे एवं उनलोगों ने तीनों व्यक्तियों, अर्थात्, सीता देवी, सुरेश एवं जितेन्द्र की हत्या कारित की थी।

14. अन्वेषण अधिकारी (अ॰ सा॰ 6) ने अपने साक्ष्य में यह कहा है कि अभियुक्त महेन्द्र प्रसाद एवं चंचल ने अपना दोष स्वीकार किया था एवं चंचल द्वारा किये गए संस्वीकारात्मक अभिकथन के आधार पर, घटना-स्थल से एक रस्सी बरामद की गयी थी। उन्होंने पीड़ित सीता देवी की गर्दन एक रस्सी के द्वारा ट्रक के स्टीयरिंग ह्वील के साथ बंधा हुआ भी पाया।

15. उस रस्सी, जो हत्या कारित करने के लिए प्रयुक्त हुई थी, की बरामदगी कराने वाली अभियुक्त महेन्द्र प्रसाद एवं अभियुक्त चंचल भास्कर द्वारा किए गए न्यायिकेतर संस्वीकृति से, स्पष्ट रूप से उपरोक्त तीनों व्यक्तियों की लूट सहित हत्या कारित करने में अपीलार्थीगण की संलिप्तता प्रमाणित होता है। उपरोक्त दोनों अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा किये गए संस्वीकारात्मक अभिकथन को बचाव पक्ष द्वारा अभियोजन साक्षियों के प्रति-परीक्षण में चुनौती नहीं दी गयी है। इसलिए, मेरी राय में, विद्वान विचारण न्यायालय ने उपरोक्त दोनों अभियुक्तों अर्थात्, महेन्द्र प्रसाद एवं चंचल भास्कर द्वारा किये गए न्यायिकेतर संस्वीकृति पर विश्वास करके कोई त्रुटि कारित नहीं की थी। दोनों अभियुक्तों अर्थात् महेन्द्र प्रसाद एवं चंचल भास्कर द्वारा की गयी न्यायिकेतर संस्वीकृति को साक्ष्य में, जिसे विधिसम्मत रूप से अभिलेख पर लाया गया है। अग्राह्य होना नहीं कहा जा सकता है।

मैं अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में कोई महत्वपूर्ण विरोधाभास नहीं पाता हूँ ताकि उनके अभिकथनों को न्यायालय में अविश्वसनीय बना सके।

16. उक्त चर्चाओं एवं निष्कर्षों की दृष्टि में, मैं इस राय का हूँ कि विद्वान विचारण न्यायालय ने भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 302 एवं 392 के अधीन अपराध कारित करने के लिए अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध एवं दण्डित करके कोई त्रुटि कारित नहीं की थी।

17. तद्नुसार, सभी अपीलार्थीगण के विरूद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश को एतद् द्वारा पुष्ट किया जाता है एवं तीनों अपीलों को खारिज किया जाता है।

जया रॉय, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

श्री पिथाराम समोदा एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

दां॰ विविध सं॰ 3906 वर्ष 2001 साथ में आई॰ ए॰ सं॰ 242 वर्ष 2001. 5 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—संज्ञान–धाराएँ 420, 467 एवं 468/34 के अधीन अपराधों का संज्ञान लिया गया है–उसी संपत्ति के लिए पक्षकारों के बीच सिविल वाद को समझौते में समाप्त हुआ था–दाण्डिक मामले में आगे की कार्यवाही उचित नहीं होगी–संज्ञान लिए जाने का आदेश अनवधार्य है–अभिनिर्धारित किया गया, सम्पूर्ण दाण्डिक कार्यवाही न्यायालय की प्रक्रिया का दुरूपयोग है। **(पैरा 4 एवं 5)**

अधिवक्तागण.–Mr. Ananda Sen, For the Petitioners; APP, For the State.

आदेश

नोटिस की तामीला के बावजूद, दां॰ प्रकीर्ण याचिका में विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ।

2. अंतर्वर्ती आवेदन में, याचीगण ने पक्षकारों के बीच सिविल वाद में पश्चातवर्ती उद्घटना अभिलेख पर लाना इप्सित किया, जो उसी भूमि विवाद से सम्बन्धित था जिससे दाण्डिक मामला उद्भूत होता है।

3. F.I.R. में, सूचनादाता–विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 ने परिवाद किया था कि उसने दिनांक 22.11.1966 को पिथाराम समोदा (याची सं॰ 1) के पक्ष में कोई करार निष्पादित नहीं किया था एवं यह कि उसने सूचनादाता को उस संपत्ति से वंचित करने के क्रम में ही उसके हस्ताक्षर का जाली दस्तावेज पेश किया था जो गुमला मार्केट के होटल सं॰ 4, ब्लॉक सं॰ 1 है। F.I.R. उक्त परिवाद पर मुख्य रूप से याची सं॰ 1 के विरूद्ध दाखिल किया गया था। यह प्रतीत होता है कि अन्य याचीगण, याची सं॰ 1 के रिश्तेदार एवं साक्षीगण हैं। सूचनादाता ने अभिधान वाद सं॰ 43/92 दर्ज करने के बारे में भी सब-जज, जमशेदपुर के न्यायालय में वर्णन किया था। उक्त परिवाद के आधार पर विद्वान मजिस्ट्रेट ने याचीगण के विरूद्ध भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 420, 467 एवं 468/34 के अधीन अपराधों का संज्ञान लिया था। याचीगण ने वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन के माध्यम से पक्षकारों के बीच किये गए पारस्परिक परिनिर्धारण के निबन्धनों में उक्त अभिधान वाद सं॰ 43/92 के निस्तारण के सम्बन्ध में पश्चातवर्ती उद्घटना अभिलेख पर लाया है। विद्वान सब-जज, जमशेदपुर ने समझौते के निबंधनों में उक्त वाद निस्तारित किया है। याचीगण ने उक्त समझौता एवं दोनों ही पक्षकारों द्वारा हस्ताक्षरित समझौता याचिका के समर्थन में विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 का बयान अभिलेख पर लाया है।

विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा समर्थित उक्त याचिका में, विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 ने विवादित संपत्ति पर प्रतिवादीगण का अभिधान एवं कब्जा स्वीकार किया है।

4. याचीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री सेन ने निवेदन किया कि F.I.R. के कोरे पठन से, यह सुस्पष्ट होगा कि विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 ने विवादित संपत्ति पर अधिकार, अभिधान एवं कब्जे को चुनौती दी थी, जो अभिधान वाद सं॰ 43/92 का विषय वस्तु था। F.I.R. में की गयी सम्पूर्ण अभिकथन कोई अपराध गठित नहीं करता था क्योंकि यह उक्त सिविल विवाद पर आधारित था, जो अभिधान वाद सं॰ 43/92 का विषय वस्तु था। उक्त अभिधान वाद को अब परिनिर्धारण के निबंधनों में निस्तारित किए जाने के कारण, विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 को आज की तिथि पर एक सिविल कारण भी नहीं है। इस प्रकार, संज्ञान लेने का आदेश अनवधार्य है एवं सम्पूर्ण दाण्डिक प्रक्रिया, न्यायालय की प्रक्रिया का दुरूपयोग है।

5. विद्वान अपर लोक अभियोजक ने याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के उक्त निवेदनों पर विवाद नहीं किया है। उन्होंने निष्पक्ष रूप से यह निवेदन किया है कि चूँकि विवाद मुख्य रूप से प्रश्नगत संपत्ति पर था, एवं उक्त वाद से उद्‌भूत सिविल वाद पर पक्षकारों द्वारा समझौता किया गया है एवं विद्वान निम्नस्थ न्यायालय द्वारा पारित समझौता डिक्री पहले ही पारित किया गया है, इसलिए दाण्डिक कार्यवाही में आगे की कार्यवाही न्याय के हित में अनुचित होगा।

6. उपरोक्त पर विचार करते हुए, यह आवेदन अनुज्ञात की जाती है। एतद् द्वारा, जी॰ आर॰ केस सं॰ 196 वर्ष 1994 में विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 12.1.2001 का संज्ञान लेने वाले आदेश को अभिखंडित किया जाता है साथ ही, एतद् द्वारा, सम्पूर्ण दाण्डिक कार्यवाही अभिखंडित की जाती है।

7. तद्‌नुसार दाण्डिक प्रकीर्ण याचिका एवं अंतर्वर्ती आवेदन दोनों को निस्तारित किया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

ओभरसियर द्विवेदी

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं एक अन्य

क्रि॰ एम॰ पी॰ संख्या 41 वर्ष 2005. 7 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

(क) भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 498A—विवाहित महिला पर क्रूरता–परिवाद में प्रताड़ना का मात्र अभिकथन ही आई॰ पी॰ सी॰ की धारा 498A का कोई अपराध तय नहीं करता है–यद्यपि, क्रूरता के लिए महिला के पति या रिश्तेदारों को दण्ड का प्रावधान किया गया है परन्तु धारा 498A से जुड़े स्पष्टीकरण-ख में सुस्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है। (पैरा 4)

(ख) भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 498A, स्पष्टीकरण-ख–क्रूरता–क्रूरता किसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति के किसी विधिविरूद्ध मांग पूरा करने के लिए किसी विवाहित महिला या उसके रिश्तेदार व्यक्ति को प्रपीड़ित करने के लिए होना चाहिए या यह ऐसी मांग पूरा करने में उसकी या उसके रिश्तेदारों की असफलता के कारण हो। (पैरा 4)

अधिवक्तागण.–Mr. R.S. Mazumdar, For the Petitioner; APP, For the State.

आदेश

इस याचिका में, याची ने दां॰ पुनरीक्षण सं॰ 26 वर्ष 2004 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 8.12.2004 के आदेश के अभिखंडन की प्रार्थना की है जिसके द्वारा विद्वान निम्नस्थ न्यायालय ने विद्वान न्यायिक दण्डाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 17.8.2004 का आदेश अपास्त किया है एवं अभिनिर्धारित किया है कि भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 323, 498A एवं 420 के अधीन एक प्रथम दृष्टया मामला सिद्ध हुआ है एवं न्यायालय ने अनुचित रूप से भारतीय दण्ड संहिता की धारा 447 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया है।

2. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता, श्री मजूमदार ने काफी संक्षिप्त बिन्दू अपनाया है एवं निवेदन किया है कि सम्पूर्ण अभिकथन से, इस मामले में भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 498A एवं 420 के अधीन कोई अपराध नहीं बनता है परन्तु विद्वान पुनरीक्षणीय न्यायालय ने गलत रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि धाराएँ 323 एवं 498A के अधीन एक प्रथम दृष्टया मामला बनता है।

3. यद्यपि विपक्षी पक्षकार की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने यह स्वीकार किया कि किसी मांग का कोई अभिकथन नहीं है जो कि आई॰ पी॰ सी॰ की धारा 498A के अधीन अपराध तय करने वाले अवयवों में से एक है परन्तु निवेदन किया कि चूँकि पति एवं पत्नी का सम्बन्ध मौजूद है, इसलिए पुनरीक्षणीय न्यायालय ने ऐसा सम्प्रेक्षण किया है। उन्होंने अग्रेतर निवेदन किया कि विचारण न्यायालय के समक्ष विचारण निर्णायक प्रक्रम पर है एवं यदि याची को ऐसी बिन्दुयें उपलब्ध है, तब वह उन बिन्दुओं को निम्नस्थ न्यायालय के समक्ष अपना सकता है।

4. मैंने विद्वान अधिवक्ता को सुना है एवं निवेदनों तथा अभिलेखों पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्रियों पर विचार किया है। परिवाद याचिका से, याची द्वारा मांग का कोई अभिकथन प्रतीत नहीं होता है। परिवाद में प्रताड़ना का मात्र अभिकथन ही आई॰ पी॰ सी॰ की धारा 498A के अधीन कोई अपराध तय नहीं करता है। उक्त धारा यद्यपि महिला के पति या रिश्तेदारों को दण्डित करने का प्रावधान करता है यदि महिला द्वारा क्रूरता का अभिकथन किया गया है परन्तु धारा के स्पष्टीकरण–B में क्रूरता को सुस्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है। उक्त स्पष्टीकरण के अनुसार, क्रूरता/प्रताड़ना किसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति के लिए किसी <u>विधिविरूद्ध मांग</u> को पूरा करने के लिए उसे या उससे सम्बन्धित किसी व्यक्ति के प्रपीड़न के लिए होना चाहिए या यह ऐसी मांग पूरा करने में उसकी या उससे सम्बन्धित किसी व्यक्ति की असफलता के कारण हो।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि चूँकि ऐसी मांग को पूरा करने के लिए किसी मांग एवं प्रताड़ना का कोई अभिकथन नहीं है, इसलिए यह अभिकथन धारा 498A के अधीन अपराध तय नहीं करता है। उन्होंने अग्रेतर निवेदन किया कि आई॰ पी॰ सी॰ की धारा 420 का कोई अवयव नहीं है एवं यह कि अपराध भी तय नहीं करता है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420 बेईमानी से संपत्ति के परिदान के लिए उत्प्रेरित करने एवं छल करने के लिए दण्ड विहित करता है।

6. छल को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 415 के अधीन परिभाषित किया गया है। धारा 415 को यहाँ पर नीचे उद्धृत किया गया है:–

> ''415. **छल.**–जो कोई किसी व्यक्ति से प्रवंचना कर उस व्यक्ति को, जिसे इस प्रकार प्रवंचित किया गया है, कपटपूर्वक या बेईमानी से उत्प्रेरित करता है कि वह कोई संपत्ति किसी व्यक्ति को परिदत्त कर दे, या यह सम्मति दे दे कि कोई व्यक्ति किसी संपत्ति रख रखे या साशय उस व्यक्ति को, जिसे इस प्रकार प्रवंचित किया गया है, उत्प्रेरित करता है कि वह ऐसा कोई कार्य करे, या करने का लोप करे जिसे वह यदि इस प्रकार प्रवंचित न किया गया होता तो, न करता, या करने का लोप न करता और जिस कार्य या लोप से उस व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक, ख्याति सम्बन्धी या साम्पत्तिक नुकसान या अपहानि कारित होती है, या कारित होनी सम्भाव्य है, वह ''छल'' करता है, यह कहा जाना है।

7. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिवादी से कपटपूर्वक छल करने या उसे कोई संपत्ति किसी व्यक्ति को परिदत्त करने के लिए बेईमानी से उत्प्रेरित करने या सम्मति देने का कोई अभिकथन नहीं था कि कोई व्यक्ति कोई संपत्ति प्रतिधारित करेगा या परिवादी को जानबूझकर ऐसा करने या न करने के लिए उत्प्रेरित करता है जो यदि वह छली नहीं जाती तो वह ऐसा नहीं करती या लोपित करतीं। तथ्यों को छिपाये जाने का अभिकथन छल के क्षेत्र में नहीं आता है जैसा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 415 के अधीन परिभाषित किया गया है।

8. यद्यपि, याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किये गए निवेदनों में सार है, तथापि, यह सूचित किया गया है कि मामला निम्नस्थ न्यायालय के समक्ष अंतिम निस्तारण के प्रक्रम पर है। याची उपरोक्त आधारों को निम्नस्थ न्यायालय के समक्ष अपना सकता है।

9. इस प्रकार, यह याचिका याची को विचारण न्यायालय के समक्ष सभी बिन्दुओं को उठाने की अनुमति देकर अनुज्ञात किया जाता है। निम्नस्थ न्यायालय इस प्रकार उठाये गए बिन्दुओं पर विचार करेंगे एवं विधि के अनुरूप समुचित आदेश पारित करेंगे।

---

ekuuh; vej'oj lgk;] U;k;efr

अरूण कुमार मण्डल

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 7309 वर्ष 2005. 5 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

झारखंड पेंशन नियमावली, 2000–नियम 43(b)—पेंशन का रोका जाना–नियम 43(b) के अधीन कोई कार्यवाही प्रारम्भ किये बिना पेंशन रोका नहीं जा सकता है–पूर्व की विभागीय कार्यवाही कुछ दण्ड देकर समाप्त किया गया जिसे उच्च न्यायालय द्वारा सम्बन्धित प्राधिकारी को यह छूट देकर अभिखंडित की गयी थी कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करने के पश्चात् कोई नई कार्यवाही प्रारम्भ की जा सकती है–याची को सेवानिवृत्ति के पश्चात् एक कारण-पृच्छा नोटिस निर्गत की गयी थी–यद्यपि पेंशन नियमावली के अधीन कोई कार्यवाही प्रारम्भ नहीं की गयी थी–अभिनिर्धारित, नियम 43(b) के अधीन किसी कार्यवाही की अनुपस्थिति में पेंशन रोका नहीं जा सकता है। (पैरा 6)

अधिवक्तागण.–Mr. S.S. Choudhary, For the Petitioner; Mr. S. Prasad, For the Respondents.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. यद्यपि दिनांक 7.4.2006 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थीगण-राज्य को प्रति-शपथपत्र दाखिल करने का निर्देश दिया गया था, परन्तु ऐसा कोई प्रति-शपथपत्र अभी तक दाखिल नहीं किया गया है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वे मामले के गुणागुणों पर किसी प्रति-शपथपत्र के बिना भी बहस करने को तैयार हैं क्योंकि मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में प्रति-शपथपत्र अपेक्षित नहीं होगा। तद्नुसार, यह रिट याचिका पक्षकारो की सम्मति से स्वीकृति के प्रक्रम पर ही निस्तारित किया जा रहा है।

3. याची अनुमंडल कार्यालय साहेबगंज में एक सहायक के तौर पर कार्यरत था। कतिपय आरोपों के लिए उसके विरूद्ध एक विभागीय कार्यवाही प्रारम्भ की गयी थी एवं इसके आधार पर उसे दिनांक 4.1.1997 के ज्ञापन सं॰ 13 के माध्यम से कुछ दण्ड अधिनिर्णित किया गया था। याची ने उक्त दंडादेश

को सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 3506 वर्ष 1997 में पटना उच्च न्यायालय में चुनौती दी थी। पटना उच्च न्यायालय ने रिट याचिका के परिशिष्ट–2 में यथा अंतर्विष्ट अपने दिनांक 4.1.1999 के आदेश द्वारा इस तथ्य पर विचार करके, उक्त रिट याचिका को निस्तारित किया कि दिनांक 4.1.1997 को उक्त आक्षेपित आदेश पारित करते समय, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का पालन नहीं किया गया था एवं सेवा में व्यवधान एवं तीन वेतनवृद्धियों को संचयी प्रभाव से रोके जाने का आदेश याची के विरूद्ध पारित किया गया था। उच्च न्यायालय ने सेवा में व्यवधान एवं तीन वेतन वृद्धियों के रोके जाने का अधिनिर्णय करने वाले दिनांक 4.1.1997 के उक्त आदेश को अपास्त किया। यद्यपि, सम्बन्धित प्राधिकारी को मामले में विधि के अनुरूप कार्यवाई करने की छूट दी गयी थी।

4. इसी बीच, याची ने, 31.3.2001 को सेवा से निवृत्त हो गया। यह प्रतीत होता है कि 11.8.2001 को याची सेवा से निवृत्ति के पश्चात् प्रारम्भ की गयी कार्यवाही में जाँच अधिकारी द्वारा की गयी सिफारिश के सम्बन्ध में कारण बताओ की जानकारी मांगते हुए एक कारण बताओ नोटिस निर्गत किया गया था। जब कोई उत्तर प्राप्त नहीं किया गया, तब दिनांक 19.2.2002 को परिशिष्ट–3 के माध्यम से याची से यह पूछते हुए एक अन्य कारण बताओ नोटिस निर्गत किया गया था कि याची ने परिशिष्ट–4 के माध्यम से जिसका उत्तर दिया था। तत्पश्चात्, यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थीगण ने दिनांक 22.8.2003 के परिशिष्ट 1 में यथा अंतर्विष्ट एक कार्यालय आदेश निर्गत किया जिसके द्वारा सम्बन्धित प्राधिकारीगण ने दिनांक 4.1.1997 के पूर्ववर्ती दण्डादेश को आंशिक रूप से उपान्तरित/संशोधित किया एवं इसे याची की अप्राधिकृत अनुपस्थिति घोषित करते हुए 26.9.1994 से 12.9.1996 तक के बीच सेवा में व्यवधान का दण्ड अधिनिर्णित किया एवं एदत् द्वारा एक वेतनवृद्धि रोके जाने का दण्ड अधिनिर्णित किया।

5. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची को दण्ड अधिनिर्णित करने वाला परिशिष्ट–1 में यथा अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश अवैध एवं विधि में अमान्य है, क्योंकि उसके विरूद्ध नई विभागीय कार्यवाही प्रारम्भ नहीं की गई थी एवं चूँकी याची पहले ही सेवा से निवृत्त हो चुका था एवं इसलिए प्रत्यर्थीगण पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन कोई कार्यवाही प्रारम्भ किये बिना ऐसा आदेश पारित नहीं कर सकते थे। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि परिशिष्ट–2 में यथा अंतर्विष्ट उच्च न्यायालय के दिनांक 4.1.1999 के निर्देश के अनुसार याची के विरूद्ध सर्वाधिक एक नई कार्यवाही प्रारम्भ की जा सकती थी वह भी तब जब वह सेवा में था न कि उसकी सेवानिवृत्ति के पश्चात।

6. चूँकि राज्य पक्ष ने कोई प्रति–शपथपत्र दाखिल नहीं किया है एवं इसलिए, रिट याचिका में की गयी अभिकथनें, अविवादित रहीं। इस बात से इनकार नहीं किया गया है कि याची के विरूद्ध कभी भी पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन कोई भी कार्यवाही कभी भी प्रारम्भ की गयी थी।

7. उपर अभिकथित तथ्यों से, यह स्पष्ट है कि 4.1.1999 को पारित उच्च न्यायालय के आदेश के पश्चात् प्रत्यर्थीगण ने याची को कारण बताओ नोटिस निर्गत करने में दो वर्ष से अधिक समय लिया एवं याची को सेवा से निवृति के पाँच महीने बाद ही उसे कारण बताओ की पहली नोटिस निर्गत की गयी थी एवं इसके बाद पुनः लगभग छः माह के बाद, कारण बताओ की दूसरी नोटिस निर्गत की गयी थी। इसलिए, उच्च न्यायालय के दिनांक 4.1.1999 के आदेश के अनुसरण में, याची के विरूद्ध कार्रवाई करने में प्रत्यर्थीगण की ओर से प्रत्यक्ष अस्पष्टीकृत एवं अत्यधिक विलम्ब एवं त्रुटियाँ हुई थी। प्रत्यर्थी–प्राधिकारी ने याची के विरूद्ध कोई कार्रवाई करने का विकल्प नहीं चुना जब वह सेवा में था एवं उसकी सेवानिवृत्ति के पश्चात् ही कारण बताओ की एक नई नोटिस याची को निर्गत की गयी थी वह भी अगस्त, 2001 के माह में एवं तब प्रथम नोटिस के छह महीने बाद उसे कारण बताओ की दूसरी नोटिस निर्गत की गयी। प्रत्यर्थी प्राधिकारी को याची के विरूद्ध कार्रवाई करने में अपनी ओर से ऐसे विलम्ब एवं त्रुटियों के लिए अपने आपको धन्यवाद देना चाहिए। स्वीकृत स्थिति यह है कि आक्षेपित

आदेश को याची की सेवानिवृत्ति की तिथि से दो वर्षों से अधिक बाद 22.8.2003 को पारित किया गया है, वह भी पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन कोई कार्यवाही प्रारम्भ किये बिना। निश्चित रूप से परिशिष्ट–1 में यथा अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश को पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन पारित आदेश नहीं कहा जा सकता है। प्रत्यर्थीगण पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन कोई कार्यवाही प्रारम्भ किये बिना याची की सेवा से निवृत्ति के पश्चात् उसे परिशिष्ट–1 में यथा अंतर्विष्ट दंड अधिनियम नहीं कर सकते थे।

8. तद्नुसार, यह रिट याचिका अनुज्ञात किया जाता है एवं दिनांक 22.8.2003 के परिशिष्ट–1 में यथा अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश को एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

---

ekuuh; vftr dekj flUgk ,o vkjñ dñ ejkfB;k] U;k;efrx.k

कार्तिक महतो एवं एक अन्य

बनाम

बिहार राज्य (अब झारखण्ड)

दां० अपील (डी० बी०) संख्या 130 वर्ष 1992 (आर०) 15 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

सत्र विचारण केस संख्या 309 वर्ष 1988 में, श्री आर० डी० राय, सत्र न्यायाधीश, गिरिडीह द्वारा पारित दिनांक 4 जुलाई, 1992 के दोषसिद्धि और दण्डादेश के निर्णय एवं आदेश के विरूद्ध।

(क) भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 376(g)–सामूहिक बलात्संग– एक वर्ष से अधिक के असामान्य विलम्ब के उपरांत अभियोक्त्री द्वारा परिवाद दाखिल–विचारण न्यायालय द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण स्वत: अधिरोपित है, अत: विधि में पोषित नहीं हो सकता–दोषसिद्धि अनुचित और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य से परे, अवधारित की गई। (पैरा 12 एवं 13)

(ख) भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 376—बलात्संग–किसी मिथ्या वादे के मामले में एवं/या प्यार के फलस्वरूप संभोग, इस बहाने में कि वे शादी करेंगे, वादा अपना सारा महत्व खो देता है–यह विश्वास करना कठिन और दुष्कर है कि बलात्संग ढाई महीने तक कारित किया गया हो और इसके उपरांत भी परिवाद दाखिल करने में अभियोक्त्रि ने एक वर्ष से अधिक समय तक प्रतीक्षा की–दण्डादेश पोषित नहीं किया जा सकता। (पैरा 12 एवं 13)

अधिवक्तागण.–M/s S.K. Ughal, T. Kabiraj, For the Appellants; Miss Amita Sinha, For the State.

अजित कुमार सिन्हा, न्यायमूर्ति.–सत्र विचारण केस सं० 309 वर्ष 1988 में, श्री आर० डी० राय, सत्र न्यायाधीश, गिरीडीह द्वारा पारित दिनांक 4.7.1992 के निर्णय के विरूद्ध यह अपील दाखिल की गई है जिसके द्वारा और जिसके अधीन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376(g) के अधीन अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि की गयी है और आजीवन कारावास भुगतने का दण्डादेश किया गया है।

2. अभियोजन का मामला, संक्षेप में, निम्नवत वर्णित है:–

अभियोक्त्री कुन्ती देवी एक अवयस्क बालिका है जिसका विवाह किसी शिव शंकर महतो के साथ हुआ था, तथापि, शिव शंकर महतो के लापता होने के कारण उसका कोई दाम्पत्य संबंध नहीं रहा था और वह अपने माता–पिता के साथ रह रही थी। जनवरी, 1987 के महीने में अभियुक्त–अपीलार्थीगण कार्तिक महतो, महादेव महतो के साथ उसके पिता भोली महतो के पास आया और सहदेव महतो को एक विधुर के तौर पर पेश किया एवं उसकी पुत्री का विवाह उससे करने की सलाह

दी। अभियोक्त्री का पिता प्रस्ताव पर सहमत हो गया और 21.1.1987 को चुमावन समारोह निर्धारित किया गया था। तद्नुसार दोनों अभियुक्त अपीलार्थीगण चुमावन समारोह के लिए उपस्थित हुए और अभियोक्त्री के पिता को समारोह के लिए ग्रामीणों को न बुलाने के लिए भी कहा और इसके बजाय वे शिव मंदिर में लड़की से विवाह करेंगे और उसे अपने घर ले जाएंगे। तब भोली महतो ने नई धोती, कमीज, बर्तन इत्यादि खरीदा और अभियुक्त-अपीलार्थीगण के संग में सामानों के साथ पीड़ित लड़की को लेकर चल पड़ा। गाँव पहुंचने पर एक अपीलार्थी कार्तिक महतो ने भोली महतो को वापस चले जाने को कहा और कहा कि वे लड़की को शिव मंदिर ले जाएंगे और मंदिर में उसका विवाह करा देंगे। भोली महतो भोला-भाला गंवार होने के कारण अपनी पुत्री एवं सामानों को छोड़कर वापस लौट गया। अभियुक्त-अपीलार्थीगण ने कुरमुडीहा से कोबर तक की यात्रा की। तत्पश्चात प्रथम अपीलार्थी कार्तिक महतो ने दूसरे अपीलार्थी सहदेव महतो को उसके गाँव जाने के लिए कहा। और अभियोक्त्री को एक बस में चढ़ने के लिए मजबूर किया और प्रकट किया कि सहदेव महतो उसका साला है और दो-तीन दिनों के बाद बगहरा पहुंचेगा और उसे वापस ले जाएगा।

अभियोजन के अनुसार, अभियोक्त्री को बलपूर्वक और धमकाकर ले जाया गया और फाल्गुन शिवरात्रि तक वहाँ रोके रखा गया। पहले अपीलार्थी ने उसके साथ डेढ़ महीने तक नियमित रूप से बलात्संग किया और उसे भागने नहीं दिया और उसे कैद में भी रखा और तत्पश्चात वह उसे अपने गाँव गनियाडीह में द्वितीय अपीलार्थी सहदेव महतो के घर ले गया जहाँ कार्तिक और सहदेव दोनों ने ही उसके साथ बलात्संग किया और 9वें दिन अभियुक्त-अपीलार्थी संख्या 1 कार्तिक महतो ने उसे दुबारा बगहरा स्थित अपने घर ले आया और उसे बलपूर्वक बंधक बनाए रखा और उसकी मर्यादा का उल्लंघन करना जारी रखा यद्यपि दोनों अपीलार्थीगण विवाहित थे और उनकी पत्नियां जीवित थी।

3. होली के कुछ दिनों के बाद अभियोक्त्री के पिता भोली महतो एक निकटस्थ गांव में अपनी विवाहित बहन के घर गया जहाँ उसे मालूम हुआ कि अपीलार्थी कार्तिक महतो ने किए गए वादे के अनुसार अभियुक्त अपीलार्थी संख्या 2 सहदेव महतो के साथ चुमावन समारोह संपन्न नहीं कराया था और धोखे से अभियोक्त्री को अपने घर ले गया था एवं बलपूर्वक उसे बंदी बनाकर रखा था। तद्नुसार, भोली महतो अपीलार्थी संख्या 1 कार्तिक महतो के घर पहुँचा और अपनी पुत्री को कैद के अधीन और कुछ कठिनाई में पाया। वह उसे मुक्त कराने में सफल रहा और उसे अपने घर ले आया जहां उसने उसकी इच्छा के विरूद्ध किए गए बलात्संग और उसे कैद किए जाने की भयानक व्यथा सुनाई और तत्पश्चात् अभियोक्त्री ने सी॰ जे॰ एम॰, गिरिडीह के समक्ष एक परिवाद दाखिल किया जिसने दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(3) के अधीन उसे बेंगावाद पुलिस थाना भेज दिया और तद्नुसार बेंगावाद पुलिस थाना ने परिवाद के आधार पर एक औपचारिक प्रथम सूचना रिपोर्ट तैयार की और मामला दर्ज किया।

4. अन्वेषण के क्रम के दौरान पुलिस ने गवाहों को परीक्षित किया, घटनास्थल का दौरा किया और सामग्रियाँ एकत्रित की एवं भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376(g) के अधीन अन्ततः अभियुक्त अपीलार्थीगण पर आरोप-पत्र दाखिल किया, तद्नुसार, सी॰ जी॰ एम॰, गिरीडीह ने अपराध का संज्ञान लिया और दिनांक 16.7.1988 के अपने आदेश और बाद में दिनांक 12.9.1988 के अपने आदेश द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थीगण को विचारण का सामना करने का निर्देश देते हुए मामले को सत्र न्यायालय भेज दिया। आरोप भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376(g) के अधीन विरचित किया गया और अभियुक्त अपीलार्थीगण को पढ़कर सुनाया गया और स्पष्टीकृत किया गया जिसको लेकर वे लोग दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किया जाने का माँग किया।

5. अपने मामले को सिद्ध करने के लिए, अभियोजन ने कुल मिलाकर 9 गवाहों को परीक्षित किया है। अ॰ सा॰ 5 कुन्ती देवी स्वयं अभियोक्त्री है, जबकि अ॰ सा॰ 6 भोली महतो उसका पिता है, अ॰ सा॰ 4 बुधनी देवी उसकी माता है, अ॰ सा॰ 3 लालो महतो है, अ॰ सा॰-2 गणेश प्रसाद महतो है और अ॰ सा॰ 1 मणि महतो है, ये ऐसे गवाह हैं जो घटना से सम्बद्ध हैं।

6. अ॰ सा॰ 7 बासुदेव हंसदह एक tendered गवाह है, जिसकी विस्तार से प्रति-परीक्षा नहीं की गई है।

7. अ॰ सा॰ 8 सोमार दास एक औपचारिक गवाह है जिसने प्रथम सूचना रिपोर्ट (प्रदर्श-1) को सिद्ध किया है, जबकि अ॰ सा॰ 9 मोहन दास एक अन्य औपचारिक गवाह है, जिसने परिवाद (प्रदर्श-2) को सिद्ध किया है। इस मामले में अन्वेषण पदाधिकारी की अनुपलब्धता के कारण परीक्षित नहीं किया जा सका।

8. अभियोक्त्री कुन्ती देवी (अ॰ सा॰ 5) का साक्ष्य इंगित करता है कि उसकी गवाही के समय से कोई पाँच वर्ष पहले, अभियुक्त कार्तिक महतो एवं सहदेव महतो उसके पिता भोली महतो के पास आए थे और सहदेव महतो ने उससे विवाह करने का अपना इरादा प्रकट किया था और तद्नुसार, वह अपने पिता, कार्तिक महतो एवं सहदेव महतो के साथ गई और कुरूमडीहा पहुँची। दोनों अभियुक्त थारी, लोटा, गिलास, धोती एवं कमीज लेने के उपरांत उसके पिता को वापस लौटने के लिए तैयार कराने में सफल हो गए यह आश्वासन देते हुए कि सहदेव महतो लड़की से विवाह करेगा। दोनों अभियुक्त अभियोक्त्री को कोबड़ गाँव ले गए जहाँ कार्तिक महतो ने बर्तन एवं कपड़ों को सहदेव महतो के हवाले कर दिया एवं उसे लौट जाने को कहा और तब कार्तिक महतो ने उसे बगहड़ा ले जाने के इरादे से गिरीडीह जाने वाली बस पकड़ी जिसपर उसने आपति की, परन्तु वह उसे बलपूर्वक बगहड़ा ले गया, जहां उसे उसके घर में करीब-करीब डेढ़ महीने तक बन्द रखा गया जहाँ कार्तिक महतो ने लगभग समूची अवधि के दौरान उसका बलात्संग करना जारी रखा। तत्पश्चात, सहदेव महतो बगहड़ा में इसमें शामिल हो गया और दोनों अभियुक्तों ने उसे गनियाडीह पहुँचा दिया। उसका साक्ष्य यह प्रतिविम्बित करता है कि अभियोक्त्री गनियाडीह में अभियुक्त सहदेव महतो के घर में कैद थी जहाँ दोनों अभियुक्त निरंतर उसपर एक के पश्चात दूसरे क्रम में बलात्संग करता रहा एवं गनियाडीह से दोनों अभियुक्त व्यक्तियों ने उसे फिर बगहड़ा पहुँचा दिया और उसे कार्तिक महतो के घर में कैद कर दिया। जब दोनों ने फिर उसका बलात्संग करना जारी रखा। उसका साक्ष्य प्रकट करता है कि उसने निकटस्थ गांव में विवाह की गई अपनी फुआ (पिता के बहन) को सूचित किया और फिर उसके पिता ने सूचना प्राप्त होने के बाद बगहड़ा पहुँचा जिसको उसने भयानक वृत्तांत और उसके ऊपर हुए अत्याचारों को प्रकट किया और फिर उसकी पिता उसे अभियुक्त के चंगुल से छुड़ाने में सफल रहा और उसे अपने घर वापस ले आया जहाँ उसने अपने माता, एवं वहाँ एकत्रित अन्य व्यक्तियों को समूची घटना सुनाई। उसका साक्ष्य यह दर्शाता है कि उसकी प्रतिष्ठा दांव पर लगने के डर के कारण उसने अपने ऊपर यौन शोषण की कड़वे घटना का घूँट पी लिया। इसी दौरान, कार्तिक महतो दुबारा उसके घर आया और उसे अपने चंगुल में लेने का प्रयास किया परन्तु उसका प्रयास विफल करा दिया गया और फिर वह न्यायालय के पास गई और सी॰ जी॰ एम॰, गिरीडीह के समक्ष एक मामला दर्ज किया। अभियोक्त्री ने कटघरे में खड़े दोनों अभियुक्तों की पहचान भी की है। अभियोक्त्री का साक्ष्य यह भी इंगित करता है कि कुछ समय गुजरने के उपरांत प्रथम अभियुक्त अपीलार्थी कार्तिक महतो दुबारा उसके घर आया और उसे वापस ले जाना चाहता था। जिसका अभियोक्त्री के पिता, अ॰ सा॰ 6 द्वारा संपोषण भी किया गया है, परन्तु उसने इन्कार कर दिया और यह कि अपीलार्थी संख्या 1 ने गाली-गलौज की और धमकी दी और एक वर्ष से अधिक समय व्यतीत होने के उपरांत मुख्य न्यायिक दण्डाधिकारी, गिरीडीह के समक्ष एक परिवाद याचिका दाखिल की गई जिन्होंने इसे बैगाबाद पुलिस थाना भेज दिया जहाँ भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376(g) के अधीन मामला दर्ज किया गया।

9. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, प्रथम सूचना रिपोर्ट में घटना को 21.1.1987 से 20.3.1987 के बीच घटित दर्शाया गया है। अभियोजन मामले को दर्ज कराने में असाधारण विलम्ब था और इसे मई, 1988 यानि, लगभग एक वर्ष दो महीने से अधिक समय समाप्त के बाद दर्ज किया गया था। विद्वान विचारण न्यायालय ने परिवाद/प्रथम सूचना रिपोर्ट को दर्ज कराने में असामान्य विलम्ब

के विन्दुओं से निपटते समय अपना स्वयं कारण देने में त्रुटि की है कि यह वित्तीय कठिनाई या सामाजिक समस्या के कारण हो सकता है जो असमर्थनीय है। यह भी तर्क दिया गया है कि अन्वेषण पदाधिकारी को भी परीक्षित नहीं किया गया था जो एक गंभीर दोष था और इसने अभियुक्त अपीलार्थीगण के बचाव को प्रतिकुलता प्रभावित किया है। यह भी तर्क रखा गया है कि लगभग तीन महीनों तक अभियोक्त्री को अपने पिता या किसी गाँव वाले को सूचित करने का एक अवसर नहीं मिला यद्यपि उसे एक जगह से दूसरे जगह ले जाया जा रहा था।

10. यह भी तर्क दिया गया है कि जब अभियोक्त्री का पिता प्रथम अपीलार्थी के घर पहुंचा तो उसकी पुत्री उसके हवाले कर दी गई और अपीलार्थी के घर से अभियोक्त्री की बरामदगी के तथ्य के संबंध में कोई विवाद नहीं है।

यह अवधारित किया गया कि झूठे वादों या प्रेम की ऐसी परिस्थितियों में शारीरिक संबंध इस आधार पर कारित किया गया कि वे विवाहित हो जायेंगे, यह वाद अपना सारा महत्व खो देता है और इस पर विश्वास करना कठिन है कि बलात्कार ढाई महीनों तक कारित किया जा सकता था और उसके पश्चात् भी परिवाद दर्ज करने में अभियोक्त्री ने एक वर्ष की प्रतीक्षा की।

11. मैंने अभियोजन एवं साथ-साथ बचाव-पक्ष के मामले और साक्ष्यों पर विचार किया है। वर्तमान मामला झूठे वादे और द्वितीय अपीलार्थी के साथ अभियोक्त्री का विवाह सम्पन्न कराने के आश्वासन पर आधृत प्रलोभन का एक मामला प्रतीत होता है जिसपर अभियोक्त्री एवं साथ-साथ उसके पिता ने सहमति दी। यह प्रतीत होता है कि विवाह के झूठे वादे के आधार पर अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के साथ उसे एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाते हुए लगभग ढाई महीनो तक यौन कार्य किया। अभियोजन और साथ-साथ गवाहों के साक्ष्य से यह भी प्रकट है कि अभियोक्त्री का पिता अपीलार्थी संख्या 1 के घर आया और अभियोक्त्री सौंप दी गई और उसे वापस लाने पर अपीलार्थीगण दोबारा अभियोक्त्रि एवं पिता के समक्ष आए और अभियोक्त्री को उनके साथ भेजने की मांग की जिससे उसने इन्कार कर दिया। साक्ष्य के अनुसार यह सब दो महीनों के भीतर घटित हुआ परन्तु विचित्र बात है कि परिवाद एक वर्ष से अधिक के असाधारण विलम्ब के उपरांत दाखिल किया गया। इसमें विवाद नहीं हो सकता कि अभियोक्त्री एवं उसके पिता किसी धमकी, जोर-जबरदस्ती या प्रलोभन के बिना इच्छापूर्वक अपीलार्थीगण के साथ गए परन्तु उन्हें आगे जाकर उनपर किए गए विश्वास का दुरूपयोग किया जिसके अनुसार विवाह या चुमावन समारोह संपन्न किया जाना था।

12. अभियोक्त्री की माता अ॰ सा॰ 4 बुधनी देवी के कथन में तात्विक विरोधात्मकताएँ हैं जिसने अपनी प्रति-परीक्षा में कहा कि किसी केदार ने अपीलार्थी संख्या 2 के साथ विवाह का प्रस्ताव दिया था। उसने यह भी कहा है कि अपीलार्थी संख्या 2 सहदेव धोखा-धड़ी करके उसकी पुत्री को ले गया था और उसकी पुत्री को एक महीने तक रखे रहा था और तत्पश्चात उसके पति ने उसकी पुत्री को घर वापस लाया। अ॰ सा॰ 4 बुधनी देवी, जो अ॰ सा॰ 4 के अनुसार विवाह के प्रस्ताव के साथ आई थी वो इस अति महत्वपूर्ण विरोधाभास को और न ही अभियोक्त्री की फुआ को अभियोजन द्वारा परीक्षित किया गया जिसने अभियोक्त्री की दोषपूर्ण कैद की सूचना प्राप्त की थी। मैं बचाव पक्ष द्वारा रखे गए इस तर्क में भी बल पाता हूँ कि अभियोजन मामला दर्ज कराने में असाधारण विलम्ब हुआ था जो एक वर्ष से भी अधिक है और विचारण न्यायालय का तर्क स्वत: अधिरोपित है जो विधि की दृष्टि में सर्मथनीय नहीं हो सकता। यह भी स्पष्ट है कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा यथा मान्यकृत भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376(g) के अधीन सामूहिक बलात्संग का अभियोजन मामला बिल्कुल भी युक्तिसंगत संदेह से परे होकर सिद्ध नहीं है और इस प्रकार भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376(g) के अधीन दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में टिक नहीं सकता। कैद में रखे जाने की अवधि के संबंध में साक्ष्य में असंगताएं हैं।

13. पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों एवं अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर विचार करके यह स्पष्ट है कि अभियोक्त्री और अभियोक्त्री का पिता किसी धमकी या प्रलोभन की अनुपस्थिति में इच्छा से और बिना किसी जोर जबरदस्ती के अपीलार्थीगण के साथ गए और इस प्रकार, अधिक-से-अधिक यह एक झूठे वादे प्रलोभन एवं बाद में अपीलार्थीगण द्वारा विश्वास के दुरूपयोग का मामला हो सकता है और भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376(g) के अधीन दोषसिद्धि नहीं हो सकते जो विधि की दृष्टि में नहीं टिक सकती। इस संबंध में विधि सुस्थापित है कि झूठे वायदे के मामले में या विवाह के वादे के आधार पर शारीरिक संबंध रखने के मामले में वादा अपना सारा महत्व खो देता है। यह विश्वास करना कठिन और दुष्कर है कि बलात्संग ढाई महीने तक किया जाता रहा हो और इसके उपरांत भी परिवाद दाखिल करने में अभियोक्त्री ने एक वर्ष दो महीने की प्रतीक्षा की। ऐसी परिस्थितियों में सत्र विचारण केस संख्या 309 वर्ष 1988 में, श्री आर॰ डी॰ राय, सत्र न्यायाधीश, गिरीडिह द्वारा पारित दिनांक 4.7.1992 का निर्णय, जिसके द्वारा और जिसके अधीन अपीलार्थीगण के भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376(g) के अधीन दोषसिद्धि की गई है और आजीवन कारावास भुगतने का दण्डादेश किया गया है विधि की दृष्टि में टिक नहीं सकता और तद्नुसार यह अपास्त किया जाता है। सभी अपीलार्थीगण जमानत पर है अपने-अपने जमानत बन्धपत्रों के अधीन दायित्वों से वे उन्मोचित किए जाते हैं।

14. इस प्रकार अपील अनुज्ञात की जाती है।

आर॰ के॰ मेराठिया.–मैं सहमत हूँ।

---

ekuuh; ,eñ okbñ bdcky ,o t;k jk;] U;k;efrlx.k

पूजा कुमारी

बनाम

श्री अम्बुज कुमार एवं अन्य

एल॰ पी॰ ए॰ संख्या 452 वर्ष 2008. 13 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

शिक्षा विधि–परीक्षा का मामला–सी॰बी॰एस॰ई॰ द्वारा संचालित प्लस टू की परीक्षा में याची को बैठने की अनुमति नहीं दी गई थी–प्रत्यर्थीगण को याची का प्रपत्र स्वीकारने का निर्देश दिया गया अगर सम्बद्ध विद्यालय को उसकी हाजिरी को लेकर कोई आपति नहीं हो, तो उसे अगली परीक्षा में बैठने की अनुमति दी गई क्योंकि वह पहले ही एक वर्ष खो चुकी थी। (पैरा 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Sujit Narayan Prasad, For the Appellant; M/s M.S. Mittal, Ajit Kumar, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के अधिवक्तागण को सुना।

2. डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) संख्या 2711 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 1.12.2008 के निर्णय से अपीलार्थी व्यथित है। जिसके द्वारा + 2 (प्लस टू) सी॰बी॰एस॰ई॰ परीक्षा में उसे बैठने की अनुमति के लिए रिट याचिका में उसकी प्रार्थना को ग्रहण नहीं किया गया है।

3. यह प्रतीत होता है कि उसे मुख्यतया इस आधार पर परीक्षा में बैठने से रोका गया था कि उसने अपेक्षित हाजिरी पूरी नहीं की थी जो सत्र 2007-2008 के लिए परीक्षा में उपस्थिति के लिए आवश्यक था यद्यपि उसे प्रैक्टिकल परीक्षा में बैठने की अनुमति दी गई थी।

4. 9.1.2009 को मामले पर सुनवाई की गई थी। स्वीकार्यत: सत्र 2007-2008 के लिए परीक्षा में उपस्थित न होकर याची पहले ही एक वर्ष खो चुकी है। आज विद्यालय द्वारा एक शपथपत्र दाखिल किया गया है। उक्त शपथपत्र का पैरा 5 से 7 इसमें नीचे नोट किए जाने योग्य है।

"5. यह कि कहा और निवेदन किया जाता है कि प्रत्यर्थी विद्यालय के अपने छात्रों जो यहाँ अपीलार्थी है के साथ पूरी सहानुभूति है, और उसे 12वीं कक्षा की बोर्ड परीक्षा देने की अनुमति देने को तैयार है बशर्ते कि सी॰बी॰एस॰ई॰ उसकी हाजिरी की कमी को माफ कर दे और उसे परीक्षा-प्रपत्र भरने की अनुमति प्रदान कर दे।

6. यह कि यह कहा और निवेदन किया जाता है कि प्रत्यर्थी विद्यालय विशेष परिस्थितियों में इस माननीय न्यायालय द्वारा निदेशित होने पर उसे परीक्षा प्रपत्र भरने और अभिसाक्षी विद्यालय से बोर्ड परीक्षा देने की अनुमति देने के लिए तैयार है।

7. यह कि यह कहा जाता है और निवेदन किया जाता है कि अभिसाक्षी को अपीलार्थी के विरूद्ध कोई व्यथा नहीं है और सहयोग करने और अपने छात्र के तौर पर याची/अपीलार्थी को बोर्ड परीक्षा देने की अनुमति देने के लिए तैयार है।''

5. केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अगर उस विद्यालय को कोई आपत्ति नहीं है जहाँ से उसे प्रपत्र भरना है तो उसे सत्र 2008-2009 के लिए अगली परीक्षा में बैठने की अनुमति दी जा सकती है।

6. प्रत्यर्थी द्वारा लिए गए उचित पक्ष को ध्यान में रखकर और इस तथ्य को ध्यान में रखकर कि याची पहले ही एक वर्ष खो चुकी है। सत्र 2008-2009 के लिए परीक्षा में बैठने की अपीलार्थी को अनुमति देने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को देना उचित एवं उपयुक्त होगा। प्रत्यर्थी विद्यालय को याची-अपीलार्थी का प्रपत्र स्वीकार करने का निर्देश दिया जाता है जो आवश्यक औपचारिकताओं को पूरा करने के लिए सात दिनों के भीतर प्रत्यर्थी-विद्यालय के पास जाएगा। यह स्पष्ट किया जाता है कि यह आदेश भविष्य के लिए एक पूर्व उदाहरण निर्मित नहीं करेगा।

7. पूर्वोक्त निर्देश के साथ यह अपील निस्तारित की जाती है।

---

ekuuh; vej'oj lgk;] U;k;efr

जानकी प्रसाद शर्मा

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 7240 वर्ष 2005. 5 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

(क) बिहार/झारखण्ड पेंशन नियमावली, 1950–नियम 43(b)—पेंशन का नियतीकरण–सेवानिवृति के उपरांत कालबद्ध प्रोन्नति वापस ली गई और निम्नतर स्तर पर पेंशन को नियत करने का आदेश दिया गया–नियम 43(b) के अधीन एक कार्यवाही के प्रारम्भ किए बगैर वेतन के निम्नतर स्तर पर पेंशन को निर्धारित नहीं किया जा सकता।

(पैरा 4 से 6)

(ख) पेंशन विधि–प्रोन्नति–अगर सेवानिवृत्ति के उपरांत प्रोन्नति का आदेश वापस लिया भी जाता है तो भी राज्य सरकार पेंशन से किसी राशि की वसूली नहीं कर सकती–ऐसे एक मामले में पेंशन को अनिवार्यत: अन्तिम आहरित वेतन के आधार पर नियत करना है।

(पैरा 4 से 6)

निर्णयज विधि.–CWJC No. 1998/2001.

अधिवक्तागण.–Mr. J.P. Sinha, For the Petitioner; Mr. Suresh Kumar, For the Respondents.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और साथ-साथ राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. याची लोक स्वास्थ्य विभाग में पत्राचार लिपिक के तौर पर कार्य करते हुए 31.1.2002 को राज्य सरकार की सेवा से निवृत्त हुआ। उसकी व्यथा यह है कि उसकी सेवानिवृत्ति के उपरांत, रिट याचिका के परिशिष्ट-6 में निहित दिनांक 15.1.2005 के एक कार्यालय आदेश द्वारा, उसे 5.11.1989 के प्रभाव से 19.2.1992 को प्रदत्त पहली कालबद्ध प्रोन्नति अवैधानिक रूप से निरस्त कर दी गई है और इसके परिणामत: उसकी पेंशन गलत रूप से निम्नतर स्तर पर नियत की गई है।

3. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि 10.9.2001 को निस्तारित **''सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1998 वर्ष 2001** में **नकुल राउत बनाम झारखण्ड राज्य एवं अन्य** के मामले में, इस न्यायालय द्वारा यह विनिर्दिष्ट रूप से अवधारित किया गया है कि सेवानिवृति के पश्चात और प्रोन्नति की तिथि के तीन वर्ष से अधिक समय के पश्चात्, राज्य सरकार के पास प्रोन्नति की वैधानिकता और औचित्य के प्रश्न को उठाने का विकल्प नहीं होता है, जो याची को सेवारत रहते हुए उसके पक्ष में प्रदान की गई थी।

4. यह भी निवेदन किया गया है कि याची के सेवारत रहते हुए उसे प्रदत्त प्रोन्नति आदेश की वैधानिकता और औचित्य पर दुबारा विचार करने की अधिकारिता प्रत्यर्थीगण को नहीं है और वे उसे प्रदत्त प्रोन्नति को रद्द नहीं कर सकते हैं। यह भी निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थीगण निम्नतर स्तर पर उसकी पेंशन नियत नहीं कर सकते न हीं वे प्रोन्नति रद्द कर सकते हैं और न ही वे राशि की वसूली कर सकते है। वस्तुत: याची की सेवानिवृत्ति के समय उसके द्वारा प्राप्त किए गए अन्तिम वेतन के आधार पर पेंशन को निर्धारित करना होगा। सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1998 वर्ष 2001 में पारित उक्त निर्णय रिट याचिका के परिशिष्ट-7 के तौर पर संलग्न किया गया है।

5. निर्णय के सुसंगत भाग को इसमें नीचे उत्कथित किया गया है:-

> ''स्वीकार्यत:, याची 31.1.1999 को राज्य की सेवा से निवृत्त हुआ। उसके सेवारत रहते हुए उसे वरीय प्रवर कोटि में प्रोन्नति प्रदान की गई थी। सेवानिवृत्ति के उपरांत और प्रोन्नति की तिथि से तीन वर्षों से अधिक का समय के बाद, अब प्रत्यर्थीगण के पास इस प्रोन्नति की वैधानिकता और औचित्य के प्रश्न को उठाने का विकल्प नहीं है और याची के पक्ष में उसे सेवारत रहते हुए प्रोन्नति प्रदान की गई थी। अगर ऐसा आदेश वापस किया भी जाता है, तो भी प्रत्यर्थीगण याची से किसी राशि की वसूली नहीं कर सकता, और न उसके द्वारा वास्तविक रूप से प्राप्त किए गए अन्तिम वेतन को कम कर सकते हैं, पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, अगर प्रत्यर्थीगण ने स्वयं अपनी ओर से याची द्वारा वास्तविक रूप में प्राप्त किए गए अन्तिम वेतन, यानि, 7700/- रुपए के आधार पर महालेखाकार से पेंशन और उपदान को तय करने का आग्रह किया है, तो महालेखाकार, बिहार को इसे तद्नुसार ही निर्धारित करना चाहिए और याची के पक्ष में तत्काल रूप से भुगतान का यथोचित आदेश पारित करना चाहिए परन्तु इसे इस आदेश की एक प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुतीकरण की तिथि से एक महीने की अवधि के अन्दर हो जाना है।
>
> यह उल्लिखित किया जा सकता है कि प्रत्यर्थीगण प्रवर श्रेणी में प्रोन्नति के आदेश की वैधानिकता और औचित्य से संबंधित मुद्दे को इस विलम्बित अवस्था में दोबारा नहीं खोल सकते जो याची को उसके सेवारत रहते हुए अनुज्ञात की गई थी, न ही कोई राशि वसूल सकते हैं, क्योंकि बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन कोई कार्यवाही नहीं हुई है।''

6. वर्तमान मामले में भी, इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि याची के विरूद्ध बिहार/झारखण्ड पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के अधीन कोई कार्यवाही प्रारम्भ नहीं की गई है। अपितु, प्रत्यर्थी राज्य द्वारा दाखिल प्रति-शपथपत्र में, यह प्रतीत होता है कि प्रति-शपथपत्र के परिशिष्ट-B को निर्गत

करके, निम्नतर स्तर पर पेंशन के नियतीकरण के लिए आदेश पारित किया गया है। वर्तमान मामले में विवादित मुद्दा पूर्णतः **नकुल राउत मामले (उपर)** के निर्णय से आच्छादित होता है।

7. तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है। दिनांक 15.1.2005 के परिशिष्ट-6 में यथा निहित अधीक्षण अभियंता, लोक स्वास्थ्य विभाग के हस्ताक्षराधीन निर्गत आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और बिना किसी विलम्ब के याची द्वारा प्राप्त किए गए अन्तिम वेतन के आधार पर उसकी पेंशन के नियतीकरण के लिए यथोचित उपाय करने का निदेश प्रत्यर्थीगण को दिया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ dñ flUgk] U;k;efr

छतरपाल गंझू एवं अन्य

बनाम

झारखण्ड राज्य

दांडिक अपील (एस॰ जे॰) सं॰ 1363 वर्ष 2006. 12 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

एस॰ सी॰ संख्या 103 वर्ष 2005 में, श्री राम बाबू गुप्ता, अपर सत्र न्यायाधीश, त्वरित न्यायालय, लातेहार द्वारा पारित दिनांक 10.4.2006 के निर्णय एवं दोषसिद्धि के आदेश के विरूद्ध।

भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धाराएँ 395 एवं 397—राजमार्ग पर डकैती–एकल प्रत्यक्षदर्शी ने T.I. परेड में अपीलार्थीगण की पहचान की–अभिनिर्धारित, सामान्यतया डकैती इत्यादि के समान गम्भीर अपराधों के मामलों में न्यायालय संपुष्टि की तलाश करती है परन्तु वर्तमान मामले में एकल प्रत्यक्षदर्शी साक्षी, जिसने अपीलार्थीगण की भागीदारी के ढंग के साथ पहचानने का दावा किया, का परिसाक्ष्य निष्कलंक युक्तिसंगत है–दोषसिद्धि बरकरार रखा गया। (पैरा 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–Mrs. Gouri Devi, For the Appellants; Mr. Swapan Manji, For the State.

डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति.–अपीलार्थीगण ने सत्र केस सं॰ 103 वर्ष 2005 में अपर सत्र न्यायाधीश, त्वरित न्यायालय द्वारा भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 395 एवं 397 के अधीन अभिलिखित अपने दोषसिद्धि के निर्णय एवं दण्डादेश के विरूद्ध यह अपील दायर की है जिसके द्वारा उनमें से प्रत्येक को दस वर्षों एवं सात वर्षों के लिए कठोर कारावास भुगतने एवं प्रत्येक दंड के लिये नियत व्यतिक्रम में 2000/- रु॰ के जुर्माने का भुगतान करने से दंडित किया गया है।

2. अपराध, सड़क पर पत्थर डालकर, अवरोध डालकर पुलिस वाहन सहित काफी संख्या में वाहनों की राजमार्ग डकैती से जुड़ा है। अपराधीगण, जो लगभग 20-25 वर्ष उम्र के थे, और छड़ी, टांगी एवं पिस्तौल से लैस थे, विभिन्न वाहनों में 40-45 मिनटों तक डकैती कारित की, गाड़ियों के खिड़की के शीशे तोड़े इस प्रकार यात्रियों को उपहतियाँ कारित की। चालक-होमगार्ड सं॰ 9175 के अभिकथन पर 21.2.2004 को लगभग 20-25 अज्ञात अपराधियों के विरूद्ध भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 395 एवं 397 के अधीन अपराध के लिए चांदवा थाना केस सं॰ 20 वर्ष 2004 के माध्यम से एक मामला संस्थित किया गया। पुलिस ने अन्वेषण के पश्चात् अन्य लोगों के विरूद्ध अन्वेषण लम्बित रखते हुए अपीलार्थीगण के विरूद्ध आरोप-पत्र सुपुर्द किया। अपीलार्थीगण को विचाराधीन रखा गया था एवं तद्नुसार दोषसिद्ध एवं दंडित किया गया था जिससे वर्तमान अपील उत्पन्न हुआ।

3. आरोप-पत्र में नामित आठ साक्षियों में से अभियोजन पक्ष की ओर से छह साक्षियों को पेश किया गया था। इसके अतिरिक्त, अभियोजन ने फर्दबयान प्रदर्श-1, औपचारिक F.I.R. प्रदर्श-2, सम्पूर्ण

फर्दबयान प्रदर्श-3 एवं टेस्ट आइडेन्टिफिकेशन परेड का चार्ट प्रदर्श-6 पर सूचनादाता जय जंगल गुप्ता के हस्ताक्षर प्रमाणित किया। यद्यपि, विचारण न्यायालय ने लालदेव गंझू के संस्वीकारात्मक अभिकथन को जो पुलिस के समक्ष प्रदर्श-4 के तौर पर प्रमाणित किया गया है, अभिलिखित करने में त्रुटि कारित की है।

4. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अ॰ सा॰ 1 धर्मपाल मेहता एवं अ॰ सा॰ 2 रंजन शर्मा ने यद्यपि अभिकथित घटना का समर्थन किया परन्तु उनमें से कोई भी अभिकथित सड़क डकैती के समय पर किसी भी अपीलार्थीगण या अन्य अपराधियों को पहचानने का दावा नहीं कर सके थे एवं यह कि उनमें से किसी को भी पहले संदिग्धों के टेस्ट आइडेंटिफिकेशन परेड में भाग लेने को नहीं कहा गया था। यह अ॰ सा॰ 3 जय जंगल गुप्ता ही था जिसने गलती से उस अभिकथित घटना के दौरान अपनी पहचान का ढंग प्रकट किये बिना अपीलार्थीगण की पहचान की, विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना की थी एवं इसलिए, विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि के लिए उस एकल साक्षी के असंपुष्ट परिसाक्ष्यों पर भरोसा नहीं किया जा सकता था जो होम गार्ड चालक हुआ करता है। इस साक्षी के परिसाक्ष्य से यह अच्छी तरह से उपधारित किया जा सकता है कि यह पक्षपात से मुक्त नहीं होगा एवं यह संभावना की अपीलार्थीगण को तथाकथित टेस्ट आईडेन्टिफिकेशन परेड से पूर्व उनलोगों कि गिरफ्तारी के पश्चात् उसे दिखाया गया था, को खारिज नहीं किया जा सकता है, ऐसी स्थिति में अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि घोर अन्याय के तुल्य होगा।

5. विद्वान अपर लोक अभियोजक ने अपीलार्थीगण के अधिवक्ता के निवेदनों पर प्रतिवाद करते हुए निवेदन किया कि अभियोजन मामला विचारण न्यायालय के समक्ष सुप्रमाणित था एवं निर्णय में कोई असंगतता नहीं पायी गयी थी ताकि हस्तक्षेप किया जा सके। स्वीकार्यतः, सूचनादाता पुलिस वाहन का चालक है परन्तु उसी समय घायल साक्षी होने के कारण वह उस स्थिति का पीड़ित था क्योंकि पुलिस वाहन जो उसके द्वारा चलाया गया था, के शीशें डकैतों द्वारा तोड़ दिये गए थे एवं ऐसी घटना के दौरान उसके पास अपराधियों को पास से पहचानने का युक्तिसंगत अवसर था।

6. विद्वान विचारण न्यायाधीश ने सम्प्रेक्षित किया कि सूचनादाता, अ॰ सा॰ 3 जय जंगल गुप्ता का साक्ष्य दोषरहित तथा सभी संभव आलोचना से परे पाया गया था एवं यह कि प्रत्यक्षदर्शी में से यह जय जंगल गुप्ता का साक्ष्य ही था जो अधिक महत्व धारित करता है क्योंकि वह घायल पीड़ित था एवं उसके पास अपराधियों/अपीलार्थियों को पास से देखने का अवसर हो सकता था एवं उसके पास उन अपराधियों की छवियों को अपने मन में रखने का युक्तिसंगत अवसर था जिन्होंने डकैती एवं घटना कारित की थी। अपीलार्थीगण को मिथ्या आलिप्त करने का कोई कारण अभियोजन साक्षियों को नहीं था।

7. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, यद्यपि यह निरन्तर रूप से तर्क किया गया है कि अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि सूचनादाता अ॰ सा॰ 3 जय जंगल गुप्ता के एकल परिसाक्ष्यों पर किया गया था परन्तु सम्पूर्ण परिस्थितियों एवं अभिलेख पर विद्यमान सामग्रियों की परीक्षा करने पर मैं यह पाता हूँ कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 395 एवं 397 के अधीन आरोप के लिए दोषसिद्ध अभिनिर्धारित करके त्रुटि कारित नहीं की। टेस्ट आइडेंटिफिकेशन परेड अन्वेषण अधिकारी, अ॰ सा॰ 4 सुरेन्द्र रवि दास के कहने पर कराया गया था जिन्होंने स्पष्ट रूप से यह परिसाक्ष्य दिया कि उन्होंने आंशिक रूप से मामले का अन्वेषण किया था एवं उन्होंने 28.3.2005 को टेस्ट आइडेंटिफिकेशन परेड कराया था जिसमें जय जंगल गुप्ता ने संदिग्धों छतरपाल गंझू, लाखन गंझू एवं रमेश गंझू अर्थात् वर्तमान अपीलार्थीगण की पहचान की थी। अ॰ सा॰ 6 मुकुलेश चंद्र नारायण, तत्कालीन न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, लातेहार ने परीक्षित किया कि लातेहार उप-कारागार में टेस्ट आइडेंटिफिकेशन परेड में 11 संदिग्धों को लाया गया था एवं जय जंगल गुप्ता ने उनमें से तीन अपराधियों की पहचान उनमें से प्रत्येक द्वारा किये गए इस विनिर्दिष्ट प्रकट सार्वजनिक कृत्य द्वारा की थी कि उनलोगों ने ईंट एवं पत्थर फेंक कर वाहन रोका था जिन्होंने संयुक्त रूप से डकैती

कारित किया। TIP चार्ट को प्रमाणित एवं प्रदर्श 5 चिन्हित किया गया था। सूचनादाता अ॰ सा॰ 3 ने विचारण न्यायालय के समक्ष पहचान के अपने दावे को परीक्षित एवं सिद्ध करके प्रमाणित किया। सामान्यतया डकैती इत्यादि के समान गम्भीर अपराधों के मामलों में न्यायालय संपुष्टि की तलाश करती है परन्तु वर्तमान मामले में मैं पाता हूँ कि एकल प्रत्यक्ष साक्षी जिसने अपीलार्थीगण के भागीदारी के ढंग के साथ पहचानने का दावा किया, का परिसाक्ष्य निष्कलंक एवं युक्तिसंगत था।

8. इसलिए, मैं पाता हूँ कि सत्र केस सं॰ 103 वर्ष 2005 में अपर सत्र न्यायाधीश, त्वरित न्यायालय, लातेहार द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि का निर्णय एवं दण्डादेश सुविचारित है जिसमें हस्तक्षेप की अपेक्षा नहीं है। तद्नुसार, यह अपील खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ dñ e|jkfB;k ,o Mhñ thñ vkjñ iVuk;d] U;k;efrZx.k

पेटर सॉय

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं एक अन्य

दाण्डिक अपील संख्या 200 वर्ष 1999. 12 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

सत्र विचारण संख्या 268 वर्ष 1998 में, श्री रबिन्द्र नाथ वर्मा, द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, खूँटी द्वारा पारित दिनांक 15.5.1999 के दोषसिद्धि के निर्णय और दण्डादेश के विरूद्ध।

भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 304, भाग II—हत्या–अभियोजन द्वारा हत्या का आशय स्थापित नहीं–पोस्ट मार्टम रिपोर्ट ने भी इंगित किया कि मृतक के सिर पर उपहति संभवत ऊचाई से पत्थर या ऐसे पदार्थ पर गिरने से हुई हो–धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्धि बरकरार नहीं–भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304, भाग II में सम्परिवर्तित। (पैरा 6 & 7)

अधिवक्तागण.–Mr. A.S. Dayal, For the Appellant; Mr. T.N. Verma, For the Respondents; None, For the Informant.

आर॰ के॰ मेराठिया एवं डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्तिगण.–भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 302/34 एवं 201 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि करने वाले और धारा 302/34 के लिए उसे सश्रम आजीवन कारावास का दण्डादेश करने एवं भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन अपराध के लिए पाँच वर्षों के सश्रम कारावास का आदेश करने वाले दिनांक 14.5.1999 के निर्णय के विरूद्ध यह अपील निर्दिष्ट है जो सत्र विचारण संख्या 268 वर्ष 1998 में विद्वान द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश खूँटी द्वारा पारित किया गया था। तथापि दण्डादेशों को साथ-साथ चलने का आदेश किया गया था।

2. अभियोजन मामला, संक्षेप में, यह था कि सूचनादाता संतोष सॉय (अ॰ सा॰ 1) ने इस प्रभाव की एक लिखित रिपोर्ट दर्ज कराई कि उसकी बड़ी पत्नी सोनामती रामजी (अ॰ सा॰ 3) के पुत्र मार्क्स सॉय ने उसे सूचित किया कि जब वह और उसकी माता सोनमती रामदी (मृतक) 30.12.1996 को लगभग 8 से 9 बजे रात्रि में सोने की तैयारी कर रहे थे, तो अपीलार्थी एवं किसी इनाम लोहरा ने घर में प्रवेश किया और मृतक पर मुक्कों एवं तमांचो से हमला कर दिया। ढिबरी की रोशनी में, उन्हें अ॰ सा॰ 3 द्वारा पहचान लिया गया। यह भी कहा गया था कि उक्त हमले के दौरान, मृतक एक पत्थर पर गिर पड़ा जिससे रक्तस्त्राव वाली उपहति सिर में कारित हो गई। जब अ॰ सा॰ 3 ने अपने को बचाने का प्रयास किया तो उसपर भी तमांचों और मुक्कों द्वारा हमला किया गया जिससे वह जमीन पर गिर पड़ा जिससे सिर में रक्त-स्त्राव वाली उपहति हो गई। अ॰ सा॰ 3 एक चौकी के नीचे छुप गया, अपीलार्थी एवं इनाम लोहरा ने मृतक को घर से बाहर खींच लिया। मृतका सहायता के लिए चीत्कार

कर रही थी। अपीलार्थी एवं इनाम कह रहे थे कि मृतका द्वारा किए जाने वाले जादू-टोना के कारण अपीलार्थी-जोहान मुण्डा के भाई के तीन महीने पहले मृत्यु हो गई थी और इसलिए, वे उसे नहीं छोड़ेंगे। तत्पश्चात्, अ॰ सा॰ 3 सूचनादाता के पास आया और घटना के बारे में सूचित किया। भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 364/34 के अधीन मामला पंजीकृत किया गया। शव 2.1.1997 को एक कुएँ से बरामद हुआ। पुलिस ने भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 एवं 201/34 के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया दोनों अभियुक्त व्यक्तियों पर तद्नुसार आरोप लगाया गया जिसका दोषी न होने का उन्होंने अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया।

2. अभियोजन ने 8 गवाहों को परीक्षित किया। अ॰ सा॰ 1 संतोष सॉय सूचनादाता है; अ॰ सा॰ 2 मेरी सॉय मृतक की गोतनी है; अ॰ सा॰ 3 मार्क्स सॉय सूचनादाता का पुत्र है और वह एकमात्र चश्मदीद गवाह है; अ॰ सा॰ 4 सैम्युल सॉय सूचनादाता का सगा भाई है। जिसे घटना के बारे में अ॰ सा॰ 3 द्वारा सूचित किया गया था; अ॰ सा॰ 5 डॉ॰ ललिता वर्मा चिकित्सा पदाधिकारी है जिसने पोस्ट-मार्टम किया था; अ॰ सा॰ 6 इमैनुअल बोदरा मुख्या है; अ॰ सा॰ 7 करम सिंह मुण्डा वह गवाह है जिसने कुँआ से शव की बरामदगी को सिद्ध किया और अ॰ सा॰ 8 शालिग्राम चौधरी एक औपचारिक गवाह हैं। उक्त गवाहों के अतिरिक्त, अभियोजन ने कतिपय दस्तावेजों को प्रदर्शित किया।

3. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता, श्री दयाल ने निवेदन किया कि पूरा मामला एक बाल गवाह-अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य पर आधृत है। जो लगभग 12 वर्ष का था और अपीलार्थी की दोषसिद्धि बनाए रखने के लिए उसके साक्ष्य पर भरोसा नहीं किया जा सकता।

4. यह सही है कि अ॰ सा॰ 3 एकमात्र चश्मदीद गवाह है, परन्तु विचारण न्यायालय ने उसे परखा और साक्ष्य देने में सक्षम पाया। घटना के तरीका के संबंध में उसके साक्ष्य को चिकित्सीय साक्ष्य से समर्थन मिलता है। अभियोजन मामले की सभी तात्विक विशिष्टियों को अभिलेख पर संपोषण है। हम यह अवधारित करने के इच्छुक नहीं है कि अ॰ सा॰ 3 के साक्ष्य पर भरोसा नहीं किया जा सकता।

5. तथापि, प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी का इरादा मृतक को हत्या करने का था। स्वीकार्यत: अपीलार्थी एवं सह-अभियुक्त इनाम लोहरा ने इस संदेह पर मृतक पर मुक्कों एवं तमाचों से हमला किया कि अपीलार्थी का भाई तीन महीने पहले मर गया था क्योंकि मृतक ने जादू-टोना किया था। स्वीकार्यत:, ऐसे हमले के दौरान वह एक पत्थर पर गिर पड़ी जिसके कारण उसे रक्तस्त्राव वाली सिर की उपहति आई। पोस्ट-मार्टम रिपोर्ट से, यह प्रतीत होता है कि मृत्यु का कारण रक्त-स्त्राव वाली सिर के उपहति और पारिणामिक आघात था। उपहति संख्या 1 मृत्यु को कारित करने के लिए पर्याप्त पाया गया जो अस्थि की ओर विस्तारित होते हुए कान के पीछे दांयी तरफ लगभग 6½" x 1½" x 1" माप की विदीर्ण उपहति था। अस्थियां टूट गई थी। अन्य उपहति बांयी आँख के नीचे लगभग 1" x ½" x ¼" माप की विदीर्ण उपहति थी। डाक्टर ने भी कहा कि पत्थर या ऐसी किसी वस्तु पर ऊंचाई से गिरने के कारण भी ऐसी उपहति कारित हो सकती थी।

6. इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी को जानकारी थी कि ऐसा हमले से मृत्यु कारित होने की संभावना है, परन्तु तथ्यों एवं परिस्थितियों एवं साक्ष्य यह अवधारित करने के लिए पर्याप्त नहीं है कि उसका मृतका की मृत्यु कारित करने का आशय था। शव कुँआ में पाया गया था। डॉक्टर ने यह नहीं कहा है कि मृतक की मृत्यु डूबने के कारण हुई।

7. तथ्यों एवं परिस्थितियों में, हम भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के अधीन दोषसिद्धि एवं दण्डादेश को बनाए रखने के लिए आनत है, परन्तु भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्धि को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304, भाग-II के अधीन एक दोषसिद्धि में सम्परिवर्तित करते हैं। दण्डादेश के प्रश्न पर, विचारण न्यायालय ने सम्परीक्षित किया कि अपीलार्थी की आयु लगभग 25 वर्ष है और वह अनुसूचित जनजाति का एक सदस्य है और उसे यह अन्धविश्वास था कि मृतका

द्वारा किए जाने वाले जादू-टोना के कारण उसके भाई की मृत्यु हो गई। यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी लगभग 12 वर्षों से जेल में है। तद्नुसार उसे उस अवधि के लिए दंडित किया जाता है जो उसके द्वारा पहले ही जेल में व्यतीत की जा चुकी है। इसलिए, अपीलार्थी को तत्काल रिहा करने का निर्देश दिया जाना है, अगर किसी अन्य मामले में वह वांछित नहीं है।

---

ekuuh; ,eñ okbñ bdcky ,o t;k jk;] U;k;efrx.k

नेशनल इन्श्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

रामजी पाण्डेय एवं एक अन्य

एम॰ ए॰ संख्या 117 वर्ष 2004. 19 नवम्बर, 2008 को विनिश्चित।

(क) मोटर यान अधिनियम, 1988, धारा 166—प्रतिकर का दावा–निर्विवादित रूप से अपीलार्थी की पत्नी दुर्घटनाग्रस्त हो गयी जब बीमा पॉलिसी अस्तित्वशील नहीं थी–पॉलिसी रद्द कर दी गयी क्योंकि प्रीमियम के संदाय के लिए धन के स्वामी द्वारा बीमा कंपनी के पक्ष में जारी किया गया चेक अनादृत कर दिया गया और स्वामी को सम्यक् रूप से इत्तिला दी गयी–अभिनिर्धारित, बीमा कंपनी, प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी नहीं है–तथापि, यान का स्वामी अधिकरण द्वारा यथा-अवधारित प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी है। (पैरा 7 एवं 9)

(ख) भारत का संविधान–अनुच्छेद–142—प्रतिकर की वसूली–प्रतिकर अधिकरण के अधिनिर्णय के निबन्धनों में बीमा कंपनी द्वारा संदत्त–उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि स्वामी प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी है लेकिन उसके बावजूद भी, क्योंकि उच्च न्यायालय अनुच्छेद 142 के अधीन अधिकारिता नहीं रख रहा है–कोई निर्देश, प्रतिकर की रकम का संदाय करने के लिये तथा यान के स्वामी से उसको वसूलने का निर्देश बीमा कंपनी को जारी नहीं किया जा सकता है। (पैरा 8 एवं 9)

निर्णयज विधि.–(2008) SCCR 224—भरोसा किया गया।

अधिवक्तागण.–Mr. Alok Lal, For the Appellant; Mr. S. Thakur, For the Respondent.

एम॰ वाई॰ इकबाल, न्यायमूर्ति.–अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा यह अपील वाद सं॰ 32 वर्ष 1997 अभिधान (मोटर यान) में मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 23 जनवरी, 2004 के निर्णय एवं पंचाट के विरूद्ध निर्दिष्ट की जाती है जिसके द्वारा उसने प्रतिकर का अधिनिर्णय किया है और यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अपीलार्थी-बीमा कंपनी उसका संदाय करने के लिए दायी है।

2. मामले का संक्षिप्त तथ्य यह है कि प्रत्यर्थी-आवेदक रामजी पाण्डेय ने अपनी पत्नी रामेश्वरी देवी की मृत्यु के कारण मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन एक प्रतिकर मामला दाखिल किया। दुर्घटना बोकारो रामगढ़ सड़क पर 8.4.1996 को हुई जहां रजिस्ट्रीकरण सं॰ बी॰ आर॰-13एच॰/9259 धारण करने वाली एक ट्रक द्वारा उसे धक्का मार दिया गया था। अन्य तथ्यों के अतिरिक्त, यह आवेदन-पत्र में उल्लिखित किया गया कि प्रश्नगत यान का अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा बीमा किया गया था और 24.3.1996 से 23.3.1997 तक विधिमान्य था। आवेदक का आगे मामला यह था कि मृतका एक गृहणी थी और गृह के कार्यों की व्यवस्था कर रही थी। मृतका की मृत्यु के कारण, आवेदक अनेक परेशानियों एवं कुण्ठा का सामना कर रहा है।

3. नोटिस की तामीला के बावजूद, यान के प्रत्यर्थी-स्वामी ने लिखित कथन दाखिल नहीं किया। दावे का अन्य बातो के साथ-साथ विभिन्न आधारों पर मात्र बीमा-कम्पनी द्वारा यह प्रतिवाद किया गया

था कि दुर्घटना की तारीख पर, यान बीमाकृत नहीं था। यह बीमा कंपनी का विनिर्दिष्ट मामला था कि प्रत्यर्थी–स्वामी ने अपने यान का बीमा कराने के प्रयोजनार्थ बीमा–कंपनी के पक्ष में 5645/- रुपये के लिए दिनांक 23.2.1996 को एक चेक जारी किया। चेक की प्राप्ति पर, बीमा पॉलिसी जारी की गयी और चेक समाशोधन हेतु बैंक भेजा गया। पश्चात्वर्ती तौर पर, 29.3.1996 को कथित चेक बैंक द्वारा अनादृत कर दिया गया। बीमा–कंपनी ने, परिणामत:, पॉलिसी रद्द कर दी और पत्र दिनांकित 4.4.1996 द्वारा यान के स्वामी को इत्तिला दी। आगे अपीलार्थी–बीमा कंपनी का मामला यह है कि बीमा पॉलिसी रद्द कर दिये जाने के पश्चात् अभिकथित दुर्घटना 8.4.1996 को हुई, जिस तारीख पर, यान विधिमान्य रूप से बीमाकृत नहीं था। तथापि 12.4.1996 को प्रत्यर्थी–स्वामी ने प्रीमियम के भुगतान पर एक नयी पॉलिसी ग्रहण की जो 12.4.1996 से 11.4.1997 तक प्रभावी था।

4. जैसा ऊपर सूचित किया गया है, यान का स्वामी–प्रत्यर्थी ने कोई लिखित कथन दाखिल नहीं किया और न ही वाद में कोई प्रतिरक्षा किया। दावेदार एवं बीमा कंपनी ने मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों को पेश किया जिनपर आक्षेपित निर्णय में अधिकरण द्वारा चर्चा की गयी है। आक्षेपित निर्णय के पैरा 13 से 16 तक इसमें इसके नीचे उद्धृत किये जाने योग्य है:–

> "13. ब॰ सा॰ 1 ने यह कथन किया है कि यह चेक त्रिभुवन सिंह द्वारा जारी किया गया और उसका बैंक में बचत खाता था और उसका बचत खाता सं॰ 2288 है। इस साक्षी ने यह स्पष्ट रूप से कथन किया है कि चेक संख्या 882512 दिनांकित 22.3.96 को नेशनल इन्श्योरेंस कं॰ लि॰ के नाम से 5,645/- रुपये का त्रिभुवन सिंह द्वारा जारी किया गया था और यह चेक समाशोधन के लिए भेजा गया लेकिन अपर्याप्त निधि के कारण यह चेक प्रमाण–पत्र के साथ वापस कर दिया गया था। उसने आगे यह कथन किया है कि इस चेक पर त्रिभुवन सिंह ने हस्ताक्षर किया जिसका प्रदर्श–A चिन्हित किया गया है। उसने यह भी स्वीकार किया कि इस वापसी प्रमाण–पत्र पर शाखा प्रबंधक पाण्डेयजी ने हस्ताक्षर किया है जिसको प्रदर्श–B चिन्हित किया गया है। उसने यह भी स्वीकार किया है कि उस समय, त्रिभुवन सिंह के खाते में मात्र 461 रुपये 96 पैसे उपलब्ध थे और अपर्याप्त निधि के कारण वह चेक अनादृत कर दिया गया।
>
> 14. ब॰ सा॰ 2 ने यह कथन किया है कि नेशनल इन्श्योरेंस कंपनी लि॰ का खाता उसके बैंक में उपलब्ध है और यह चैक नेशनल इन्श्योरेंस कंपनी लि॰ द्वारा इस बैंक में प्रस्तुत था और यह चेक फुसरो स्टेट बैंक को भेजा गया लेकिन अपर्याप्त निधि के कारण यह चेक अनादृत कर दिया गया और दस्तावेज पर पृष्ठांकन प्रदर्श A/1 चिन्हित किया गया है और उसका अगला पृष्ठांकन प्रदर्श A/2 चिन्हित किया गया है। इस साक्षी ने आगे उस दस्तावेज को साबित कर दिया है जिसका प्रदर्श–C चिन्हित किया गया है।
>
> 15. ब॰ सा॰ 3 ने यह कथन किया है कि वह इन्श्योरेंस कं॰ लि॰ का कर्मचारी है। इस साक्षी ने यह स्पष्ट रूप से कथन किया है कि ट्रक सं॰ BR-13-H-9259 उसके कार्यालय द्वारा बीमाकृत था। यह स्पष्ट रूप से कथन किया कि इस ट्रक का स्वामी अर्थात् त्रिभुवन सिंह ने चेक सं॰ 882512 दिनांकित 22.3.96 द्वारा 5,645/- रुपये का चेक जारी किया। लेकिन चेक जारी करने के पश्चात् पॉलिसी त्रिभुवन सिंह के पक्ष में जारी की गयी और यह चैक की वसूली के अध्यधीन रहते हुए इसी शर्त पर जारी की गयी। इस साक्षी ने आगे यह कथन किया कि यह पॉलिसी की प्रति है जो मुद्रित प्रारूप में है और तब सहायक शाखा प्रबन्धक सुरज कुमार चौधरी ने इस दस्तावेज पर अपना हस्ताक्षर किया जिसका प्रदर्श–D चिन्हित किया गया है। इस साक्षी ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि चेक जो त्रिभुवन सिंह द्वारा जारी किया गया, उसके खाते में अपर्याप्त निधि के कारण अनादृत कर दिया गया और ऐसी परिस्थितियों में पॉलिसी जो 24.3.96

को जारी की गयी, विभाग द्वारा रद्द कर दी गयी। उसने पैरा-4 में आगे यह कथन किया है कि यदि पॉलिसी ऐसी शर्त में रद्द कर दी गयी है तो कंपनी किसी संदाय के लिए दायी नहीं है। उसने आगे यह स्वीकार किया है कि रद्द की गयी पॉलिसी की इत्तिला स्वामी अर्थात् त्रिभुवन सिंह को दी गयी। उसने उस कार्यालय प्रति को भी साबित कर दिया है जिसका प्रदर्श-E चिन्हित किया गया है। उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि 12.4.96 को त्रिभुवन सिंह बीमा पॉलिसी के कार्यालय में आया और प्रीमियम की रकम जमा किया तथा संदाय के पश्चात् तब कंपनी ने त्रिभुवन सिंह के नाम से पुनः पॉलिसी जारी किया जो यान का स्वामी है। उसने यह स्पष्टरूपेण कथन किया है कि पॉलिसी पुनः जारी की गयी जो 12.4.96 से 11.4.97 तक प्रभावी था और पॉलिसी की प्रति इस साक्षी द्वारा साबित किया गया है जिसका प्रदर्श-F चिन्हित किया गया है। यद्यपि इस साक्षी ने यह स्पष्टरूपेण यह कथन किया है कि घटना 8.4.96 को हुई और ऐसी परिस्थितियों में कंपनी प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी नहीं है। लेकिन आक्रमणकारी यान का स्वामी त्रिभुवन सिंह प्रतिकर की रकम का संदाय करने के लिए दायी है क्योंकि दुर्घटना की तारीख पर यान के स्वामी एवं बीमा कंपनी के बीच कोई संविदा नहीं हुई थी। इस साक्षी ने यह स्पष्ट रूप से 170402/96/31/21/2064 को उस पॉलिसी की संख्या होने का कथन किया है। उसने आगे यह स्वीकार किया है कि ट्रक के स्वामी ने 12.4.96 को प्रीमियम की रकम जमा किया था। इस साक्षी ने आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिये गये इस सुझाव का स्पष्टतः इनकार कर दिया कि ऐसी स्थिति में कंपनी प्रतिकर की रकम का संदाय करने के लिए दायी है।

16. अतएव, मैं पाता हूँ और यह अभिनिर्धारित करता हूँ कि वादी/दावेदार अपनी पत्नी अर्थात् राजेश्वरी देवी की दुर्घटनाजन्य मृत्यु के कारण प्रतिकर की रकम का हकदार है और प्रतिवादी सं॰ 3 नेशनल इन्श्योरेंस कंपनी लिमिटेड दावेदार को प्रतिकर की ऐसी रकम का संदाय करने के लिए दायी है। केस रिकार्ड, साक्षियों के साक्ष्य एवं दस्तावेज के परिशीलन से यह घटित होता है कि पंजीकरण सं॰ बी॰ आर॰-13-एच॰-9259 को धारण करने वाले ट्रक, आक्रमणकारी यान का ड्राइवर उतावलेपन से तथा उपेक्षापूर्वक गाड़ी चला रहा था और इसी वजह से वह दुर्घटना हुई जिसके लिए दाण्डिक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया।''

5. निष्कर्ष के परिशीलन से, यह सुव्यक्त रूप से स्पष्ट हो जाता है कि अधिकरण ने दस्तावेजों द्वारा समर्थित बीमा कंपनी द्वारा की गयी प्रतिरक्षा पर विचार करने के पश्चात, यह अधिनिर्धारित किया कि बीमा कंपनी प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी है।

6. जैसा ऊपर चर्चा की गयी है, यह साक्ष्य पेश करके बीमा कंपनी द्वारा साबित कर दिया गया है कि 24.3.1996 को जारी की गयी पॉलिसी 29.3.1996 को चेक के अनादर के कारण 4.4.1996 को रद्द कर दी गयी। यह बीमा कंपनी का विनिर्दिष्ट मामला है कि 12.4.1996 को यान का प्रत्यर्थी-स्वामी कंपनी के कार्यालय में आया और प्रीमियम के भुगतान पर एक नयी पॉलिसी ग्रहण किया। इन तथ्यों का बिल्कुल प्रत्याख्यान नहीं किया गया है या उन्हें यान स्वामी द्वारा विवादित नहीं बनाया गया है। ऐसी परिस्थितियों में, हमारी विचारित राय में, अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित करने में विधिक गलती की है कि दावेदार बीमा कंपनी अपीलार्थी-बीमा कंपनी से प्रतिकर प्राप्त करने का हकदार है। इस बारे में, **देदप्पा एवं अन्य बनाम ब्रांच मैनेजर, नेशनल इन्श्योरेंस कंपनी लि॰ [(2008) एस॰ सी॰ आर॰ 224]** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विधि सुस्थापित कर दी गयी है। उस मामले में भी, यद्यपि प्रश्नगत यान 17.10.1997 से 16.10.1998 तक की कालावधि के लिए बीमाकृत था, उसकी जारी किये गये चेक के अनावृत होने पर, पॉलिसी बीमा कंपनी द्वारा रद्द कर दी गयी। सर्वोच्च न्यायालय ने विभिन्न विनिश्चयों पर चर्चा करने के पश्चात् अभिनिर्धारित किया:-

''26. हम अधिनियम की धाराएँ 147 एवं 149 के संदर्भ में एक तृतीय पक्षकार के मुकाबले में बीमा कंपनी के कानूनी दायित्व और अन्य मामलों में इसके दायित्वो के बीच विभेद को भूले नहीं है। लेकिन बीमा की एक संविदा के अधीन उद्‌भूत होने वाली दायित्वों को पूरा किया जाना होगा यदि संविदा विधिमान्य है। यदि बीमा का संविदा रद्द कर दी गयी है और सभी समुत्थानों को उसके बारे में सूचित कर दिया गया है, हमारी राय यह है कि बीमा कंपनी दावे का समाधान करने के लिए दायी नहीं होगी।

27. एक लाभप्रद विधान का जो सुविख्यात है, एक ऐसी रीति से अर्थान्वयन नहीं किया जाना चाहिए जिसे कि इसकी परिधि में एक वह लाभ आ सके जिसे पक्षकार को दिये जाने के लिए विधानमंडल द्वारा अनुध्यात नहीं किया गया था। रिजनल डाइरेक्टर, ई॰ एस॰ आई॰ कारपो॰ बनाम रामानुज मैच इण्डस्ट्रीज, ए॰ आई॰ आर॰ 1985; पृष्ठ 278 में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:–

हम इस बात पर संदेह नहीं करते हैं कि लाभप्रद विधानों का विधायी आशय को कार्यान्वित करने की दृष्टि से उदारवादी अर्थान्वयन होना चाहिए लेकिन जहों ऐसे लाभप्रद विधान की स्वयं अपनी एक स्कीम होती है तो स्कीम से परे जाने तथा उन तक कानूनी लाभ को निस्तारित करने के बहाने पर कानून के निस्तार को विस्तारित करने के लिए जिन्हें स्कीम द्वारा आच्छादित नहीं किया जाता है, न्यायालय के लिए कोई समर्थन नहीं होता है।''

अतएव, हम, उच्च न्यायालय की राय से सहमत हैं।''

7. वर्तमान मामले को वापस लौटने पर, निर्विवादित तौर पर बीमा पॉलिसी, प्रीमियम के संदाय के लिए यान स्वामी द्वारा बीमा कंपनी के पक्ष में निर्गत किये गये चेक के अनादर तथा यान के स्वामी को सम्यक रूप से इत्तिला दिये जाने के कारण 4.4.1996 को रद्द कर दी गयी। पॉलिसी 4.4.1996 को रद्द कर दिये जाने के पश्चात्, अभिकथित घटना 8.4.1996 को हुई। पॉलिसी को विवादित बनाने के बावजूद भी यान के स्वामी ने नकद तौर पर प्रीमियम के संदाय पर 12.4.1996 को एक नयी पॉलिसी ले ली। अधिकरण के समक्ष दावा मामले की नोटिस की तामीला के बावजूद भी, स्वामी ने न तो कोई लिखित कथन दाखिल किया और न ही वाद में कोई प्रतिरक्षा की। इस अपील में भी, अनेक अवसरों पर जारी की गयी नोटिसों के बावजूद भी, प्रत्यर्थी हाजिर नहीं हुआ। पूर्वोक्त परिसर में, अधिकरण को यह नहीं अभिनिर्धारित करना चाहिए था कि बीमा कंपनी प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी है। अधिकरण द्वारा अवधारित दायित्व के बारे में पूर्वोक्त निष्कर्षों को विधित: स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

8. तथापि, दावेदार–प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता, श्री एस॰ ठाकुर ने यह तर्क दिया कि सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष मामले में **[(2008) एस॰ सी॰ सी॰ आर॰ 224],** यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय ने विधि को निर्णीत किया, लेकिन बीमा कंपनी को अधिनिर्णय का समाधान करने तथा यान का स्वामी से रकम की वसूली करने का निर्देश दिया। बेहतर मूल्यांकन हेतु, सर्वोच्च न्यायालय के कथित विनिश्चय के पैरा 28 को इसमें इसके नीचे उद्‌धृत किया जाता है:–

"28. किन्तु, चूंकि अपीलार्थी समाज के निम्नतम स्तर से आता है, इसलिए हमारी यह राय है कि इस प्रकृति के एक मामले में, हमें भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी असाधारण अधिकारिता के प्रयोग में, वर्तमान अपीलार्थियों को दावे की रकम का संदाय प्रत्यर्थी सं॰ 1 को करने के लिए तथा यान के स्वामी अर्थात् प्रत्यर्थी 2 से विशेष तौर पर इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए उससे वसूली करने का निर्देश प्रत्यर्थी को देना चाहिए कि कोई अपील उसके द्वारा दायर नहीं की गयी। हमलोग तद्‌नुसार निर्देश देते हैं।''

9. अतएव, हमलोग इस कारण से प्रतिकर की रकम का संदाय करने तथा यान स्वामी से उसको वसूलने का अपीलार्थी–बीमा कंपनी को निर्देश देकर ऐसा निर्देश जारी करने में असमर्थ है कि सर्वोच्च

न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी असाधारण अधिकारिता के प्रयोग में ऐसा निर्देश जारी किया था। अतएव, कोई निर्देश प्रतिकर की रकम का संदाय करने के लिए तथा यान के स्वामी से उसको वसूलने का बीमा कंपनी को निर्देश देकर जारी नहीं किया जा सकता है।

10. पूर्वोक्त कारणों से, यह अपील अनुज्ञात की जाती है और यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि प्रत्यर्थी यान का स्वामी अधिकरण द्वारा यथा अवधारित प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

डॉ॰ (श्रीमती) राफत आरा

बनाम

रांची विश्वविद्यालय एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 1811 वर्ष 2003. 17 नवम्बर, 2008 को विनिश्चित।

बिहार राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 1976—धारा 57-A सह-पठित इसके परिनियम–पैरा 1(1)(c)—प्रोन्नति–प्राध्यापक की नियुक्ति–यदि आरम्भिक नियुक्ति तदर्थ/अस्थायी आधार पर की जाती है और नियुक्त व्यक्ति ने प्राध्यापक के रूप में सेवा के 24 महीने पूरा कर लिया है तो प्रदत्त सेवा, उसके समयबद्ध प्रोन्नति के लिए जोड़ी जायेगी। (पैरा 4 एवं 6)

निर्णयज विधि.–AIR 1990 SC 1627 Civil Appeal No. 1196 of 1995—भरोसा किया गया।

अधिवक्तागण.–Mr. M.S. Anwar, For the Petitioner; Mr. M.K. Laik, For the Respondents; Mr. A.K. Mehta, For the Respondent No. 5.

आदेश

याची (पूर्वकाल से सेवानिवृत्त) को जबकि उर्दू में स्नातकोत्तर विभागाध्यक्ष के रूप में रांची विश्वविद्यालय में पदस्थ किया गया था, ने यह रिट आवेदनपत्र दाखिल किया जिसमें समयबद्ध प्रोन्नति की योजना के अधीन 21.2.1988 से प्रभावी रीडर के रूप में प्रत्यर्थी सं॰ 5 की प्रोन्नति को तथा 17.3.1994 से प्रभावी विश्वविद्यालय के प्रोफेसर के पद को भी चुनौती दी गयी है।

2. याची का मामला यह है कि रांची विश्वविद्यालय में उर्दू में प्राध्यापक पद पर नियुक्त किये जाने पर याची को रांची वीमेन्स कॉलेज में पदस्थ किया गया जहां वह अस्थायी आधार पर प्राधयापक के रूप में कार्य कर रही थी और समय के अनुक्रम में, उसको 1.2.1985 से प्रभावी सेवा के 10 वर्ष पूरे होने पर कालबद्ध योजना के अधीन रीडर के पद पर प्रोन्नत किया गया। पश्चात्वर्ती तौर पर, उसको, वर्ष 2002 में, उर्दू का सर्वाधिक वरीय अध्यापक घोषित किया गया और उर्दू के स्नातकोत्तर विभाग पर, विभागाध्यक्ष स्नातकोत्तर विभाग, उर्दू के रूप में अंतरित कर दिया गया। किन्तु, वर्ष 2003 में प्रत्यर्थी सं॰ 5 को उससे वरीय घोषित किया गया यद्यपि वह रीडर के रूप में उससे बिल्कुल कनिष्ठ था। इस बारे में, यह कथन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 को मात्र छः महीने की कालावधि तक 21.2.1978 को डोरण्डा कॉलेज में अस्थायी आधार पर उर्दू में प्राध्यापक के रूप में नियुक्त किया गया था, यद्यपि उसकी 18.11.1980 को नियमित आधार पर नियुक्त किया गया लेकिन वह बिहार राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 1976, के उपबंध के विरूद्ध था। पश्चात्वर्ती तौर पर, स्कीम के अधीन, उसको प्राध्यापक के रूप में लगातार 10 वर्षों की सेवा के पूरा हुए बिना बिहार राज्य विश्वविद्यालय (घटक कॉलेजो) की सिफारिश पर 21.2.1988 से प्रभावी रीडर के पद पर प्रोन्नत किया गया। ऐसे रूप में, प्रोन्नति समयबद्ध प्रोन्नति से सम्बन्धित परिनियम के उपबंध के विरूद्ध थी। पुनः प्रत्यर्थी सं॰ 5 को तब प्रवृत्त

परिनियम के अधीन यथापेक्षित निरंतर 16 वर्षों की सेवा पूरा किये बिना आयोग को सिफारिश पर 17.3.1994 से प्रभावी प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नत किया गया जो अवैधानिक भी था क्योंकि प्रोन्नति की तारीख पर प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने 16 वर्षों की सेवा पूरी नहीं की थी क्योंकि उसे 18.11.1990 को मात्र नियमित आधार पर प्राध्यापक के रूप में नियुक्त किया गया था। इस प्रकार यह तर्क याची की ओर से दिया गया कि रीडर के पद पर प्रत्यर्थी सं॰ 5 की प्रोन्नति और पश्चात्वर्ती तौर पर प्रोफेसर के पद पर उसकी प्रोन्नति तब प्रवृत्त परिनियम के उपबंध के उल्लंघन में पूर्णतया होती है और ऐसे रूप में, कथित पद पर प्रत्यर्थी सं॰ 5 की प्रोन्नति बिल्कुल अवैधानिक है और अपास्त किये जाने योग्य है।

3. किन्तु, प्रत्यर्थी सं॰ 5 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता यह निवेदन करते हैं कि यह सत्य है कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 को अस्थायी आधार पर प्राध्यापक के पद पर आरम्भिक तौर पर नियुक्ति की गयी थी लेकिन योजना के अधीन स्वयं अस्थायी प्राध्यापक जिसने 31.12.1980 से प्राध्यापक के रूप में कम से कम 24 महीने तक सेवा प्रदान की थी, विश्वविद्यालय की नियमित सेवा में आमेलित किये जाने का हकदार है और परिनियम के उपबंध के अधीन याची को 18.11.1980 को नियमित आधार पर प्राध्यापक के रूप में नियुक्त किया गया और इस स्थिति के अधीन अस्थायी अध्यापक के रूप में प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा प्रदान की गयी सेवा की गणना सेवा के रूप में किया जाना होता है और इसलिए सेवा के समय की गणना उसी तरीख से की जायेगी जब याची को प्रारम्भ में नियुक्त किया गया अर्थात् 21.2.1978 से और इसलिए जब याची 21.2.1978 से निरंतर 10 वर्षों की सेवा पूरी की, तब याची को रीडर के पद पर प्रोन्नत कर दिया गया और पश्चात्वर्ती तौर पर 16 वर्षों की सेवा पूरा करने के पश्चात् प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नत किया गया और ऐसे रूप में, या तो प्राध्यापक के पद पर या प्रोफेसर के पद पर याची की प्रोन्नति से सम्बन्धित आदेश में पूर्णरूपेण कोई अवैधानिकता नहीं हुई है।

4. विद्वान अधिवक्ता इस संदर्भ में यह तर्क देते हैं कि सेवा की सीमा की गणना करने के लिए अस्थायी प्राध्यापक के रूप में याची द्वारा प्रदान की गयी 21.2.1978 से 18.11.1980 तक सेवा की कालावधि के सम्मिलित किये जाने का कारण है जैसे यह **ए॰ आई॰ आर॰ 1990 एस॰ सी॰ 1627** में यथा सं-प्रकाशित **डाइरेक्ट रिक्रूट क्लास II इंजीनियरिंग आफिर्सस एसोसियेशन बनाम स्टेट ऑफ महाराष्ट्र** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है कि स्थानापन्न की कालावधि की भी गणना सेवा की सीमा में की जानी होती है और उसी मत की पश्चातवर्ती तौर पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णीत **डॉ॰ रत्नेश्वर मिश्रा बनाम चान्सलर, एल॰ एन॰ एम॰ यूनिवर्सिटी (सिविल अपील सं॰ 1196 वर्ष 1995)** के मामले में पुनरावृत्ति की गई।

पक्षकारों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर, मात्र प्रश्न जो विचार करने के लिए उद्भूत होता है कि अस्थायी प्राध्यापक के रूप में प्रदान की गयी सेवा का कालावधि की, जबतक प्रत्यर्थी सं॰ 5 को नियमित आधार पर नियुक्त नहीं किया जाता तब तक परिनियम के पैरा 1(1)(c) के निबन्धनों में प्रोन्नति का उसको हकदार बनाने वाली सेवा का अभिनिश्चय करने के प्रयोजनार्थ गणना की जानी होती है। परिनियम के सुसंगत उपबंध निम्नलिखित रूप में पठित है:-

> 1(1) एक विश्वविद्यालय विभाग में या विश्वविद्यालय द्वारा प्रबन्धित और अनुरक्षित एक डिग्री कॉलेज में सेवा करने वाले, एक प्राध्यापक को बिहार राज्य विश्वविद्यालय (घटक कॉलेज) सेवा आयोग की सिफारिश पर, निम्नलिखित शर्तों के अध्यधीन रहते हुए; रीडर के पद तक, कालबद्ध योजना के आधार पर प्रोन्नत किया जायेगा:-
>
> (a) .....
>
> (b) .....

(c) यह कि, उसने एक या एक से अधिक विश्वविद्यालयो में प्राध्यापक के रूप में कम से कम 10 वर्षों की निरंतर सेवा पूरी कर ली हो:

परंतु यह की तब जबकि एक डिग्री कॉलेज में प्रदत्त सेवा की कालावधि के दौरान कॉलेज को सम्बद्ध न किया गया हो तो उसको सम्बन्धित विषय में, इण्टरमीडिएट स्तर तक की भी, इस परिनियम के प्रयोजनार्थ हिसाब में नहीं लिया जायेगा:

परंतु यह और कि एक विश्वविद्यालय से अधिक में प्रदत्त सेवा को निरंतर होना समझा जायेगा यदि एक विश्वविद्यालय की सेवा को छोड़ने तथा एक दूसरे विश्वविद्यालय की सेवा पद ग्रहण करने के बीच व्यपगत कालावधि सेवा परिनियम में यथा विहित सामान्य पद ग्रहण करने के समय से अधिक नहीं होती।

कथित उपबंध को पढ़ने पर, रीडर के पद की प्रोन्नति के लिए मानदण्ड प्राध्यापक के रूप में 10 वर्षों की निरंतर सेवा प्रदान करने का होता है। 21.2.1978 से 18.11.1980 तक कालावधि को **डाइरेक्ट रिक्रूट क्लास II इंजीनियरिंग ऑफिसर्स एसोसिएशन (ऊपर)** अधिकथित आधार को ध्यान में रखते हुए 10 वर्षों की निरंतर सेवा की संगणना करने के लिए सही सम्मिलित किया गया था जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि आरम्भिक नियुक्ति नियमों द्वारा अधिकथित प्रक्रिया का अनुसरण करके नहीं की जाती है लेकिन नियुक्त व्यक्ति नियमों के अनुसार उसकी सेवा के नियमितीकरण निर्बाधित तौर पर पद पर बना रहता है तो सेवा को स्थानापन्न करने की कालावधि की गणना की जायेगी।

कथित आधार याची के मामले में पूर्ण तौर पर लागू होता है क्योंकि याची की सेवा को उस समय परिनियमों के उपबंध के अधीन नियमित कर दिया जाता जब वह स्थायी प्राध्यापक के रूप में 24 महीने की सेवा पूरी कर लिया और अस्थायी प्राध्यापक के रूप में प्रदान की गयी सेवा की कालावधि पर सेवा की सीमा अभिनिश्चित करने के लिए विचार किया गया है।

5. तथापि, याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता का तर्क यह है कि चूंकि परिनियम नियुक्ति को भूतलक्षी प्रभाव प्रदान करने के लिए अनुबंधित नहीं करता है इसलिए उसकी आरम्भिक नियुक्ति को 18.11.1980 को किया होना सदैव समझा जायेगा। यह तर्क कभी भी नहीं मान्य होना प्रतीत होता है क्योंकि परिनियम स्वंय यह आधार प्रदान करता है कि व्यक्ति प्राध्यापक के रूप में 24 महीने की सेवा को मात्र पूरा करने पर प्राध्यापक के पद पर नियुक्त किये जाने का हकदार होगा और इसलिए आरम्भिक नियुक्ति की वह तारीख कभी भी नहीं हो सकती है जब एक व्यक्ति को नियमित आधार पर प्रधानाध्यापक के रूप में परिनियम के उपबंध के अधीन नियुक्त किया गया, वस्तुत: यह वही तारीख होगी जब एक व्यक्ति को अस्थायी/तदर्थ आधार पर नियुक्त किया गया क्योंकि 24 महीने की सेवा के मात्र पूरा होने पर एक व्यक्ति नियमित आधार पर प्राध्यापक के रूप में नियुक्त किये जाने का हकदार हो जाता है। कम या अधिक जब समरूपी प्रश्न, **डॉ॰ रत्नेश्वर मिश्रा बनाम चान्सलर, एल॰ एन॰ एम॰ यूनिवर्सिटी (ऊपर)** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष विचारणार्थ आया तब यह अधिकथन किया गया कि आरम्भिक नियुक्ति निरंतर सेवा की गणना करने के प्रयोजनार्थ तारीख होगी। अतएव, यह कभी भी नहीं प्रतीत होता है कि विश्वविद्यालय प्राधिकरण या बिहार राज्य विश्वविद्यालय (घटक कॉलेज) सेवा आयोग ने या तो प्राध्यापक के पद की या प्रोफेसर के पद की प्रत्यर्थी सं॰ 5 को प्रोन्नति प्रदान करने में कोई अवैधानिकता कारित की है।

6. तद्नुसार, मुझे इस आवेदनपत्र में कोई गुणागुण नहीं मिलता है। अतएव, यह खारिज की जाती है।

ekuuh; je'k dekj ejkfB;k] U;k;efr

मेसर्स भारत कोकिंग कोल लि॰, कोयला नगर, कोयला भवन, थाना एवं जिला धनबाद (सभी में)

बनाम

रामलाल महतो एवं अन्य (105 में)
बंशी मोदाद एवं अन्य (106 में)
नारायण ओझा एवं अन्य (107 में)
नारायण प्रसाद ओझा एवं अन्य (108 में)
नकुल माहतो एवं अन्य (109 में)
रामलाल माहतो एवं अन्य (110 में)
रामलाल महतो एवं अन्य (111 में)
शंकर बौरी एवं अन्य (112 में)
फगु बौरी एवं अन्य (113 में)
हिरू माहतो एवं एक अन्य (114 में)
सुफल माहतो एवं अन्य (115 में)
दिलीप कुमार माहतो एवं अन्य (116 में)
भुवन मोदक एवं अन्य (117 में)
रामलाल माहतो एवं अन्य (118 में)
मदन मोदक एवं अन्य (119 में)
पागल बौरी एवं अन्य (120 में)
खेती मोदक एवं अन्य (121 में)
मदन मोदक एवं अन्य (122 में)
रामलाल माहतो एवं अन्य (123 में)
चांदी चरण ओझा एवं अन्य (124 में)
दिलीप कुमार माहतो एवं अन्य (125 में)
नकुल माहतो एवं अन्य (126 में)
रामलाल महतो एवं अन्य (127 में)
हिरू महतो एवं अन्य (128 में)
बादल मोदक एवं अन्य (129 में)
राधिका मैरानी एवं अन्य (130 में)
युधिष्ठिर पाण्डेय एवं अन्य (131 में)
रामलाल महतो एवं अन्य (132 में)
श्रीमती राधिका मैरानी एवं एक अन्य (133 में)
रामलाल महतो एवं अन्य (134 में)
मिश्री लाल शर्मा एवं अन्य (135 में)
राजू माहतो एवं अन्य (136 में)
राजू माहतो एवं अन्य (137 में)

एफ॰ ए॰ सं॰ 105, 106, 107, 108, 109, 110, 111, 112, 113, 114, 115, 116, 117, 118, 119, 120, 121, 122, 123, 124, 125, 126, 127, 128, 129, 130, 131, 132, 133, 134, 135, 136, 137 वर्ष 2008. 10 नवम्बर, 2008 को विनिश्चित।

भूमि अर्जन अधिनियम, 1894—धारा 4—भूमि का अर्जन–भूमि खनन प्रयोजन के लिए अर्जित जिसके लिए भूमि के किसी विकास की अपेक्षा नहीं है–समान औसत दर पर प्रतिकर अधिनिर्णीत–अभिनिर्धारित, कृषि भूमि खनन प्रयोजन के लिए अर्जित और औद्योगिक क्षेत्र के अन्दर स्थित–प्रतिकर की समान या सपाट दर, अर्थात् 35,000/- रुपये प्रति एकड़ न्यायसंगत है। **(पैरा 10)**

निर्णयज विधि.–2008 AIR SCW 5241—चर्चा की गई।

अधिवक्तागण.–Mr. Anoop Kumar Mehta, For the Appellant; Mr. M.S. Akhtar, For the State; Mr. R.K. Mukhopadhyay, For the Respondents.

आदेश

सभी मामलों में अपीलार्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता, श्री ए॰ के॰ मेहता, राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले श्री एम॰ एस॰ अख्तर एवं प्रत्यर्थियों की ओर से श्री आर॰ के॰ मुखोपाध्याय को सुना।

2. अपीलों का यह बैच, भूमि अर्जन संदर्भ केस सं॰ 61 वर्ष 1990 से 94 वर्ष 1990 तक (कुल 33 मामले) में विद्वान भूमि अर्जन न्यायाधीश (संक्षेप के लिए ''भू॰ अ॰ न्यायाधीश''), धनबाद द्वारा पारित दिनांक 21.3.1998 के सामान्य निर्णय (4.4.1998 को हस्ताक्षरित अधिनिर्णय) से उद्भूत होता है।

3. श्री मेहता ने यह तर्क दिया कि 350/- रुपये प्रति डेसीमल की सपाट दर पर प्रतिकर का अधिनिर्णय, जो 35,000/- रुपये प्रति एकड़ तक आता है दोषपूर्ण है क्योंकि अर्जित भूमि विभिन्न प्रकार की थी। उन्होंने आगे यह तर्क दिया कि दस्तावेजों (प्रदर्श A-1 & A-2) पर, जिनपर अपीलार्थी द्वारा विश्वास किया गया, विद्वान भू॰ अ॰ न्यायाधीश द्वारा विचार नहीं किया गया।

4. राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले श्री अख्तर ने श्री मेहता का समर्थन किया और **कान्ता देवी एवं अन्य बनाम स्टेट ऑफ हरियाणा, 2008 ए॰ आई॰ आर॰ एस॰ सी॰ डब्ल्यू॰ 5241** के मामले में संप्रकाशित निर्णय को निर्दिष्ट कर यह तर्क दिया कि किसी भी दशा में, विकास प्रभारो को प्रतिकर से कटौती किये जाने की अपेक्षा की जाती है।

5. संक्षेप में तथ्य ये हैं कि मौजा आरलगरिया, थाना केन्दुआ, जिला धनबाद में स्थित लगभग 159.32 ½ एकड़ भूमि अपीलार्थी भारत कोकिंग कोल लि॰ (बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ संक्षेप के लिए) बिहार राज्य द्वारा अर्जित की गयी, देखे; भूमि अर्जित अधिनियम की धारा 4 के अधीन जारी की गयी अधिसूचना सं॰ 1 एल॰ ए॰/धन/58/83-84-277 (आर) दिनांकित 1.8.1983 के अधीन भू॰ अ॰ वाद सं॰ 35/1983-84। अर्जित भूमियों पर कब्जा बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ को दिया गया। अधिनिर्णीत व्यक्तियों ने इस आधार पर विरोध के अधीन भूमि अर्जन अधिकारी द्वारा अधिनिर्णीत प्रतिकर की रकम प्राप्त किया कि वह अपर्याप्त थी।

6. दावेदारों का मामला यह था कि प्रतिकर अत्यंत कम था और इसको 2,00,000/- रुपये प्रति एकड़ नियत किया जाना चाहिए था। अर्जित भूमियां कोयले की खान के क्वार्टरों और सड़क, जल, विद्युत, कॉलेज, अस्पताल एवं बाजार काम्पलेक्सो इत्यादि की सुविधा से युक्त होने वाले बंगलो के पास औद्योगिक क्षेत्र के अन्दर स्थित थी, और इसीलिए, मूल्यांकन कृषि भूमि के रूप में नहीं किया जाना चाहिए था और सभी मामलों के लिए समान दर होनी चाहिए।

7. दूसरी ओर, बिहार राज्य और बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ ने इस आधार पर अधिनिर्णीत व्यक्तियों के दावों को विवादित बताया कि अर्जित भूमि का मूल्यांकन अधिसूचना के जारी किये जाने के पूर्व दो वर्षों

के अन्दर निष्पादित किये गये विक्रय विलेखों से, धनबाद रजिस्ट्रीकरण कार्यालय से संग्रहित प्रचलित बाजार दर के आधार पर नियत किया गया और ऐसे रूप में प्रतिकर पर्याप्त था।

8. अतएव, विचारण न्यायालय के समक्ष विवाद्यक यह था कि क्या राज्य सरकार द्वारा अधिनिर्णीत किया गया प्रतिकर अपर्याप्त और अनुचित था और यदि वैसा हो तो प्रतिकर की किस मात्रा को उचित होना चाहिए।

9. ग्यारह साक्षियों की उन दावेदारों की ओर से परीक्षा की गयी जिन्होंने यह कहा कि भूमियां चास-धनबाद मुख्य सड़क के समीप में स्थित थी, जहां बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ की अनेक परियोजनाएं चल रही थी और अर्जित भूमियां जल, विद्युत इत्यादि की सुविधा से युक्त होने वाली औद्योगिक क्षेत्र के अन्दर थी। पक्षकारों ने कतिपय दस्तावेजों पर विश्वास किया। विद्वान भू॰ अ॰ न्यायाधीश ने पाया कि भूमि अर्जन अधिकारी ने दर रिपोर्ट (प्रदर्श-C) के क्रम सं॰ 9 में प्रदर्शित गोरा I भूमि के आधार पर अर्जित भूमि का मूल्यांकन किया जो 26.8.1982 को निष्पादित विक्रय विलेख के अनुसार 16,667/- रुपये की दर पर था लेकिन क्रम सं॰ 3 में विक्रय विलेख जो 19.2.1981 को स्वयं बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा क्रय की गयी एक भूमि से सम्बन्धित 1,11,250/- रुपये की दर पर हैं और क्रम सं॰ 10 में प्रदर्शित दर जो 40,000/- रुपये प्रति एकड़ थी और 27,727/- रुपये प्रति एकड़ की दर पर क्रम संख्या 16 में प्रदर्शित दर किसी कारण को समनुदेशित किये बिना या उस पर अविश्वास किये बिना विचार नहीं किया गया, और इसलिए, विद्वान भू॰ अ॰ न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि औसत दर, दर-रिपोर्ट में प्रदर्शित विक्रयो के आधार पर नियत की जानी चाहिए थी और मात्र क्रम सं॰ 9 में वर्णित विक्रय मूल्य के आधार पर एकमात्र भूमि के मूल्य पर नियत किया जाना बिल्कुल मनमानी एवं अनुचित था। प्रदर्श 2 उसी गांव के गोरा II भूमि के बारे में दिनांक 16.11.1981 का एक विक्रय-विलेख था जिसको 250/- रुपये प्रति डेसीमल अर्थात् 25,000/- रुपये प्रति एकड़ पर बेचा गया। विक्रय-विलेख दिनांकित 1.7.1983 ने यह दर्शाया कि बियाड भूमि 600/- रुपये प्रति कट्ठा की दर पर बेची गयी जो लगभग 400/- रुपये प्रति डेसीमल हो जाती है। भूमि संदर्भ केस सं॰ 10 से 30/90 तक के निर्णय को भी प्रदर्श-1 के रूप में भी पेश किया गया। भू॰ अ॰ न्यायाधीश ने यह पाया कि कथित मामले में भू॰ अ॰ न्यायाधीश ने पूर्वोक्त विलेखों तथा गोखले रिपोर्ट पर विश्वास किया था और 40,000/- रुपये पर गोरा I लैण्ड की दर नियत किया, बहाल भूमि की दर 80,000/- रुपये की दर पर, कनाली भूमि की दर 50,000/- रुपये की दर पर; बैड भूमि की दर 26,666/- रुपये की दर पर; गोरा II भूमि 13,333/- रुपये की दर पर; गोरा III भूमि 3,333 पर; तथा परती भूमि, 2,500/- रुपये की प्रति एकड़ की दर पर नियत की गयी। तथापि, भू॰ अ॰ न्यायाधीश को अधिनिर्णीत व्यक्तियों के इस तर्क में बल मिला कि अर्जित भूमि औद्योगिक क्षेत्र के अन्दर स्थित थी जहां अनेक बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ परियोजनाएं चल रही थी और इसलिए अर्जित भूमियों में एक समान क्षमताएं है और अतएव, सभी भूमियों का मूल्यांकन एक ही दर पर किया जाना चाहिए। इसने इस बात पर भी विचार किया कि बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ क्षेत्र के अन्दर भूमि का मूल्य उद्योगो, क्वार्टरों के निर्माण तथा बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के बंगलो के कारण वास्तव में बढ़ रहा था। मामले के सभी सुसंगत पहलुओं पर विचार करने के पश्चात्, इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि संपूर्ण निष्पक्षता से अर्जित भूमियों का आधुनिक एवं औसत मूल्यांकन 250/- रुपये प्रति डेसीमल अर्थात् 25,000/- रुपये प्रति एकड़ से कम नहीं होना चाहिए।

10. मामले की यथा ऊपर अंकित किये गये तथ्यो एवं परिस्थितियों में श्री मेहता का यह तर्क कि एक समान सपाट दर नियत नहीं की जानी चाहिए थी, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। भू॰ अ॰ न्यायाधीश ने यह सही अभिनिर्धारित किया है कि एक औसत सपाट दर अर्जित की गयी भूमियों के लिए नियत की जानी चाहिए क्योंकि वे एक समान क्षमताओं एवं मूल्यांकन की थी। आगे दर रिपोर्ट (प्रदर्श-C) जिस पर राज्य द्वारा विश्वास किया गया तथा बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ को ध्यान में रखते हुए प्रदर्श A-1 तथा A-2 पर पृथक रूप से विचार करना आवश्यक नहीं था। प्रदर्श A-1 एक विक्रय-विलेख दिनांकित 17.2.1981 है जिसके द्वारा एक एकड़ भूमि मात्र 1000/- रुपये में बेची गयी तथा प्रदर्श A-2 मात्र 1000/- रुपये में बेची गयी, 6 डेसीमल भूमि के लिए 26.8.1982 को निष्पादित किया गया

एक विक्रय-विलेख है जो 16,667/- रुपये प्रति एकड़ हो जाता है। लेकिन यह अभिलेख पर नहीं लाया गया है कि कथित प्रदर्श A-1 तथा A-2 के अधीन विक्रय की गयी भूमियों में प्रश्नगत भूमियो के साथ एक समान क्षमताएं थी। **कान्ता देवी (ऊपर)** के निर्णय में विकास-प्रभारों के लिए कटौती के प्रश्न पर विचार किया गया। कथित मामले में, भूमियां एक नये अनाज मंडी, विश्राम भवन, विपणन समिति की कर्मचारीवृन्द के लिए कमरो के स्थापन हेतु अर्जित की गयी थी। वर्तमान मामले में, स्वीकार्यरूपेण, भूमियों का अर्जन खनन प्रयोजन के लिए किया गया था जिसके लिए भूमि के किसी विकास की अपेक्षा नहीं की जाती है। अभिलेख पर सामग्रियों तथा पक्षकारों की ओर से विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा दिये गये तर्कों पर विचार करने के उपरांत मुझे, आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई भी कारण नहीं मिलता है।

तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है। किन्तु, कोई खर्च नहीं।

---

ekuuh; vftr d|ekj flUgk] U;k;efrl

श्री एस० सी० श्रीवास्तव, विद्युत कार्यपालक अभियंता, विद्युत आपूर्त्ति डिविजन, आदित्यपुर खारशवान के माध्यम से झारखण्ड राज्य विद्युत बोर्ड

बनाम

श्री बी० राम, महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, सिंहभूम, क्षेत्र, जमशेदपुर एवं एक अन्य

डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 2197 वर्ष 2003. 16 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

(क) विद्युत आपूर्त्ति अधिनियम, 1948—धारा 5 सहपठित टैरिफ अधिसूचना, 1993—खण्ड 16.9(A)—विद्युत संयोजन का प्रत्यावर्तन-बिल में दर्ज राशि को लेकर विवाद-उपभोक्ता को सुनवाई किए बगैर अभ्यावेदन का निस्तारण-राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला की रिपोर्ट के आधार पर मीटर के साथ छेड़छाड़ करने का कोई निश्चायी सबूत नहीं निकाला जा सकता-दोनों पक्षों को सुनवाई करने के पश्चात् मामले पर फिर से निर्णय करने के लिए दुबारा महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता को भेजा गया। (पैरा 10 एवं 11)

(ख) विद्युत आपूर्ति अधिनियम, 1948—धारा 5—अधिकारिता-प्रभारी महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता को पूर्ण वित्तीय शक्ति होती है और वह विवाद का निर्णय करने में सक्षम है। (पैरा 9)

अधिवक्तागण.—M/s R.N. Sahay, P.K. Singh, Rahul Kumar, For the Petitioner; M/s Jaya Saha, N.K. Pasari, For Respondent No. 1; Mr. Indrajit Sinha, For Respondent No. 2.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका को निम्नांकित अनुतोषों के लिए दाखिल किया गया है।

(i) महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, सिंहभूम क्षेत्र, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 8.5.2002 के आदेश को निरस्त करने हेतु उत्प्रेषण के एक रिट को निर्गत करने के लिए, जिसके द्वारा उसने याची के प्रतिनिधि की सुनवाई किए बगैर और अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों/दस्तावेजों पर उचित रूप से विचार किए बगैर प्रत्यर्थी संख्या 2 के पक्ष में अवैधानिक रूप से अभ्यावेदन का फैसला कर दिया है।

(ii) दोनों पक्षों, यानि, याची एवं प्रत्यर्थी संख्या 2 को सुनवाई का उपयुक्त अवसर देने के उपरांत और प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा किए गए वैद्युत ऊर्जा के मूषण के संबंध में सभी संभावित पहलुओं का अवलोकन करके मामले पर फिर से निर्णय करने के लिए महाप्रबंधक-सह-मुख्य

अभियंता, सिंहभूम क्षेत्र, जमशेदपुर को आदेश करने वाले परमादेश के एक रिट को निर्गत करने के लिए।

2. तथ्य, संक्षेप में, निम्नांकित रूप से वर्णित है:–

याची विद्युत (आपूर्त्ति) अधिनियम, 1948 की धारा 5 के अधीन गठित एक सांविधिक निकाय है और प्रत्यर्थी संख्या 1 महाप्रबंधक–सह–मुख्य अभियंता है जिसने सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1620 वर्ष 2001 में 12.4.2002 को इस न्यायालय द्वारा निर्गत निर्देश के अनुसरण में दिनांक 8.5.2002 के आक्षेपित आदेश को पारित किया है, जिसे इस न्यायालय में चुनौती दिये जाने की ईप्सा की गयी है। प्रत्यर्थी संख्या 2 उच्च तनाव टैरिफ के अधीन झारखण्ड राज्य विद्युत बोर्ड का उपभोक्ता है जिसकी संविदा–मांग 800 KVA है।

25.4.1996 को तत्कालीन महाप्रबंधक–सह–मुख्य अभियंता द्वारा गठित एक समिति ने प्रत्यर्थी संख्या 2 के परिसर का निरीक्षण किया और नोटिस किया कि परिसर में संस्थापित उक्त वैद्युत मीटर के 'आर' फेज में धारा का कोई प्रवाह नहीं हो रहा था, यद्यपि प्रत्यर्थी संख्या 2 का संयत्र विद्युत का उपयोग कर रहा था और सुचारू रूप से कार्य कर रहा था। समिति के सदस्यों ने संध्या में परिसर का दौरा किया था और, इसलिए, गड़बड़ी का वास्तविक कारण ज्ञात नहीं हो सका और उनलोगों ने अगले दिन, अर्थात्, 26.4.1996 को परिसर का पुन: दौरा किया एवं सी॰ टी॰/पी॰ टी॰ संयुक्त मीटरिंग यूनिट का निरीक्षण किया।

3. निरीक्षण पर यह मालूम हुआ कि मीटर ''आर'' फेज के अन्तर्गामी जम्पर को असंचालित कर लिया गया है और उसी फेज की मीटर मापन ईकाई में बहिर्गामी जम्पर के साथ पिघला दिया गया है। तद्नुसार समिति द्वारा यह रिपोर्ट दी गई कि पूर्वोक्त कारण से मीटर के 'आर' फेज में किसी धारा का प्रवाह नहीं हो रहा था। उक्त निरीक्षण के अनुसरण में और विद्युत ऊर्जा के मूषण का पता लगने पर टैरीफ अधिसूचना, 1993 के खण्ड 16.9 (A) के अधीन 2,70,44,345/- रुपए का एक विपत्र 4.5.1996 को प्रत्यर्थी संख्या 2 के विरूद्ध अक्टूबर, 1995 से मार्च, 1996 को अवधि के लिए निर्गत किया गया। इसके अतिरिक्त, विद्युत के मूषण के लिए स्थानीय पुलिस थाने में एक प्रथम सूचना रिपोर्ट भी दर्ज की गई। इसे पटना उच्च न्यायालय की रॉची पीठ, जैसे कि उस समय स्थिति थी, के समक्ष सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1536 वर्ष 1996 (आर) के माध्यम से प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा चुनौती दी गई। महाप्रबंधक–सह–मुख्य अभियंता के समक्ष एक विस्तृत अभ्यावेदन रखने का एक निर्देश प्रत्यर्थी संख्या 2 को देते हुए पटना उच्च न्यायालय की रॉची पीठ ने दिनांक 21.5.1996 के अपने आदेश द्वारा रिट याचिका का निस्तारण किया, महाप्रबंधक–सह–मुख्य अभियंता को सुनवाई का एक अवसर उपलब्ध कराने के उपरांत अभ्यावेदन का निस्तारण करने का निर्देश दिया गया। इसने प्रत्यर्थी संख्या 2 के विद्युत संपर्क का पुन:स्थापना के लिए उसे 25,00,000/- रुपए जमा करने का भी निर्देश दिया।

4. सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1536 वर्ष 1996(आर) में पारित दिनांक 21.5.1996 के पूर्वोक्त आदेश के अनुसरण में, महाप्रबंधक–सह–मुख्य अभियंता ने प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा दाखिल अभ्यावेदन पर सुनवाई प्रारम्भ की। मामले पर विस्तार से सुनवाई करने के उपरांत प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा दाखिल अभ्यावेदन को खारिज करते हुए महाप्रबंधक–सह–मुख्य अभियंता, सिंहभूम क्षेत्र, जमशेदपुर द्वारा दिनांक 22.1.2001 के अपने आदेश द्वारा अभ्यावेदन निर्णीत/निष्पादित किया गया। वर्तमान प्रत्यर्थी संख्या 2 ने दिनांक 22.1.2001 के आदेश को चुनौती देते हुए पुन: एक रिट याचिका दाखिल की जो सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1620 वर्ष 2001 थी। रिट याचिका के लम्बित रहने के दौरान महाप्रबंधक–सह–मुख्य अभियंता, सिंहभूम क्षेत्र, जमशेदपुर ने दुबारा मामले को अंगीकार किया और दिनांक 4.5.1996 के विपत्र में परिकलन की कुछ अशुद्धि पाते हुए दिनांक 26.5.2001 के अपने आदेश द्वारा बोर्ड को पूर्व में की गई गणना को सुधारते हुए एक नई विपत्र तैयार करने का निर्देश दिया। दिनांक 26.5.2001 के आदेश के अनुसरण में 19.3.2002 को याची बोर्ड द्वारा 86,91,7461/- रुपए का एक नया विपत्र तैयार किया गया। तत्पश्चात्, रिट याचिका, अर्थात् सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1620 वर्ष 2001 को सुनवाई के लिए अंगीकार किया गया और दिनांक 12.4.2002 के आदेश के

माध्यम से संपूरक विपत्र के साथ महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता द्वारा पारित दिनांक 22.4.2001 के आदेश को अपास्त कर दिया गया और उक्त आदेश में किए गए सम्परीक्षणों पर विचारोपरांत और इससे पहले सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1536 वर्ष 1994 (आर) में दिए गए निर्देशों पर भी विचार करने के उपरांत विधि के अनुसार नया आदेश पारित करने के लिए मामले को महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, सिंहभूम क्षेत्र, जमशेदपुर के पास दुबारा भेज दिया गया।

सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1620 वर्ष 2001 में पारित दिनांक 12.4.2002 के आदेश/निर्देश के अनुसरण में, मामले की सुनवाई प्रभारी महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता द्वारा की गई, जिसने दिनांक 8.5.2002 के अपने आपेक्षित आदेश के माध्यम से अवधारित किया कि वर्तमान उपभोक्ता प्रत्यर्थी संख्या 2 को खण्ड 16.9(A) के प्रावधानों के अधीन परिकलित की जाने वाली चार दिनों की क्षति का भुगतान याची-प्रत्यर्थी को करने की आवश्यकता थी।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाया गया मुख्य तर्क यह है कि महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, सिंहभूम क्षेत्र, जमशेदपुर द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अवैधानिक और अधिकारिता से रहित है क्योंकि वह महाप्रबंधक के पद पर केवल प्रभारी रूप से कार्य कर रहा था और, इसलिए, वह राजस्व मुद्दों पर अधिनिर्णयन करने में सक्षम नहीं था। यह भी तर्क दिया गया है कि विवाद का निर्णय करने का निर्देश उच्च न्यायालय ने महाप्रबंधक को दिया था। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाया गया दूसरा तर्क यह था कि प्रभारी महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता के तौर पर कार्य करते हुए अधीक्षण अभियंता, जिसने दिनांक 8.5.2002 का आक्षेपित आदेश पारित किया है, जिसे इस रिट याचिका में चुनौती देना इप्सित किया गया है, स्वयं अपने हित का एक निर्णयकर्ता नहीं हो सकता है। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाया गया तीसरा तर्क यह है कि याची के प्रतिनिधि एवं/या निरीक्षक दल को न तो सुनवाई का कोई अवसर दिया गया और न ही कोई नोटिस निर्गत की गई। यह भी तर्क दिया गया है कि आक्षेपित आदेश प्रथम दृष्टया स्वत: विरोधाभासी है क्योंकि कुछ स्थानों पर यह कहता है कि कोई मूषण नहीं हुआ था जबकि अन्तत: यह वृहतर है कि केवल चार दिनों के लिए असामान्य पठन पाया गया था। यह भी तर्क दिया गया है कि प्रभारी महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता ने दिनांक 8.5.2002 के अपने आक्षेपित आदेश में केवल राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला की रिपोर्ट पर भरोसा करके गंभीर त्रुटि की है, जो छेड़छाड़ और मूषण को नकारने के लिए साक्ष्य का मात्र एक टुकड़ा है परन्तु उपभोक्ता द्वारा विद्युत ऊर्जा के अवैधानिक इस्तेमाल के प्रश्न को अवधारित करने के लिए निश्चायक साक्ष्य नहीं हो सकता।

6. प्रत्यर्थी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थी संख्या 1 की नियुक्ति की अधिसूचना हमारे ध्यान में लाया है, जो प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा दाखिल प्रति-शपथपत्र (पृष्ठ 79) में परिशिष्ट-D के तौर पर संलग्न है। उक्त अधिसूचना निम्नांकित रूप से उत्कथित है।

''झारखण्ड राज्य विद्युत बोर्ड,

डोरंडा, रॉची-2

अधिसूचना सं॰ 56/EB रॉची, दिनांक 2.7.01

श्री बिक्रम राम, विद्युत अधीक्षण अभियंता, विद्युत आपूर्त्ति सर्किल, जमशेदपुर को अगले आदेशों तक महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता की पूर्ण-वित्तीय शक्तियों के साथ महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, जमशेदपुर आपूर्त्ति क्षेत्र, जमशेदपुर के कार्य की देखरेख करने की अनुमति दी जाती है।

xx xx xx"

7. प्रत्यर्थी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता ने रिट याचिका के पृष्ठ 43 को भी निर्दिष्ट किया है

और इस पर भरोसा किया है, जो प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा पारित दिनांक 8.5.2002 का आदेश है, यह सिद्ध करने के लिए कि याची-बोर्ड का सम्यक् रूप से प्रतिनिधित्व दिया गया था और वह उपस्थित भी हुआ था एवं अपना मामला प्रस्तुत किया था और सुनवाई के समापन के उपरांत आदेश पारित किया गया था। प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से यह भी तर्क दिया गया है कि दाखिला अभ्यावेदन में ऐसी कोई अभ्यापति नहीं उठाई गई थी और, इसलिए, इस चरण में याची को नया तर्क उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। यह भी तर्क दिया गया है कि अभ्यावेदन पर सम्यक् रूप से विचार किया गया था और उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्देश का पूर्ण अनुसरण करते हुए सुनवाई के उपरांत आक्षेपित आदेश को पारित किया गया था।

8. निजी प्रत्यर्थी संख्या 2-उपभोक्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि प्रभारी महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, निरीक्षक दल एक सदस्य नहीं था न ही अपने हित का एक निर्णयकर्ता था, और इस प्रकार, याची द्वारा उठाया गया तर्क किसी आधार से रहित है। उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि उच्च न्यायालय द्वारा निर्गत आदेश एवं निर्देश के पूर्ण अनुसरण में आक्षेपित आदेश पारित किया गया है और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश की परिधि के बाहर नहीं था। उन्होंने अपने तर्क का समर्थन करने हेतु पेपर बुक की पृष्ठ संख्या 41 एवं 42 को निर्दिष्ट किया है जो उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 12.4.2002 का आदेश है।

9. मैने पक्षों की ओर से रखे गए अभिवाकों और प्रतिद्वंद्वी तर्कों पर विचार किया है। मैं प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से रखे तर्क में कुछ बल पाता हूँ, कि प्रभारी महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, जिसने आक्षेपित आदेश को पारित किया था, को 2.7.2001 को निर्गत अधिसूचना के अनुसार पूर्ण-वित्तीय शक्ति थी और इस प्रकार वह विवाद पर निर्णय करने में सक्षम था। तथापि, जहाँ तक प्रत्यर्थी संख्या 1 एवं साथ-साथ संख्या 2 के इस तर्क का सवाल है कि पूर्ण अवसर दिया गया था और प्रभारी महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता द्वारा आक्षेपित आदेश को पारित करने से पहले सुनवाई की गई थी असत्य प्रतीत होता है। रिट याचिका के पृष्ठ-43 पर परिशिष्ट-7 दिनांक 8.5.2002 की कार्यवाही का अभिलेख है जिसमें यद्यपि यह इंगित करता है कि याची उपस्थित हुआ था और माननीय उच्च न्यायालय द्वारा निर्गत निर्देश के आलोक में निर्णीत किए जाने वाले अपने अभ्यावेदन को निर्दिष्ट किया था और अन्तिम वाक्य में यह अभिलिखित किया गया है कि, ''आदेशों के लिए सुनवाई समाप्त की जाए'' और उसी दिन, यानि, 8.5.2002 को आक्षेपित आख्यापक आदेश पारित किया गया है जो चुनौती के अधीन है। विचित्र रूप से चुनौती के अधीन आक्षेपित आदेश में पहले चार पृष्ठों में केवल इसमें उपभोक्ता प्रत्यर्थी संख्या 2 के तर्कों एवं निवेदनों को अभिलिखित किया गया है और तत्पश्चात् राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला की रिपोर्ट एवं सम्परीक्षण को अभिलिखित किया गया है और अन्ततः, यह अभिलिखित करता है कि उपभोक्ता ने रिपोर्ट पर अत्यधिक भरोसा किया जिसके आधार पर एक पैरा में यह निष्कर्ष दिया गया है कि माननीय उच्च न्यायालय ने राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला की रिपोर्ट पर अत्यधिक जोर दिया था और इसकी शुद्धता पर संदेह नहीं किया जा सकता और अन्ततः यह अवधारित करता है कि अन्तिम चार दिनों में पठन में असामान्य थी जिसके लिए पक्ष द्वारा उठायी गई क्षति को खण्ड 16.9(A) के प्रावधान के अधीन परिकलित करना है जिसका भुगतान उपभोक्ता को करना है। तथापि, इसका कोई कारण नहीं दिया गया है कि यह किस प्रकार चार दिनों की हानि के निष्कर्ष पर पहुँचा और इसके अतिरिक्त विद्युत एवं शक्ति के दुरूपयोग के बारे में एवं पेश किए गए अन्य साक्ष्यों को लेकर भी कोई कारण नहीं बताया गया है। आक्षेपित आदेश कहीं पर भी याची द्वारा अपने अभ्यावेदन में उठाए गए तर्क का उल्लेख तक नहीं करता है। राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला पर अधिक-से-अधिक यह अवधारित करने में प्रयोजन के लिए भरोसा किया जा सकता है कि उपभोक्ता द्वारा संभवतः कोई मूषण या जानबूझकर किया गया प्रयास न हो परन्तु इससे उस अवधि के दौरान अवैधानिक उपयोग के लिए बिजली बिल का भुगतान करने से उपभोक्ता मुक्त नहीं हो सकता। न अभ्यावेदन पर परिचर्चा की गई न इसका अवलोकन किया गया है और न ही कोई निष्कर्ष दिया गया है और अन्य साक्ष्यों एवं निरीक्षण रिपोर्ट के बारे में कुछ भी चर्चा नहीं है। यह सम्परीक्षण भी संभवतः सही न हो कि माननीय उच्च न्यायालय

ने राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला की रिपोर्ट पर अत्यधिक रूप से भरोसा किया, बल्कि उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से मामले को प्रतिप्रेषित करते समय पूर्व में सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ संख्या 1536 वर्ष 1996 (आर) में दिए गए आदेश और निर्देशिका पर विचार करने के उपरांत विधि के अनुसार फिर से आदेश पारित करने का निर्देश दिया था परन्तु प्रत्यर्थी संख्या 1 ने 21.5.1996 को उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को निर्दिष्ट तक नहीं किया है।

10. दुर्भाग्यवश प्रत्यर्थी संख्या 1 अपने आदेश में यह अवधारित करके स्वयं को गलत दिशा में ले गया है कि रिपोर्ट के अनुसार यह मूषण का एक मामला नहीं है, जो संभवत: सत्य या असत्य नहीं हो और यह मानकर कि यह मूषण और छेड़छाड़ का एक मामला नहीं था, इतने पर भी अक्टूबर, 1995 से मार्च 1996 तक का अवधि, जिसके दौरान प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने ऊर्जा का इस्तेमाल किया था और अवैधानिक रूप से विद्युत का उपभोग किया था, के लिए बोर्ड को हुई हानि का भुगतान करना होगा। दुर्भाग्यवश आक्षेपित आदेश में, प्रश्नाधीन अवधि, यानि अक्टूबर, 1995 से मार्च, 1996 तक की अवधि को निर्दिष्ट किए बिना ही क्षति को केवल चार दिनों के लिए दर्शाया गया है। निरीक्षण कराने पर शिकायत यह थी कि 'आर' फेज की मीटर मापन यूनिट को अलग कर दिया गया था और उसी फेज में मीटर मापन यूनिट के बहिर्गामी जम्पर के साथ पिघला कर जोड़ दिया गया था। 'आर' फेज के सी॰ टी॰ से होकर धारा प्रवाहित न होने के कारण भिन्न हो सकता है, परन्तु यह तथ्य रह जाता है कि विद्युत ऊर्जा और शक्ति का उपयोग किया गया था और मीटर मापन यूनिट में प्रतिबिम्बित हुए बिना और बोर्ड की विनिर्दिष्ट अनुमति के बिना संविदाकृत लोड से अधिक मात्रा में इस्तेमाल की गई थी। महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता द्वारा अपने आक्षेपित आदेश में इन मुद्दों को निर्दिष्ट या विचारित नहीं किया गया है। और अभिलेख पर लाए गए अन्य साक्ष्यों पर भी ध्यान नहीं दिया गया है और इसने एकमात्र रूप से राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला की रिपोर्ट पर भरोसा किया है।

11. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करके यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और प्रभारी महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, सिंहभूम क्षेत्र, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 8.5.2002 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है और दोनों पक्षों की सुनवाई करने के उपरांत एवं अभिलेख पर मौजूद सभी साक्ष्यों पर विचार करने के उपरांत दो महीनों के भीतर मामला को फिर से निर्णय करने और एक युक्तिसंगत आदेश पारित करने के लिए इसे फिर से महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता को भेजा जाता है।

---

ekuuh; Mhñ thñ vkjñ iVuk;d] U;k;efr

बिपिन गोप

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2740 वर्ष 2006. 9 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

छोटानागपुर भूधृति अधिनियम, 1908—धारा 71(a)–जमीन का प्रत्यावर्तन–प्रतिकूल कब्जे के सिद्धांत के आधार पर जमीन के ऊपर अधिकार अर्जित करना टिकने योग्य नहीं है–चूंकि भूमि के प्रत्यावर्तन का आदेश अन्तिमता प्राप्त कर चुका है, प्रतिकर राशि को जमा करने में होने वाला मात्र विलम्ब जमीन के प्रत्यावर्तन के अधिकार से वंचित नहीं कर सकता। (पैरा 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–M/s K.M. Verma, Suraj Kumar, For the Petitioner; J.C. to S.C. (I. & C.), For the State

आदेश

एस॰ ए॰ आर॰ अपील संख्या 54 वर्ष 1986-87 में प्रत्यर्थी संख्या 2, उपायुक्त, पश्चिमी सिंहभूम चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 7.1.1991 के आदेश के निष्पादन हेतु प्रत्यर्थी संख्या 3 के समक्ष लंबित

विविध वाद संख्या 1 वर्ष 2004-05 के माध्यम से कार्यवाही को निरस्त करने लिए एक आदेश के निर्गतीकरण हेतु इस रिट आवेदन में याची ने प्रार्थना की है, जिसके द्वारा अपील के खारिज होने पर, आदेश की तिथि के पहले के तीन महीनों के भीतर याची को 20,000/- रुपए के प्रतिकर का भुगतान प्रत्यर्थी सं॰ 6 के पक्ष में करने पर प्रश्नाधीन जमीन को पुनः वापस कर देने कर निर्देश दिया गया था।

2. याची के मामले के तथ्य संक्षेप में यह है कि उसके पिता, स्वर्गीय बीर सिंह गोप ने इस मामले में संदर्भ के अधीन जमीन, पूर्व के अभिलिखित अभिधारी, अर्थात, बिरसा पूर्ती से खरीदा था। विनिर्मित घर का अधिभोग करने के अतिरिक्त जो जमीन के ऊपर पहले ही मौजूद था क्रेता ने उसी जमीन पर के भीतर एक अन्य घर का निर्माण किया और इस पर उसका अधिभोग एवं कब्जा रहा है और उसके पश्चात उसका पुत्र, अर्थात्, याची का घर के साथ जमीन पर अधिभोग रहा है।

1964 के सर्वेक्षण बन्दोबस्त में, भूमि याची के पिता के नाम से अभिलिखित थी और दिसम्बर, 2001 तक अंचलअधिकारी द्वारा निर्गत रसीदों के विरुद्ध किराए का भुगतान लगातार रूप से याची द्वारा किया जाता रहा। जबकी याची एवं स्वर्गीय बीर सिंह गोप के अन्य वारिस/उत्तराधिकारी जमीन का शांतिपूर्ण अधिभोग एवं कब्जे का उपभोग कर रहे थे, तब सह-स्वामियों में से एक, अर्थात्, बिपिन चन्द्र कार्जी ने प्रश्नाधीन जमीन के सीमांकन के लिए अंचलाधिकारी के समक्ष एक आवेदन दाखिल किया। सभी सह-ग्रामीणों की मौजूदगी में क्षेत्र के अमीन द्वारा जमीन का सीमांकन किया गया था और उस समय किसी ओर से, किसी सह-ग्रामीण की ओर से, यहाँ तक कि प्रत्यर्थी संख्या 6 की ओर से कोई अभ्यापति नहीं उठाई गई।

इससे पहले, जब याची के पिता जीवित थे, तो प्रत्यर्थी संख्या 6 ने अनुमंडल पदाधिकारी के समक्ष एक भूमि प्रत्यावर्तन मामला दाखिल किया था। प्रत्यर्थी संख्या 6 द्वारा 20,000/- रुपये के प्रतिकर का भुगतान करने पर प्रत्यर्थी संख्या 6 के पक्ष में जमीन को प्रत्यावर्तित करने का एक निर्देश याची के पिता को देते हुए मामला अनुज्ञात किया गया था। प्रतिकर के आदेश से व्यथित होकर, प्रत्यर्थी संख्या 6 ने एक टी॰ ए॰ विविध अपील संख्या 117 वर्ष 1975-76 दाखिल किया। दूसरी बार भी, जमीन के प्रत्यावर्तन के लिए एक आदेश पारित किया गया परन्तु आदेश की तिथि से दो महीनों की एक अवधि के भीतर प्रत्यर्थी संख्या 6 द्वारा 20,000/- रुपए की राशि जमा करने पर।

पूर्वोक्त आदेश के विरूद्ध, याची के पिता ने एस॰ ए॰ आर॰ अपील संख्या 54 वर्ष 1986-87 के माध्यम से एक अपील दाखिल की थी। अपील खारिज कर दी गई और प्रत्यर्थी संख्या 6 द्वारा 20,000/- रुपए का भुगतान करने पर जमीन का प्रत्यावर्तन करने हेतु अनुमंडल पदाधिकारी के आदेश को संपुष्ट किया गया। अपीलीय प्राधिकार द्वारा 7.1.1991 को आदेश पारित किया गया था।

तत्पश्चात्, प्रत्यर्थी संख्या 6 ने राशि जमा करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया और जमीन याची के अधिभोग एवं कब्जे में बना रहा।

वाद में, वर्ष 1998 में, प्रत्यर्थी संख्या 6 ने अपने नाम के नामांतरण के लिए अंचल अधिकारी के समक्ष एक आवेदन यह दावा करते हुए दाखिल किया कि अपीलीय न्यायालय के दिनांक 7.1.1991 के आदेश के अनुपालन में उसके पिता, स्वर्गीय गुना हो द्वारा 20,000/- रुपए की एक राशि पहले ही जमा करा दी गई थी। नामांतरण का आवेदन इस आधार पर खारिज किया गया था कि धन के अभिप्रायित निक्षेप के सम्बन्ध में रसीद पेश नहीं की गयी थी।

तत्पश्चात्, प्रत्यर्थी संख्या 6 ने वर्ष 2004 में किसी समय उप-समाहर्त्ता भूमि सुधार के समक्ष समावेदन किया।

मामला अनुमंडल पदाधिकारी, चाईबासा को भेजा गया जिसने दिनांक 21.11.2005 के अपने आदेश द्वारा प्रतिपक्षी/याची को प्रतिकर राशि प्राप्त करने का निर्देश दिया।

3. याची ने अनुमंडल पदाधिकारी के आदेश को इस आधार पर चुनौती दी है कि जमीन के प्रत्यावर्तन के लिए कार्यवाही और प्रतिकर की राशि स्वीकार करना विधि में दोषपूर्ण है, चूँकि यह परिसीमा द्वारा वर्जित है और इस आधार पर भी कि वास्तविक भौतिक कब्जे की तिथि से 30 वर्षों से अधिक समय से अधिभोग बनाए रखकर प्रतिकूल कब्जे के सिद्धांतों द्वारा याची ने जमीन के ऊपर अपने अधिकार को पूर्ण कर लिया है।

4. याची की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71(a) के अधीन याची के अधिकार को निष्फल करते हुए परिसीमा की अवधि के उपरांत जमीन के प्रत्यावर्तन के लिए प्रक्रिया प्रारम्भ नहीं की जा सकती, जो अधिकार उसने प्रतिकूल कब्जे द्वारा प्राप्त किया था।

5. प्रत्यर्थीगण की ओर से प्रति-शपथपत्र दाखिल किया गया है। याची द्वारा रखे गए सम्पूर्ण आधारों से इन्कार करते हुए और उनपर प्रश्न उठाते हुए, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि ये आधार पूर्णत: भ्रामक और त्रुटिपूर्ण है। याची प्रतिकूल कब्जे के आधार पर किसी अधिकार का दावा नहीं कर सकता और इससे भी बढ़कर, सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71(a) के प्रावधानों के अधीन जनजातीय भूमि के प्रत्यावर्तन हेतु परिसीमा की कोई अवधि विहित नहीं है।

6. प्रतिद्वंद्वी निवेदनों से स्वीकृत तथ्य ये हैं कि जमीन मूल रूप से प्रत्यर्थी संख्या 6 के पूर्वज के नाम पर अभिलिखित थी जो अनुसूचित जनजाति का एक सदस्य था।

यद्यपि, याची के पूर्वज ने वर्ष 1956 में किसी समय पूर्व अभिलिखित अभिधारी से भूमि खरीदने के अपने दावे के आधार पर जमीन का अधिभोग और कब्जा प्राप्त किया था परन्तु याची के पिता के विरूद्ध जमीन के लिए प्रत्यावर्तन हेतु एक दावा प्रत्यर्थी संख्या 6 के पिता द्वारा काफी पहले 1975 में दाखिल किया गया था और सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश के माध्यम से, प्रत्यर्थी संख्या 6 द्वारा 20,000/- रुपए की एक प्रतिकर राशि जमा करने की शर्त पर भूमि को प्रत्यर्थी संख्या 6 को वापस कर देने कर निर्देश दिया गया था। यह भी प्रतीत होता है कि यद्यपि प्रत्यर्थी संख्या 6 द्वारा तत्परता से प्रतिकर राशि जमा नहीं की गई थी परन्तु अंततोगत्वा ऐसी राशि उसके पिता द्वारा जमा की गई और तत्पश्चात् प्रत्यर्थी संख्या 6 द्वारा एक आवेदन दाखिल किए जाने पर, अनुमंडल पदाधिकारी ने अपने आक्षेपित आदेश द्वारा याची को राशि स्वीकार करने और प्रत्यर्थी संख्या 6 के पक्ष में जमीन का कब्जा वापस करने का निर्देश दिया गया था।

7. अब यह सुस्थापित है कि छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71(a) के प्रावधानों के अधीन जनजातीय भूमि के प्रत्यावर्तन के मामले में परिसीमा की कोई अवधि विहित नहीं है। प्रतिकूल कब्जे के सिद्धांत के आधार पर जमीन के ऊपर अधिकार अर्जित करने का याची का अभिवाक् मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में टिकने योग्य या स्वीकारणीय नहीं है। चूँकि प्रत्यर्थी संख्या 6 को जमीन प्रत्यावर्तित करने का आदेश अन्तिमता प्राप्त कर चुका था, तो प्रतिकर की राशि जमा करने में प्रत्यर्थी संख्या 6 या उसके पिता की ओर से मात्र विलम्ब, अगर कोई है, उसे जमीन को प्रत्यावर्तित किए जाने के उसके अधिकार से वंचित नहीं कर सकता। इस मामले में, जैसा कि प्रत्यर्थी संख्या 6 द्वारा अभिवाक् किए गए तथ्यों के अविवादित कथन से प्रतीत होता है, उसके पिता ने याची के पिता के पक्ष में प्रतिकर की राशि काफी पहले जमा कर दी थी। यह राशि प्राप्त करने में याची की विफलता थी, कि प्रतिकर

राशि को प्राप्त करने के लिए याची से मांग करके, कब्जे के प्रत्यावर्तन के प्रदाय को प्रभावी बनाने के लिए प्रत्यर्थी संख्या 6 द्वारा आवेदन दाखिल किया गया था।

8. उपरोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों के आलोक में, प्रतिकर राशि को प्राप्त करने और प्रत्यर्थी संख्या 6 को संदर्भ के अधीन जमीनों का कब्जा प्रत्यावर्तित करने की मांग याची से करने वाले प्रत्यर्थी संख्या 3 के आक्षेपित निर्देश में मैं कोई दुर्बलता या अवैधानिकता नहीं पाता हूँ। इस रिट आवेदन में कोई गुण नहीं होने के कारण इसे खारिज किया जाता है। याची इस आदेश की तिथि से एक महीने के भीतर प्रतिकर राशि प्राप्त करेगा और प्रत्यर्थी संख्या 6 को जमीनों का कब्जा वापस लौटा देगा।

---

ekuuh; ,e0 okbZ0 bdcky ,o t;k jk;] U;k;eqfrZx.k

भटू टूड्डु @ गनसा टुड्डु

बनाम

बिहार राज्य

दां॰ अपील सं॰ 227 वर्ष 2000 (R) 16 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

सत्र विचारण संख्या 110 वर्ष 1997 में विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 24.5.2000 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दण्डादेश के विरूद्ध।

(क) भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 304, भाग II—आपराधिक मानववध–अपीलार्थी ने अपनी तलवार द्वारा अपनी सास की गर्दन पर एक प्रहार किया और भाग गया–ऐसा कोई साक्ष्य नहीं आया कि उसने वार को दुहराया था–पूर्व-चिंतन के बारे में भी साक्ष्य अनुपस्थित है–भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304, भाग II के अधीन दोषसिद्धि में परिवर्तित किया गया। (पैरा 13)

(ख) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 357—प्रतिकर–प्रतिकर के रूप में एक जुर्माने को अपराध द्वारा कारित किसी हानि या किसी क्षति के लिए दण्डादेश के अतिरिक्त अधिनिर्णीत किया जा सकता है। (पैरा 16 से 21)

निर्णयज विधि.–(1988)4 SCC 551—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. A.K.Sahani, For the Appellant; Mr. T.N.Verma, For the State.

एम॰ वाई॰ इकबाल, न्यायमूर्ति.–सत्र विचारण संख्या 110 वर्ष 1997 में प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 24 मई, 2000 के निर्णय के विरूद्ध वर्तमान अपील निर्दिष्ट है जिसके द्वारा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए एकमात्र अपीलार्थी गनसा टूड्डु @ भटू टूड्डु को दोषसिद्धि की गई है और आजीवन कारावास भुगतने का दण्डादेश किया गया है।

2. सुन्दरनगर पुलिस थाने के आरक्षी उप-निरीक्षक द्वारा अभिलिखित चन्द्रा मुर्मू के फर्दबयान के आधार पर 26.12.96 को एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई और अपीलार्थी के विरूद्ध एक मामला दर्ज किया गया जो भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन परसुडीह पुलिस थाना केस संख्या 275/96 था।

3. अभियोजन का मामला संक्षेप में यह है कि सूचनदाता चन्द्रा मुर्मू की दुलारी नामक एक पुत्री है जिसने स्वयं अपनी इच्छा से अपीलार्थी गनसा टूड्डु से विवाह किया था। उक्त वैवाहिक बंधन से एक कन्या उत्पन्न हुई थी। अभियोजन का आगे मामला यह है कि सूचनादाता की पुत्री दुलारी टुड्डू और उसके पति यानि अपीलार्थी गनसा टुड्डू के बीच छोटी-मोटी बातों पर कुछ झगड़ा होता रहता था जिसके लिए अपीलार्थी दुलारी टुड्डू को मारा करता था। दुलारी टुड्डू सूचनादाता के घर में शरण लिया

करती थी। तथापि जब कभी भी अपीलार्थी सूचनादाता के घर आया करता था दुलारी टुड्डू को अपीलार्थी के साथ वापस भेज दिया जाता था। दीपावली के अवसर पर अपीलार्थी ने अपनी पत्नी दुलारी पर हमला किया जिसके परिणामत: वह अपीलार्थी के घर से भाग गई और सूचनादाता के घर में आश्रय लिया जो उसका पिता है। अपीलार्थी लगभग 10 बजे रात में सूचनादाता के घर एक या दो बार गया और सूचनादाता और उसकी पत्नी अर्थात् सुगी मुर्मू को उसके साथ दुलारी को भेजने की मांग किया। सूचनादाता और उसकी पत्नी ने अपीलार्थी को दुलारी को अपने साथ ले जाने के लिए दिन में आने को कहा। अपीलार्थी सूचनादाता के घर में लगभग एक सप्ताह रहा। 25.12.1994 को अपीलार्थी संध्या में अपने घर लौट गया और 11:30 रात में पुन: सूचनादाता के घर वापस लौटा। उस समय अपीलार्थी तलवार से लैस था और नशे की हालत में था। सूचनादाता और उसकी पत्नी उस समय आग ताप रहे थे। अपीलार्थी ने सूचनादाता की पत्नी पर उसके साथ दुलारी को भेजने के लिए जोर दिया परन्तु सुगी मुर्मू ने रात्रि के कारण ऐसा करने से इन्कार कर दिया। अपीलार्थी के साथ सूचनादाता की पत्नी द्वारा अपनी पुत्र को भेजने से इन्कार करने के कारण अपीलार्थी ने सुगी मुर्मू की गर्दन पर एक वार किया जो जमीन पर गिर पड़ी। सूचनादाता ने शोर मचाया जिसके परिणामत:, उसके पुत्र एवं पुत्रियाँ और निकट के लोग घटनास्थल पर पहुँच गई। अपीलार्थी सुगी मुर्मू पर हमला करने के उपरांत तलवार के साथ भाग गया। लोगों के आने के समय तक, सुगी की उपहतियों से मृत्यु हो गई।

4. घटना के उपरांत, पुलिस दल घटना-स्थल पहुँची और अन्वेषण पदाधिकारी ने गवाहों के बयान को अभिलिखित किया मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार की और पोस्ट-मार्टम के लिए शव को एम॰ जे॰ एम॰ महाविद्यालय एवं अस्पताल, जमशेदपुर भेज दिया। घटना को अभिकथित रूप से घटित होने के उपरांत अभियुक्त अपीलार्थी को तलवार के साथ अन्वेषण पदाधिकारी द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया जब वह स्वयं को चम्पई मुर्मू के खेत में छुपाए था। पुलिस ने अन्वेषण के उपरांत अन्तत: भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन अपीलार्थी के विरूद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया और विचारण के लिए मामले को सत्र न्यायालय भेजा गया जहाँ अपीलार्थी के विरूद्ध भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन आरोप विरचित किया गया। अपीलार्थी ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और अपने विरूद्ध आरोप से इनकार किया।

5. अभियोजन ने कुल मिलाकर 11 गवाहों को परीक्षित किया जिनमें अन्वेषण पदाधिकारी और मृतका का पोस्टमार्टम करने वाले चिकित्सक शामिल थे। अ॰ सा॰ 1 एवं 7 सूचनादाता के पुत्र और अ॰ सा॰ 4 पुत्री हैं। अ॰ सा॰ 2, 6, 9, 10, 11 पड़ोस के गवाह हैं और अ॰ सा॰ 8 अन्वेषण पदाधिकारी हैं। अ॰ सा॰ 5 वह डॉक्टर है जिसने मृतक के शव का पोस्ट मार्टम परीक्षण किया था।

6. अ॰ सा॰ 3, सूचनादाता ने उस घटना का वर्णन किया जो 25.12.1996 के रात्रि में घटित हुई और सूचनादाता के साक्ष्य का सभी अभियोजन गवाहों द्वारा समर्थन किया गया। विचारण न्यायालय ने अभियोजन की ओर से प्रस्तुत मौखिक एवं दस्तावेजी दोनों प्रकार के साक्ष्यों पर विचार करके और गवाहों को परीक्षित करके अन्तत: यह निष्कर्ष प्राप्त किया कि अभियोजन ने आदेश को स्थापित और सिद्ध किए और अपीलार्थी को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध का दोषी पाया गया और अवधारित किया गया और तद्नुसार अपीलार्थी की दोषसिद्धि हुई और आजीवन कारावास भुगतने का दण्डादेश किया गया।

7. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता, श्री ए॰ के साहनी ने विचारण न्यायालय के आक्षेपित निर्णय का अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों एवं तथ्यों को प्रतिकुल बताते हुए उसकी

आलोचना की। विद्वान अधिवक्ता ने पहले यह निवेदन किया कि विचारण न्यायालय इसपर विचार करने में विफल रहा कि सूचनादाता एकमात्र चश्मदीद गवाह था और अन्य गवाहों के साक्ष्य में काफी विरोधात्मकता है और निवेदन किया कि घटना के एकमात्र चश्मदीद गवाह के साक्ष्य पर दोषसिद्धि को आधृत नहीं किया जा सकता। विद्वान अधिवक्ता ने फिर यह निवेदन किया कि स्वयं अभियोजन मामले से ही, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि अभियुक्त अपीलार्थी नशे की हालत में था और मृतका द्वारा उसकी पत्नी को ले जाने देने से इन्कार करने के कारण उसने एक प्रहार किया और भाग गया। मृतक को मारने के आशय और जानकारी के साथ बार-बार प्रहार करने का कोई अभिकथन या साक्ष्य नहीं है। इस प्रकार, किसी भी स्थिति में, दोषसिद्धि एक कम कठोर दण्ड देकर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304 के भाग-II के अधीन होने चाहिए एवं भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन नहीं।

8. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह सुस्थापित है कि यह एक सामान्य नियम है कि एक न्यायालय एकल गवाह के परिसाक्ष्य पर कार्रवाई कर सकता है बशर्ते कि वह पूर्ण रूप से विश्वसनीय हो। एक एकल गवाह के अकेले परिसाक्ष्य पर एक व्यक्ति की दोषसिद्धि करने में कोई विधिक अड़चन नहीं है। गवाह के परिसाक्ष्य पर कार्य करना न्यायालय का कार्य है। यह भी समान रूप से सुस्थापित है कि साक्ष्य का मूल्यांकन करना होता है एवं गणना नहीं।

9. वर्तमान मामले में, यह स्पष्ट है कि सूचनादाता, जो विश्वसनीय गवाह है ने गवाही दी है कि घटना 25.12.1996 की रात्रि में घटित हुई थी। रात्रि में अपनी पत्नी को ले जाने से, अपीलार्थी की सास, यानि मृतका द्वारा इन्कार किए जाने पर उसने तलवार से उसकी गर्दन पर उपहति कारित की, जिसके परिणामत:, मृतका जमीन पर गिर पड़ी और घाव से रक्त बहना प्रारम्भ हो गया। उसके चिल्लाने पर, सूचनादाता के पुत्र एवं पुत्री, जो घर में सो रहे थे, और गाँववाले भी घटना-स्थल की ओर दौड़ पड़े।

10. अ॰ सा॰ 1, 4 एवं 7, जो सूचनादाता के पुत्र एवं पुत्री हैं, ने सूचनादाता के इस अभिकथन का पूर्ण समर्थन किया है कि अपने पिता (सूचनादाता) की चीख सुनकर वे उन कमरों, जहाँ वे सो रहे थे, से घटना स्थल पहुँचे और देखा कि अभियुक्त ने तलवार से उनकी माता सुगी मुर्मू को मार दिया। उन्होंने अपने साक्ष्य में यह भी कहा कि अभियुक्त गणेश टुड्डू उनको देखने के पश्चात पूरब की ओर भाग गया। अन्य पड़ोस के गवाहों, अ॰ सा॰ 6, 9, 10 एवं 11 ने भी लगातार रूप से साक्ष्य दिया कि सूचनादाता की चीत्कार सुनकर वे अपने-अपने घर से बाहर निकले और सूचनादाता के घर गये जहाँ उन्होंने सुगी मुर्मू की गर्दन पर उपहति के कारण उसे जमीन पर गिरा पाया जिससे रक्त बह रहा था। अ॰ सा॰ 5, जिसने सुगी मुर्मू के शव का पोस्टमार्टम किया था, ने पाया कि तलवार के प्रहार के कारण मांसपेशी और नलिकाएं कट गई थी। उन्होंने मत दिया कि एक तीक्ष्ण धार वाले उपकरण से उसकी गर्दन पर कारित उपहति के कारण मृत्यु हुई थी। अ॰ सा॰ 8, अन्वेषण पदाधिकारी ने भी सूचनादाता के कथन का समर्थन किया। उसने प्रथम सूचना रिपोर्ट, गवाहों की मौजूदगी में तलवार के अभिग्रहण-सूची को सिद्ध किया है और स्पष्ट रूप से कहा है कि अभियुक्त को उसी दिन गिरफ्तार किया गया था।

11. अभियोजन द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से विद्वान सत्र न्यायाधीश ने उचित रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी के विरूद्ध आरोप सिद्ध पाया। अभियोजन गवाहों के इस सुसंगत कथन कि अभियुक्त अपीलार्थी ने मृतक पर प्राणघातक हमला किया था, का भी चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा समर्थन किया गया है। इसलिए, मेरे विचार में, गवाहों के साक्ष्य में छोटी-मोटी विरोधाभाष से अभियुक्त-अपीलार्थी को कोई सहायता नहीं मिलेगी। मेरा यह भी मत है कि सूचनादाता के परिसाक्ष्य, जो चश्मदीद गवाह है, परिवर्तित नहीं हुआ है, यद्यपि उसकी विस्तार से प्रति-परीक्षा की गई थी और इसे अन्य गवाहों के साक्ष्य द्वारा

संपोषित किया गया था। मामले के इस दृष्टिकोण से, सूचनादाता के परिसाक्ष्य पर आधृत दोषसिद्धि हस्तक्षेप किए जाने की दायी नहीं है।

12. तथापि, विचारण के लिए जो प्रश्न उद्भूत होता है वह यह है कि क्या भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि न्यायोचित है।

13. स्वीकार्यत:, अभियुक्त ने मृतका की गर्दन पर एकल प्रहार किया और दुहराये जाने का कोई साक्ष्य नहीं है। एक प्रहार करने के उपरांत अभियुक्त भाग गया। इस प्रभाव का कोई साक्ष्य नहीं है कि अभियुक्त जानता था कि कारित उपहति से मृत्यु कारित करने की संभावना थी या यह कि अभियुक्त यह जानता था कि अभियुक्त की सभी अधिसंभाव्यताओं में, मृत्यु हो जाएगी। पूर्व चिंतन के बारे में साक्ष्य अनुपस्थित है और अभियोजन मामले के अनुसार, मृतका की ओर से अभियुक्त को उसकी पत्नी को साथ ले जाने में अचानक इन्कार कर देने के कारण उसने मृतका की गर्दन पर एक वार कर दिया और भाग गया। इसलिए, हमारे सुविचारित मत में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि न्यायसंगत नहीं है। इसलिए, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304, भाग-II के अधीन दोषसिद्धि में सम्परिवर्तित किया जाता है।

14. भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304 निम्नांकित रूप से पठित है:-

"304. **आपराधिक मानव-वध के लिए दण्ड जो हत्या के तुल्य नहीं हो.**—जो कोई भी आपराधिक मानव-वध, जो हत्या के तुल्य नहीं हो, कारित करता है, वह आजीवन कारावास या एक ऐसी अवधि के कारावास से दण्डित किया जाएगा जो दस वर्षों तक का हो सकता है, और जुर्माने का भी दायी होगा, अगर वह कार्य जिसके द्वारा हत्या कारित की गई है, मृत्यु कारित करने के आशय से था या ऐसी शारीरिक उपहति कारित करने के इरादे से कारित किया गया हो, जिससे मृत्यु कारित होने की संभावना हो।''

अथवा यदि वह कार्य इस ज्ञान के साथ कि उससे मृत्यु करना सम्भाव्य है, किन्तु मृत्यु या ऐसी शारीरिक क्षति, जिससे मृत्यु कारित करना सम्भाव्य है, कारित करने के किसी आशय के बिना किया जाय, तो वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, या दोनों से दण्डित किया जाएगा।

15. पूर्वोक्त प्रावधान के कोरे परिशीलन से यह प्रकटत: स्पष्ट है कि धारा 304 के भाग II के अधीन दोषसिद्धि की स्थिति में विहित दण्ड एक ऐसी अवधि का कारावास है जो दस वर्षों तक का हो सकता है या जुर्माना हो सकता है या दोनो हो सकता है। अन्य शब्दों में, दोषसिद्धि जुर्माना सहित कारावास या दोनों के लिए होगा। वर्तमान मामले में, अविवादित तथ्य ये हैं कि अपीलार्थी का विवाह सूचनादाता की पुत्री के साथ हुआ था और उनके वैवाहिक बंधन से एक कन्या का जन्म हुआ था जो इस समय तक विवाह-योग्य आयु प्राप्त कर चुकी है और सूचनादाता के घर में अपनी माता के साथ रह रही है। तथ्यों एवं परिस्थितियों में, जो प्रश्न विचारण के लिए उठता है कि क्या दण्डादेश को घटाते हुए प्रतिकर के रूप में एक जुर्माने को भी अधिरोपित करना है। इस चरण में, मैं दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 357 को निर्दिष्ट करना चाहूँगा जो निम्नांकित रूप से पठित है:—

"357. **प्रतिकर का भुगतान करने का आदेश.**—(1) जब एक न्यायालय जुर्माने का एक दण्डादेश या एक ऐसा दण्डादेश (जिसमें मृत्यु का एक दण्डादेश शामिल है) अधिरोपित करता है जिसका एक भाग जुर्माना हो तो न्यायालय निर्णय पारित करते समय वसूले जाने वाले पूरे जुर्माने या उसके किस भाग को निम्नत: प्रयुक्त करने के लिए आदेश कर सकता है।

(क) अभियोजन में उचित रूप से उपगत व्ययों को चुकता करने में;

(ख) अपराध द्वारा कारित उपहति या हानि के लिए किसी व्यक्ति को प्रतिकर का भुगतान करने में, जब प्रतिकर, न्यायालय की राय में एक व्यवहार न्यायालय में ऐसे व्यक्ति से वसूली करने योग्य हो;

(ग) जब किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु कारित करने के अपराध के लिए या ऐसे एक अपराध के कारित होने तो दुष्प्रेरित करने के लिए किसी व्यक्ति को दोषसिद्ध किया जाता है, तो ऐसे व्यक्तियों को प्रतिकर का भुगतान करने में, जो घातक दुर्घटना अधिनियम, 1855 (13 वर्ष 1855) के अधीन, ऐसी मृत्यु के परिणामत: उन्हें होने वाली क्षति को दण्डादेश किए गए व्यक्ति से क्षतिपूर्त्ति की वसूली करने की अधिकारी है;

(घ) जब किसी व्यक्ति को किसी ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है जिसमें चोरी, दाण्डिक दुर्विनियोग, विश्वास का आपराधिक उल्लंघन, या धोखाधड़ी या यह जानते हुए या ऐसा विश्वास करने का कारण होते हुए कि ऐसी सम्पत्ति की चोरी की है, कपटपूर्ण रूप से ऐसी सम्पत्ति को प्राप्त करना या रखे रहना या इसके निस्तारण में स्वैच्छिक रूप से सहायता करना शामिल है, इसकी हानि के लिए ऐसी सम्पत्ति के वास्तविक क्रेता को प्रतिकर देने से अगर ऐसी सम्पत्ति इसके अधिकारी व्यक्ति को प्रत्यावर्तित कर दी जाती है।

(2) अगर एक ऐसे मामले में जुर्माना अधिरोपित किया जाता है जो अपील के अध्यधीन है, तो अपील को प्रस्तुत करने के लिए अनुज्ञात अवधि के व्ययगत होने के पहले, या, अगर अपील प्रस्तुत की जाती है, तो अपील के निर्णय के पहले ऐसा कोई भुगतान नहीं किया जाएगा।

(3) जब एक न्यायालय एक जुर्माना अधिरोपित करता है, जिसमें जुर्माना एक भाग न हो, तो न्यायालय, निर्णय पारित करते समय, अभियुक्त व्यक्ति को प्रतिकर के तौर पर ऐसी राशि, जैसा कि आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, उस व्यक्ति को भुगतान करने का आदेश कर सकता है जिसे उस कार्य के कारण कोई हानि या क्षति हुई हो जिसके लिए अभियुक्त व्यक्ति को इस प्रकार दण्डित किया गया है।

(4) इस धारा के अधीन एक अपीलीय न्यायालय द्वारा या उच्च न्यायालय द्वारा या सत्र न्यायालय द्वारा अपनी पुनरीक्षण की शक्तियों का इस्तेमाल करते समय भी एक आदेश किया जा सकता है।

(5) एक ही मामले से संबंधित किसी पश्चातवर्ती सिविल वाद में प्रतिकर अधिनिर्णीत करते समय, न्यायालय इस धारा के अधीन प्रतिकर के तौर पर भुगतान या वसूल की गई किसी राशि को ध्यान में रखेंगे।''

16. पूर्वोक्त प्रावधान के परिशीलन से यह प्रकटत: स्पष्ट है कि यह धारा दण्डादेश अधिरोपित करने वाले न्यायालय को अपराध द्वारा कारित किसी क्षति या उपहति के लिए किसी दोषसिद्ध व्यक्ति पर अधिरोपित जुर्माने के समूचे भाग या एक भाग को भुगतान किए जाने के लिए आदेश करने में सक्षम बनाता है। यह उल्लिखित करना असंगत नहीं होगा कि यू॰ के॰, कनाडा, यू॰ एस॰ ए॰, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड ने जैसे कई विकसित राष्ट्रों ने अपनी दाण्डिक न्याय प्रणाली में ऐसा प्रावधान किया है। यूनाईटेड किंग्डम दाण्डिक न्याय अधिनियम, 1988 अधिनियमित किया गया है। संयुक्त राष्ट्र की 1985 की घोषणा के आधार पर आस्ट्रेलिया ने भी एक विधान अधिनियमित किया है। संयुक्त राज्य अमेरिका में अपराध पीड़ित अधिनियम, 1984 में संघीय विधि का एक भाग बन गया।

17. इसमें ऊपर यथा उत्कथित संहिता की धारा 357 भी इसी प्रकार का विधान है जो दोषसिद्धि का निर्णय पारित करते समय न्यायालय को पीड़ितों को प्रतिकर प्रदान करने में सशक्त बनाती है।

18. हरि सिंह बनाम सुखबीर सिंह एवं अन्य [(1988)4 एस॰ सी॰ सी॰ 551] के मामले में, संहिता की धारा 357 पर विचार करते समय, सर्वोच्च न्यायालय ने सम्परीक्षित किया:–

"10. धारा 357 की उप-धारा (1) अभियुक्त पर अधिरोपित जुर्माने के दण्डादेश में से अपराध के पीड़ितों को प्रतिकर प्रदान करने की शक्ति का प्रावधान करती है। इस मामले में, हमें उप-धारा (1) से मतलब नहीं है। हमें केवल उप-धारा (3) से मतलब है। यह एक महत्वपूर्ण प्रावधान है परन्तु न्यायालयों ने इसका यदा-कदा ही प्रयोग किया है। कदाचित उसके उद्देश्य को लेकर अनभिज्ञता होने के कारण। यह दोषसिद्धि का आदेश पारित करते समय पीड़ित को प्रतिकर अधिनिर्णित करने की शक्ति न्यायालय को देता है। दोषसिद्धि के अतिरिक्त, न्यायालय प्रतिकर

के तौर पर अभियुक्त को पीड़ित को कुछ राशि का भुगतान करने का आदेश कर सकता है, जो अभियुक्त के कार्य से पीड़ित हुआ है। यह नोट किया जाए कि प्रतिकर प्रदान करने की न्यायालयों की यह शक्ति अन्य दण्डादेशों की अनुषंगिक नहीं है या बल्कि यह उसमें अतिरिक्त रूप से है। इस शक्ति का आशय पीड़ित को पुनः आश्वस्त करने के लिए कुछ ऐसा करना था कि दाण्डिक न्याय प्रणाली में उसे भुला नहीं दिया गया है। यह अपराध को लेकर यथोचित रूप से क्रियाशील होने और साथ-साथ अपराधी के साथ पीड़ित का मेल-मिलाप कराने का एक उपाय है। कुछ हद तक यह अपराधों के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण है। यह वास्तव में हमारी दाण्डिक न्यायिक प्रणाली में एक अग्रगामी कदम है। इसलिए, हम सभी न्यायालयों को इस शक्ति का उदारतापूर्वक इस्तेमाल करने की अनुशंसा करते हैं जिससे कि एक बेहतर तरीके से न्याय के उद्देश्य पूरे हो सकें।''

19. जैसा कि ऊपर नोटिस किया गया है, सुगी मुर्मू की मृत्यु से सूचनादाता, जो उसका पति है एकमात्र पीड़ित नहीं है बल्कि अपीलार्थी द्वारा कारित अपराध से अपीलार्थी की पत्नी और कन्या भी काफी पीड़ित हुई है। अपीलार्थी द्वारा कारित अपराध के कारण उन्हें अत्यधिक हानि और अपूरणीय क्षति हुई है।

20. सभी तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, हमारे विचार में, न्याय के उद्देश्य पूरे होंगे अगर हम आदेश करते हैं कि दण्डादेश को कम करते हुए, प्रतिकर के तौर पर सूचनादाता को 15,000/- रुपए का भुगतान करने का अपीलार्थी को निर्देश देना अत्यधिक यथोचित होगा। उक्त राशि को इस्तेमाल अपीलार्थी की कन्या के वैवाहिक खर्चों को पूरा करने के लिए किया जाएगा जो विवाह योग्य आयु प्राप्त कर चुकी है।

21. पूर्वोक्त कारणों से यह अपील आंशिक रूप से अनुज्ञात की जाती है यह अवधारित करके कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304, भाग II के अधीन दोषसिद्धि में परिवर्तित किया जाना है। हम यह भी अवधारित करते हैं कि अपीलार्थी द्वारा हिरासत में बिताई गई अवधि दण्ड की अवधि मानी जाएगी। परिणामतः, अपीलार्थी, जो हिरासत में है, को स्वतंत्र किया जाता है, अगर किसी अन्य मामले में वह वांछित नहीं है। यह भी आदेश किया जाता है कि आज से एक महीने की अवधि के भीतर अपीलार्थी प्रतिकर के तौर पर सूचनादाता को 15,000/- रुपए (पन्द्रह हजार रुपए) का भुगतान करेगा।

जया रॉय, न्यायमूर्ति—मैं सहमत हूँ।

---

ekuuh; vftr dekj flUgk] U;k;efr

आईलेक्स सिनेमा, राँची

बनाम

भारत संघ एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) संख्या 9 वर्ष 2009. 7 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

(क) वायुयान अधिनियम, 1934—धारा 9-A—भंजिकरण—आवासीय इमारत को गिराने के लिए समाचार-पत्र में अधिसूचना प्रकाशित—याची द्वारा इस आधार पर चुनौती दी गई कि नोटिस सांविधिक प्रावधानों का उल्लंघनकारी है—अभिनिर्धारित, किसी सांविधिक प्रावधान का उल्लंघन नहीं हुआ है क्योंकि महानिदेशक, नागरिक उड्डयन ने अन्तिम आदेश पारित नहीं किया है—महानिदेशक द्वारा अन्तिम आदेश पारित किये जाने से पहले केन्द्र सरकार द्वारा निर्गत अधिसूचना अवैधानिक नहीं—रिट आवेदन को समयपूर्व अवधारित किया गया।

(पैरा 8 एवं 9)

(ख) वायुयान (इमारत एवं वृक्षों इत्यादि द्वारा कारित अवरोध का भंजिकरण) नियमावली, 1994—नियम 3 से 6—भंजिकरण–यह अभिवाक्, कि समाचार-पत्र में अधिसूचना किसी नोटिस के बगैर प्रकाशित किया गया है, इसलिए, यह अवैधानिक है–अभिनिर्धारित, किसी व्यक्तिगत नोटिस की आवश्यकता नहीं है कि क्योंकि नोटिस के माध्यम से मालिकों को उनकी अपनी पहल पर अवैधानिक संरचना को हटाना स्पष्टतः विनिर्दिष्ट किया गया है जिसमें असफल रहने पर सक्षम प्राधिकारी सांविधिक नियमावली के अनुरूप विधितः कार्यवाही करेंगे–इसलिए इसके बारे में कुछ भी अवैधानिक नहीं–रिट आवेदन को समय-पूर्व घोषित किया गया। (पैरा 9 एवं 10)

निर्णयज विधि.–AIR 2000 AP 459—विचारित।

अधिवक्तागण.–M/s Delip Jerath, Rajesh Kumar, Abhinesh Kumar, For the Petitioner; Mr. Faiz-ur-Rahman, For the Union of India; Mr. Rajeev Ranjan, For State of Jharkhand.

आदेश

दिनांक 20.12.2008 के स्थानीय जनभाषा का समाचार-पत्र ''हिन्दुस्तान'' में यथा प्रकाशित प्रत्यर्थी संख्या 3, उपायुक्त, राँची द्वारा निर्गत सामान्य नोटिस को निरस्त करने हेतु एक यथोचित रिट, आदेश या निर्देश को निर्गत करने के लिए वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गई है, जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची को अन्य के साथ-साथ 30.12.2008 तक उनकी निवासीय इमारत को हटाने का नोटिस किया गया है अन्यथा वह बलपूर्वक हटा दी जाएगी।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दैनिक समाचार-पत्र ''हिन्दुस्तान'' में यथा प्रकाशित दिनांक 20.12.2008 की विवादित अधिसूचना संविधिक विधि के उल्लंघन में है, विशेषकर धारा 9-A(3) की, जैसा कि वायुयान अधिनियम, 1934 के अधीन प्रावधान किया गया है। उसने अपने तर्क का समर्थन करने के लिए वायुयान (इमारतों एवं वृक्षों इत्यादि द्वारा कारित अवरोध के भंजिकरण) नियमावली, 1994 के नियम 3 से 6 को भी निर्दिष्ट किया है और इन पर भरोसा किया है। याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, इमारत गिराने से पहले एक नोटिस निर्गत करना होता है एवं/या इसे विनिर्दिष्ट स्थान पर चिपकाना होता है और तब जाकर प्राधिकारी कार्रवाई प्रारम्भ कर सकते हैं। विद्वान अधिवक्ता यह भी निवेदन करते हैं कि अधिसूचना बिना किसी नोटिस के निर्गत की गई है और इसलिए यह अवैधानिक है और अपास्त किए जाने की दायी है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने **ए॰ आई॰ आर॰ 2000 आन्ध्र प्रदेश 459 (फ्लैंग ऑफिसर, कमाण्डिंग-इन-चीफ, पूर्वी नौसेना कमाण्ड, विशाखापटनम एवं अन्य बनाम श्री विजय विशाखा सहकारिता दुग्ध डेयरी, विशाखापटनम एवं एक अन्य)** में यथा रिपोर्ट किए गए एक निर्णय पर और विशेष रूप से पैराग्राफ 29 पर भरोसा किया है, जो निम्नांकित रूप से उत्कथित है:–

> "29. परिणामतः, आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। विशाखापटनम विमानपत्तन पर प्रयोज्य वायुयान अधिनियम के अधीन सक्षम प्राधिकारी किसी इमारत को गिराने के लिए सुसंगत नियमों के अधीन यथा आवश्यक आदेशों को पारित करते समय और उक्त नियमावली के अधीन यथा अपेक्षित याची को अपना अभ्यावेदन रखने के लिए उसे एक पर्याप्त अवसर उपलब्ध कराने के उपरांत विहित प्रक्रिया का पालन करेगा। विशाखापटनम विमानपत्तन के सक्षम प्राधिकार के पास याची को सुनवाई का पर्याप्त अवसर देने के उपरांत अनापत्ति-प्रमाणपत्र को रद्द करने का विकल्प उपलब्ध होगा।

4. प्रत्यर्थी-राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि वायुयान अधिनियम, 1934 के अधीन यथा प्रावधान की गई धारा 9-A के अधीन केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचना निर्गत की गई है और राज्य ने उपायुक्त के कार्यालय के माध्यम से अधिसूचना को प्रकाशित किया है।

5. आक्षेपित अधिसूचना, जिसे वर्तमान रिट याचिका में चुनौती देना इप्सित किया गया है, को वायुयान अधिनियम, 1934 की धारा 9-A के अधीन राज्य सरकार द्वारा निर्गत किया गया था जो दिनांक 20.12.2008 को दैनिक समाचारपत्र ''हिन्दुस्तान'' में प्रकाशित की गई थी। वायुयान अधिनियम,

1934 की धारा 9-A अधिकारिक राजपत्र में एक अधिसूचना निर्गत करके केन्द्र सरकार को इमारत का निर्माण- वृक्षों का स्थापन इत्यादि को निषेधन करने के लिए सशक्त बनाती है और धारा 9-A(3) के अनुरूप जिनमें धारा 9-A की उप-धारा (1) के अधीन एक अधिसूचना निर्गत की गई है, गिराने के लिए इप्सित ऐसी किसी इमारत, वृक्ष इत्यादि के नियंत्रण रखने वाले किसी व्यक्ति या इनके स्वामी को अधिसूचना की एक प्रति की तामीला करना होता है। इस प्रकार, यह स्पष्ट होगा कि वायुयान अधिनियम, 1934 की धारा 9-A(3) केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचना निर्गत होने के उपरांत प्रभावी होती है एवं वायुयान अधिनियम, 1934 की धारा 9-A(1) के अधीन अधिसूचना को निर्गत करने के पहले नहीं।

6. याची का यह तर्क असत्य और अपोषणीय है कि वायुयान (इमारतों एवं वृक्षों इत्यादि द्वारा कारित अवरोधों का भंजिकरण) नियमावली, 1994 के नियमावली 3, 4, 5 एवं 6 का अनुपालन नहीं किया गया है। वायुयान (इमारतों एवं वृक्षों इत्यादि द्वारा कारित अवरोधों का भंजिकरण) नियमावली, 1994 के नियम 3, 4, 5 एवं 6 गिराने से पहले अनुपालन किए जाने वाले सांविधिक प्रक्रियाओं को विहित करते हैं। वायुयान अधिनियम, 1934 की धारा 9-A की उप-धारा (1) के अधीन केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचना के निर्गत होने के उपरांत ही नियम 3 प्रभावी होता है और यह वायुयान अधिनियम, 1934 की धारा 9-A की उप-धारा (3) के अनुरूप है।

7. यह नियम अधिदेश करता है कि नागरिक उड्डयन का महानिदेशक उपरोक्त निर्दिष्ट अधिसूचना की एक प्रति विमानपत्तन के प्रभारी पदाधिकारी के माध्यम से उस इमारत, जिसे इस आधार पर ध्वस्त किया जाना इप्सित है, कि यह उड़ानों की सुरक्षा के लिए खतरा है के किसी मालिक या अधिभोगी को तामीला कराएगा।

वायुयान नियमावली के नियम 4(1) अधिदिष्ट करता है कि सम्बद्ध व्यक्ति को अधिसूचना की एक प्रति का तामीला करते समय इसके साथ नागरिक उड्डयन के महानिदेशक का एक आदेश भी होगा, जिसमें इमारत या वृक्षों, और जो भी स्थिति हो, की अवस्थिति एवं इनके आयाम या आदेश में विनिर्दिष्ट कुछ अन्य विवरणों को दर्शाने वाले एक प्लान को विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर विमानपत्तन के प्रभारी पदाधिकारी को उपलब्ध करने का निर्देश स्वामी के लिए होगा।

8. नियम 4(2) एवं नियम 5(2) के अधीन यथा प्रावधान की गई सांविधिक आवश्यकता का अनुपालन करने के उपरांत नियम 6 महानिदेशक, नागरिक उड्डयन को अन्तिम आदेश पारित करने के लिए सशक्त बनाती है और यह स्पष्ट होगा कि पूर्वोक्त चरण को अभी आना शेष है और अभी तक कोई अन्तिम आदेश पारित नहीं किया गया है और, इस प्रकार, रिट याचिका ही समय से पहले है।

9. ए॰ आई॰ आर॰ 2000 आन्ध्र प्रदेश 459 (उपर) में, यथा रिपोर्ट किए गए खण्ड पीठ के निर्णय पर वर्तमान मामले में भरोसा करना मात्र इस कारण से भ्रामक और सटीक नहीं है कि यह एक ऐसा मामला था जहाँ नोटिस की तामीला करने में प्रक्रिया और सांविधिक आवश्यकता का अनुपालन किए बगैर और पर्याप्त सुनवाई का भी अवसर उपलब्ध कराए बिना 16.8.1996 को पहले ही इमारत गिराने का आदेश रख दिया गया था। याची के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क भी कि 20.12.2008 को दैनिक समाचारपत्र में यथा प्रकाशित आक्षेपित अधिसूचना भंजिकरण की एक आदेश है, प्रथम द्रष्टया त्रुटिपूर्ण, अपोषणीय और खारिज किए जाने का दायी है। यथा प्रकाशित अधिनियम के एक कोरे पठन पर यह स्पष्ट होगा कि यह स्पष्टत: नोटिस के माध्यम से 30.12.2008 तक मालिकों को उनकी स्वयं की पहल पर अवैध संरचना को हटाना विनिर्दिष्ट करता है, जिसमें असफल रहने पर सक्षम प्राधिकारी संविधिक नियमावली के अनुसार विधि के अनुसार कार्यवाही करेंगे और इस प्रकार इसके बारे में कुछ भी अवैधानिक नहीं है।

10. मामले के पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर, विचार करते हुए इस रिट याचिका को किसी गुणागुण से रहित होने और समय से पूर्व होने के कारण तद्नुसार, खारिज किया जाता है, परन्तु व्ययों के संबंध में बिना किसी आदेश के।

ekuuh; Mhñ thñ vkjñ iVuk;d] U;k;efr

दिनेश कुमार मांझी

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं अन्य

डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 1171 वर्ष 2008. 12 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

(क) झारखण्ड सेवा संहिता–नियम 59—स्थानान्तरण–एकपक्षीय प्रभार ग्रहण–यदि कोई सरकारी सेवक कार्यालय का एकपक्षीय प्रभार ग्रहण करता है, तो इसे स्वयंमेव ही अभिस्वीकृत नहीं किया जा सकता है जबतक कि यह सेवा संहिता के नियम 59 के अधीन निर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुरूप विभाग के सम्बन्धित प्राधिकारियों द्वारा स्वीकृत एवं अनुसमर्थित न किया गया हो। (पैरा 11)

(ख) सेवा विधि–स्थानान्तरण–पूर्व में निर्गत स्थानान्तरण आदेश को रद्द किया गया–याची ने आदेश को इस आधार पर चुनौती दी कि उसने अपने पूर्ववर्ती स्थानान्तरण आदेश के आधार पर प्रभार ग्रहण किया है–तत्पश्चात्, उसे प्रशासनिक अत्यावश्यकताओं के कारण स्थापना समिति के निर्णय द्वारा उसी प्रास्थिति एवं वेतनमान पर दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित किया गया था–चूँकि याची ने प्राधिकारियों की ओर से कोई दुर्भावना दर्शित नहीं किया है, इसलिये पश्चातवर्ती स्थानान्तरण को अभिखंडित नहीं किया जा सकता है। (पैरा 11)

अधिवक्तागण.–Mrs. Ritu Kumar, For the Petitioner; Mr. Md. Shamim Akhtar, For the Respondent-State; Mr. Indrajeet Sinha, For the Respondent No. 4.

आदेश

इस रिट आवेदन में दिनांक 12.2.2008 के अधिसूचना सं॰ 384 को चुनौती दी गयी है, जिसके द्वारा दिनांक 24.12.2007 के अधिसूचना सं॰ 3082 के माध्यम से पूर्व में निर्गत, याची को चतरा स्थानान्तरित करने का आदेश रद्द किया गया है एवं उसे अनुमंडलीय कृषि अधिकारी (सामान्य) की हैसियत से स्थानान्तरित किया गया है। उपरोक्त अधिसूचना के अभिखंडन की प्रार्थना करते समय, याची ने दिनांक 18.2.2008 के अधिसूचना सं॰ 382 के अभिखंडन की भी प्रार्थना की है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 4 को कोडरमा के अनुमंडलीय कृषि अधिकारी के अपने सारवान पद के अतिरिक्त चतरा के अनुमंडलीय कृषि अधिकारी के पद पर बने रहने का निर्देश दिया गया है।

2. याची एवं प्रत्यर्थी सं॰ 4 कोटि 1 (शस्य विज्ञान) झारखण्ड कृषि सेवा वर्ग-II के सदस्य हैं। याची को कुछ समय के लिये ग्रामीण विकास विभाग में प्रतिनियुक्त किया गया था जहाँ से बाद में उसे अपने मूल विभाग, अर्थात्, कृषि एवं ईख विकास विभाग में संप्रत्यावर्तित किया गया था जहाँ उसने 4.12.2007 को पद ग्रहण किया।

याची के अपने मूल विभाग में पद ग्रहण करने पर, स्थानान्तरण एवं पदस्थापन के लिये उसके मामले पर विचार किया गया एवं इसे विभागीय स्थापना समिति के समक्ष रखा गया। विभागीय स्थापना समिति की सिफारिश के अनुसरण में, याची को दिनांक 24.12.2007 के अधिसूचना सं॰ 3082 के माध्यम से अनुमंडलीय कृषि अधिकारी (सामान्य) की हैसियत से चतरा में पदस्थापित करने का आदेश दिया गया था।

याची का विवाद यह है कि उपरोक्त अंतरण अधिसूचना में यथा अंतर्विष्ट निर्देशों के अनुपालन

में, उसने 27.12.2007 को चतरा में पदस्थापन का निवेदन किया, एवं प्रत्यर्थी सं॰ 4 से, जो वहाँ अनुमंडलीय कृषि अधिकारी के तौर पर पदस्थापित थे, कार्यालय का प्रभार सुपुर्द करने को कहा।

जब प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने कार्यालय का प्रभार तुरन्त सुपुर्द नहीं किया, तो याची ने 31.12.2007 को चतरा के कार्यालय का प्रभार स्वयं ग्रहण किया। याची द्वारा कार्यालय के प्रभार ग्रहण को उसके ''नियंत्रक प्राधिकारी'' द्वारा अभिस्वीकृति दिया गया जिन्होंने दिनांक 31.12.2007 के प्रभार रिपोर्ट पर अपने प्रति हस्ताक्षर संलग्न किये। तत्पश्चात् प्रभार रिपोर्ट को 11.1.2008 को प्रधान सचिव (प्रत्यर्थी सं॰ 2) को अग्रसारित किया गया एवं इसके आधार पर वित्त विभाग, झारखण्ड सरकार ने 24.1.2008 को याची के पक्ष में वेतन पर्ची निर्गत किया। याची यह दावा करता है कि 31.12.2007 को कार्यालय में पद ग्रहण करने के समय से, वह अनुमंडलीय कृषि अधिकारी के तौर पर चतरा में निरन्तर रूप से कार्यरत है।

3. याची की शिकायत यह है कि जब वह अनुमंडलीय कृषि अधिकारी के तौर पर अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते हुए चतरा में वास्तविक रूप से स्थापित हो चुका था, तब प्रत्यर्थीगण ने चतरा के कार्यालय में याची के पद ग्रहण की अभिस्वीकृति से इनकार करते हुए एवं यह निर्देश भी देते हुए कि प्रत्यर्थी सं॰ 4 अनुमंडलीय कृषि अधिकारी, कोडरमा के अपने सारवान पद के अतिरिक्त चतरा में अनुमंडलीय कृषि अधिकारी पद पर भी बने रहेंगे, दिनांक 18.2.2008 को आक्षेपित अधिसूचना निर्गत किया। उसी आक्षेपित अधिसूचना द्वारा, दिनांक 24.12.2007 के अधिसूचना सं॰ 3082 के माध्यम से याची को चतरा में स्थानान्तरण का पूर्ववर्ती आदेश रद्द किया गया था एवं याची को उसी हैसियत से गिरिडीह में स्थानान्तरित किया गया था।

याची ने उपरोक्त आक्षेपित अधिसूचना को अवैध, मनमाना एवं अमान्य होने के आधार पर आलोचना की है।

4. प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3, अर्थात् कृषि एवं ईख विकास विभाग, झारखण्ड सरकार, राँची के क्रमशः सचिव एवं अपर सचिव की ओर से प्रति शपथ-पत्र दाखिल किये गये हैं। निजी प्रत्यर्थी सं॰ 4 की ओर से एक पृथक शपथ-पत्र भी दाखिल किया गया है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता, प्रत्यर्थी-राज्य के विद्वान अधिवक्ता एवं साथ ही प्रत्यर्थी सं॰ 4 के विद्वान अधिवक्ता को सुना।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता, श्रीमती रितु कुमार ने निवेदन किया कि इस तथ्य के आलोक में कि दिनांक 24.12.2007 के स्थानान्तरण की अधिसूचना के अनुसरण में, याची ने चतरा में अनुमंडलीय कृषि अधिकारी की हैसियत से अपना पद ग्रहण किया था एवं इस पदग्रहण को उसके नियंत्रक प्राधिकारी द्वारा स्वीकार किया गया था एवं इससे भी बढ़कर, उसके पदग्रहण की ऐसी स्वीकृति पर, राज्य सरकार के वित्त विभाग ने भी उपरोक्त स्थान पर याची को वेतन पर्ची भी निर्गत किया था, याची के स्थानान्तरण को एकाएक रद्द नहीं किया जा सकता था एवं उसे चतरा से पुनः स्थानान्तरित नहीं किया जा सकता था। विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यह विधि का एक सुस्थापित सिद्धांत है कि जहाँ कोई सरकारी सेवक ने नियुक्ति के अपने स्थानान्तरित स्थान पर स्थानान्तरण के आदेश के अनुसरण में कार्यालय का प्रभार ग्रहण किया है, तो स्थानान्तरण के ऐसे आदेश को प्रक्रिया के नियमों के सिवाय एकाएक रद्द नहीं किया जा सकता है।

7. विद्वान अधिवक्ता ने तर्क देते हैं कि याची के स्थानान्तरण के पूर्वतर आदेश को रद्द करने वाला आक्षेपित आदेश निर्गत करने एवं गिरीडीह से चतरा स्थानान्तरित करने का एक ताजा निर्देश निर्गत करने में, प्रत्यर्थीगण के सम्बन्धित प्राधिकारीगण ने प्रत्यर्थी सं॰ 4 का असाधारण पक्ष लेने एवं इसकी सुविधा

देने के एकमात्र प्रयोजन एवं दुर्भावना से मनमाने ढंग से कार्य किया। विद्वान अधिवक्ता यह स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं कि प्रत्यर्थी सं॰ 4 वर्ष 2002 से ही चतरा के अनुमंडलीय कृषि अधिकारी का पद धारण किए हुए हैं एवं स्टेशन से उसके स्थानान्तरण पर विचार करने के बजाय प्रत्यर्थी-प्राधिकारीगण ने उसे उसी स्टेशन के पद पर बने रहने की अनुमति दी है।

8. अपने प्रति शपथ-पत्र में, प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3 ने याची के सम्पूर्ण दावे से इनकार एवं इसका खण्डन किया है एवं याची द्वारा पेश किए गए आधारों को तथ्यों एवं विधि के बिन्दु पर भी भ्रामक एवं भुलावा देने वाला होने के कारण विरोध करना इप्सित किया है।

प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3 द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण, यह है कि दिनांक 24.12.2007 के अधिसूचना सं॰ 3082 के माध्यम से, याची को अनुमंडलीय कृषि अधिकारी (सामान्य) के तौर पर चतरा में पदस्थापित किया गया था। उक्त अधिसूचना के अनुसरण में, याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 4 को, जो तब चतरा में कार्यालय का प्रभार धारण किए थे, उसे प्रभार देने के लिए एक पत्र लिखा। प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने कुछ समय की ईप्सा की क्योंकि उन्हें कुछ दस्तावेजी प्रक्रिया पूरी करनी थी। प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा प्रभार अंतरित करने के लिए प्रतीक्षा करने के बजाय, याची ने अंततः 31.12.2007 को एकपक्षीय रूप से कार्यालय का प्रभार ग्रहण करने की कार्यवाही की। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता यह स्पष्ट किए कि वैसे मामलों में जहाँ सरकारी सेवक स्वयं कार्यालय का प्रभार ग्रहण करता है, वहाँ इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है, जबतक कि झारखंड सेवा संहिता के नियम 59 के अधीन यथा अधिकथित प्रक्रिया के नियमों के अनुरूप सरकारी-स्तर पर इसकी पुष्टि नहीं की जाती है। इस बीच, सेमरिया में होने वाले उप-चुनावों की पूर्वसंध्या पर भारतीय निर्वाचन आयोग द्वारा 4.1.2008 को आदर्श आचार-संहिता के अधिरोपण के कारण सभी सरकारी सेवकों के स्थानान्तरण आदर्श आचार संहिता के अधीन प्रतिबंधित किए गए थे।

आदर्श आचार संहिता के प्रवर्तन पर विचार करते हुए, याची 31.12.2007 को पद ग्रहण करने पर, कार्यालय में अपना पदग्रहण स्वीकार करने का आग्रह करते हुए, याची का दिनांक 11.1.2008 के पत्र (परिशिष्ट-5) को प्रत्यर्थी सं॰ 4 के पत्र के साथ विभागीय स्थापना समिति को निर्दिष्ट किया गया था एवं दोनों ही पत्रों में उठाये गए मुद्दों पर विचार करके एवं आदर्श आचार संहिता के अधिरोपित मॉडल के अधीन निषेधों पर विचार करके विभागीय स्थापना समिति ने 22.1.2008 को आयोजित इसकी बैठक में यथास्थिति बनाये रखने एवं याची द्वारा एकपक्षीय प्रभार ग्रहण की पुष्टि न करने का निर्णय लिया एवं अनुमंडलीय कृषि अधिकारी, चतरा के कार्यालय का अतिरिक्त प्रभार ग्रहण करने की अनुमति प्रत्यर्थी सं॰ 4 को देते समय अनुमंडलीय कृषि अधिकारी, गिरिडीह के तौर उसके पदस्थापन की सिफारिश की। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी स्पष्ट किया कि याची का गिरिडीह में स्थानान्तरण प्रशासनिक अत्यावश्यकता के आधार पर किया गया था एवं चतरा में उसके स्थानान्तरण के पूर्ववर्ती आदेश का रद्दकरण इस तथ्य के कारण किया जाना था कि पूर्ववर्ती स्थानान्तरण आदेश पर विभाग के सम्बन्धित प्राधिकारियों द्वारा इसपर विचार नहीं किया गया था कि याची द्वारा कार्रवाई की गयी है, क्योंकि कार्यालय में उसके एकपक्षीय प्रभार ग्रहण को स्वीकार नहीं किया गया था। विद्वान अधिवक्ता यह भी स्पष्ट करते हैं कि कार्यालय में उसके एकपक्षीय प्रभार ग्रहण को स्वीकार करने के लिए याची का आग्रह पत्र, जो उसके द्वारा 8.1.2008 को भेजा गया था, विभाग मुख्यालय में 8.1.2008 के पश्चात, उस समय प्राप्त किया गया था जब आचार संहिता प्रवर्तित की गयी थी। यह भी स्पष्ट किया गया है कि याची ने यह दावा करके गुमराह करने की कोशिश की है कि कार्यालय में उसका एकपक्षीय

पदग्रहण की अभिस्वीकृति उसके नियंत्रक प्राधिकारी द्वारा प्रभार रिपोर्ट में किये गये प्रतिहस्ताक्षर द्वारा दी गयी थी, क्योंकि वह व्यक्ति, जिसने प्रभार रिपोर्ट पर अभिप्रायित रूप से प्रति हस्ताक्षर किये थे, न तो उस स्टेशन पर याची का नियंत्रक पदाधिकारी था और न ही वह ऐसे प्रभार रिपोर्ट को स्वीकार करने एवं अभिस्वीकृति देने में समर्थ था।

विद्वान अधिवक्ता आगे तर्क देते हैं कि राज्य सरकार के वित्त विभाग द्वारा निर्गत वेतन पर्ची भी दिनांक 18.6.2008 के विभागीय पत्र सं॰ 2598 के माध्यम से रद्द किया गया था।

प्रत्यर्थी सं॰ 4 के सम्बन्ध में, याची के तर्क के बारे में, विद्वान अधिवक्ता ने यह स्पष्ट किया कि वास्तव में, प्रत्यर्थी सं॰ 4 को अनुमंडलीय कृषि अधिकारी के तौर पर कोडरमा में भी स्थानान्तरित किया गया है एवं आक्षेपित अधिसूचना के अधीन चतरा के कार्यालय का अतिरिक्त प्रभार भी दिया गया है।

9. अपने प्रति शपथ-पत्र में, प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने याची द्वारा उसके विरूद्ध लगाये गए अभिकथनों से इन्कार और विवाद किया है एवं यह स्पष्ट करने की ईप्सा की है कि दिनांक 24.12.2007 के स्थानान्तरण अधिसूचना के अनुसरण में कार्यालय का दस्तावेजी प्रक्रिया पूरा करने के लिए कुछ समय की जरूरत थी, कार्यालय का प्रभार स्थानान्तरित करने के लिए याची से एक सप्ताह का समय दिये जाने की अनुमति प्राप्त करने के लिए एक प्रति आग्रह करते हुए उत्तर दिया था। इस बीच, भारत के निर्वाचन आयोग ने चुनाव कार्य से जुड़े अधिकारियों के स्थानान्तरण पर पूर्ण प्रतिबंध लगाते हुए 4.1.2008 को एवं इसके बाद आदर्श आचार संहिता अधिरोपित किया था। तत्पश्चात्, प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने याची को प्रभार अंतरण के मामले में दिशा-निर्देश की मांग करते हुए 9.1.2008 को प्रधान सचिव को एक पत्र लिखा।

प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण यह है कि याची ने 4.1.2008 से पहले कभी भी उससे कार्यालय का प्रभार ग्रहण नहीं किया एवं इस प्रकार याची द्वारा कार्यालय की एकपक्षीय पदग्रहण को विभाग के सम्बन्धित प्राधिकारियों द्वारा स्वीकार एवं अनुसमर्थन किया गया था एवं इस प्रकार, दिनांक 24.12.2007 के स्थानान्तरण अधिसूचना को न तो याची एवं न ही प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा प्रभाविता दी गयी थी।

10. परस्पर विरोधी निवेदनों से, तथ्य जो प्रतीत होते हैं, ये हैं कि दिनांक 24.12.2007 के स्थानान्तरण अधिसूचना के अनुसरण में, याची ने अपनी नियुक्ति चतरा में करने का निवेदन करना चाहा था एवं कार्यालय का प्रभार याची को अंतरित करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 4 से जो उस समय उस पद पर पदासीन थे, आग्रह किया था। प्रत्यर्थी सं॰ 4 के कार्यालय का प्रभार अंतरित करने के लिए समय की मांग करने पर याची ने इसके विपरीत कार्यालय का प्रभार स्वयं ग्रहण करने की कार्यवाही की।

11. स्वीकार्यत:, उन मामलों में जहाँ सरकारी अधिकारी एकपक्षीय रूप से कार्यालय का प्रभार ग्रहण करता है। वहाँ इसे स्वयं ही अभिस्वीकृति नहीं दी जा सकती है जबतक कि इसे झारखण्ड सेवा संहिता के नियम 59 के अधीन प्रक्रिया के अनुरूप विभाग के सम्बन्धित प्राधिकारियों द्वारा स्वीकृत एवं अनुसमर्थित न किया गया हो। इस नियमावली को ध्यान में रखते हुए, याची ने सहयोगी के हस्ताक्षर अभिप्राप्त करके 8.1.2008 को एक आग्रह पत्र के साथ एक अभिप्रायित प्रभार रिपोर्ट स्वीकृति हेतु भेजी। यद्यपि याची ने दावा किया है कि वह व्यक्ति जिसने याची के एकपक्षीय प्रभार रिपोर्ट पर हस्ताक्षर किए थे, उसके नियंत्रक प्राधिकारी थे परन्तु ऐसे दावे को प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3 द्वारा यह घोषणा करते हुये जोर देकर इससे इनकार एवं विवाद किया गया है कि उक्त व्यक्ति याची के समान उसी क्षमता का एक सहयोगी कर्मचारी था एवं याची के एकपक्षीय कार्यालय प्रभार ग्रहण करने की अभिस्वीकृति

देने में एवं स्वीकार करने में सक्षम नहीं था। यह भी प्रतीत होता है कि एकपक्षीय पदभार ग्रहण की स्वीकृति के लिये सम्बन्धित प्राधिकारीगण के समक्ष लाये गये याची के आग्रह को आदर्श आचार संहिता द्वारा अधिरोपित प्रतिबंध की दृष्टि में, विभागीय स्थापना समिति द्वारा खारिज किया गया था।

उक्त तथ्य स्पष्ट रूप से यह इंगित करते हैं कि एकपक्षीय पद ग्रहण को, जैसा कि याची द्वारा किये जाने का दावा किया गया है, विभाग के सम्बन्धित प्राधिकारियों द्वारा स्वीकृत एवं अभिस्वीकृत नहीं किये जाने के कारण, यह माना गया था कि याची को चतरा स्थानान्तरण का पूर्ववर्ती अधिसूचना पर कभी भी अमल नहीं किया गया था। सम्पूर्ण मामले पर विचार करते हुये, वर्तमान परिस्थितियों के आलोक में, विभागीय स्थापना समिति ने याची के स्थानान्तरण के पूर्ववर्ती अधिसूचना को रद्द करने एवं उसी क्षमता तथा उसी वेतनमान पर याची को गिरिडीह पदस्थापित करने की सिफारिश की थी। यह भी प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 4 को उसी क्षमता से कोडरमा में भी स्थानान्तरित किया गया था यद्यपि आक्षेपित अधिसूचना द्वारा, उसे चतरा के कार्यालय का दोहरा प्रभार भी ग्रहण करने को कहा गया था।

याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रभावित करना चाहा कि यद्यपि आक्षेपित अधिसूचना निर्गत करने में, सम्बन्धित प्रत्यर्थी–प्राधिकारीगण दुर्भावनापूर्ण हेतु से बाध्य हुये थे, तथापि याची प्रत्यर्थी–प्राधिकारीगण की ओर से ऐसी दुर्भावना को दर्शाने में सक्षम नहीं रहा है। इसलिये, विभागीय स्थापना समिति के निर्णय पर प्रश्न नहीं किया जा सकता है क्योंकि स्पष्ट रूप से ऐसा निर्णय प्रशासनिक अत्यावश्यकताओं के कारण लिया गया था।

12. उक्त चर्चाओं के आलोक में, मैं इस रिट आवेदन में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ thñ vkjñ iVuk;d] U;k;efrlx.k

बीरेन्द्र कुमार मिश्रा

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं अन्य

एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 532 वर्ष 2005. 15 जनवरी, 2009 को विनिश्चित।

डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 2520 वर्ष 2005 में पारित दिनांक 29.6.2005 के निर्णय के विरूद्ध।

झारखण्ड प्राथमिक विद्यालय नियुक्ति नियमावली, 2002—नियम 2(Kha)–प्रशिक्षित शिक्षक–मानसिक हैण्डिकैप्ड का राष्ट्रीय संस्थान, सिकन्दराबाद एक संविधिक निकाय R.C.I. द्वारा मान्यता प्राप्त एक प्रशिक्षण संस्थान है–NIMH से प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले उम्मीदवार सामान्य छात्रों को भी पढ़ा सकते है। (पैरा 9 एवं 10)

निर्णयज विधि.–2005(2) JCR 293(Jhr.); WPS No. 5276 of 2004—विचारित।

अधिवक्तागण.–Mr. H.K. Mahto, For the Appellant; Mr. Manoj Tandon, For the State; Mr. S. Piprawal, For the Respondent No. 6; Mr. M.A. Khan, For the Union of India.

न्यायालय द्वारा.–अपीलार्थी की रिट याचिका को खारिज करने वाले दिनांक 29.6.2005 के आदेश, जिसमें डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ संख्या 2520 वर्ष 2005 को पारित किया गया था, के विरूद्ध यह अन्तर न्यायालयी अपील दाखिल की गई है।

2. 22.3.2006 को, इस अपील में निम्नांकित प्रश्नों को विरचित किया गया था:–

''इस अपील में, निम्नांकित प्रश्नों को अवधारित किए जाने की आवश्यकता है।

(a) क्या विद्यालयों/महाविद्यालयों में विकलांग बच्चों के लिए सीट का कोई आरक्षण है:–

(b) क्या सामान्य रूप से प्रशिक्षित शिक्षक या शारीरिक प्रशिक्षित शिक्षक विकलांग बच्चों को पढ़ा सकते हैं या इस वास्ते मंदबुद्धि बच्चो के लिए प्रशिक्षित व्यक्तियों की नियुक्ति की जाने चाहिए....''

3. उक्त प्रश्नों के संबंध में, श्री टंडन ने राज्य-प्रत्यर्थीगण की ओर से दाखिल शपथपत्र के निम्नांकित पैराग्राफों को निर्दिष्ट किया:-

"12. यह कि प्रथम प्रश्न का संदर्भ में कि क्या विद्यालय/महाविद्यालयों में विकलांग बच्चों के लिए सीटों का कोई आरक्षण है, उत्तरदाता प्रत्यर्थीगण-राज्य कथित करते हैं कि झारखंड सरकार ज्ञापांक संख्या 5800 दिनांक 10.10.2002 और ज्ञापांक संख्या 5776 दिनांक 10.10.2002 में निहित संकल्पों के द्वारा सीटों के आरक्षण की एक नीति बनायी हैं जिसे अभिलेख पर लाया गया है।

ज्ञापांक संख्या 5800 दिनांक 10.10.2002 और ज्ञापांक संख्या 5776 दिनांक 10.10.2002 में निहित उक्त संकल्पों की प्रतियां यहाँ पर संलग्न की गई है और परिशिष्टि-B एवं B/1 के तौर पर चिन्हित किया गया।

13. यह कि इस माननीय न्यायालय द्वारा विरचित प्रश्न संख्या 2 के संदर्भ में कि क्या सामान्य प्रशिक्षित या शारीरिक प्रशिक्षित शिक्षक विकलांग व्यक्तियों को पढ़ा सकते हैं या इसके लिए मंदबुद्धि बच्चों के लिए प्रशिक्षित व्यक्तियों की नियुक्ति की जानी चाहिए, यह सविनय निवेदन करना है कि मंदबुद्धि बच्चों के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति करना चाहिए। तथापि, इसी समय यह स्पष्ट किया जाता है कि शारीरिक रूप से अशक्त एक बच्चे को सामान्य प्रशिक्षित शिक्षकों द्वारा पढ़ाया जा सकता है क्योंकि यद्यपि वह विकलांग है परन्तु उसकी मानसिक प्रास्थिति सामान्य है।''

तथापि, श्री टण्डन ने स्पष्ट किया है कि उक्त संकल्प संख्या 5800 दिनांक 10.10.2002 और ज्ञापांक संख्या 5776 दिनांक 10.10.2002 विद्यालयों/महाविद्यालयों में विकलांग व्यक्तियों के लिए सीटों के आरक्षण का प्रावधान नहीं करते।

राज्य-प्रत्यर्थीगण द्वारा किए गए पूर्वोक्त प्रकथनों की दृष्टि में, हम इस अपील में, उक्त प्रश्नों में और आगे जाने का इरादा नहीं रखते।

4. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित, श्री एच॰ के॰ महतो ने निवेदन किया कि अपीलार्थी ने राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान, सिकन्दराबाद (संक्षेप में NIMH) द्वारा निर्गत NIMH से मान्यता प्राप्त 'दीपशिखा' से प्रशिक्षण प्राप्त करने के उपरांत मानसिक निशक्तता में डिप्लोमा का एक प्रमाण-पत्र प्राप्त किया। उन्होंने निवेदन किया कि झारखण्ड प्राथमिक विद्यालय नियुक्ति नियमावली, 2002 (संक्षेप में नियमावली) के नियम 2(Kha) की दृष्टि में, एक ''प्रशिक्षित'' उम्मीदवार शिक्षा में डिप्लोमा/शिक्षण में डिप्लोमा रखने वाला एक उम्मीदवार शामिल है, जो शिक्षा या शिक्षण में विशेष प्रशिक्षण रखने वाले किसी उम्मीदवार को अपवर्जित नहीं करता। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि **स्नेहलता कुमारी (डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ संख्या 5276 वर्ष 2004)** का मामला अपीलार्थी के मामले पर लागू नहीं होता क्योंकि अपीलार्थी ने 1992 में डिप्लोमा प्राप्त किया था, जबकि स्नेहलता कुमारी के मामले में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् अधिनियम, 1993 (संक्षेप में NCTE अधिनियम) के प्रवर्तन के उपरांत, जो 1.7.1995 से प्रभावी हुआ था, 1999 से 2002 के बीच डिप्लोमा प्राप्त किया गया था। उन्होंने प्रत्यर्थी संख्या 7 की ओर से दाखिल शपथपत्रों के निम्नांकित पैराग्राफों को भी निर्दिष्ट किया।

"4. मैं कहता हूँ और निवेदन करता हूँ कि आर॰ सी॰ आई॰ अधिनियम, 1992 के क्रियान्वयन के पहले; राष्ट्रीय संस्थान विकलांगता के क्षेत्र में प्रशिक्षण कार्यक्रमों को देख रहे थे और वृत्तिकों के प्रशिक्षण और परीक्षा के लिए उत्तरदायी थे। अपीलार्थी ने राष्ट्रीय संस्थान,

सिकन्दराबाद से प्रशिक्षण प्राप्त किया था, जो 1992 में एक अनुमोदित योग्यता है। वर्ष 1990-91, 1991-92 में भी, राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान, सिकन्दराबाद परिषद् द्वारा मानकीकृत विशेष शिक्षा कार्यक्रम में डिप्लोमा करवा रहा था, जब परिषद की प्रास्थिति एक समिति की थी। जैसे ही संस्थान ने मान्यता के लिए आवेदन किया, वर्ष 1993-94 में मान्यता प्राप्त संस्थान की सूची में नाम को शामिल कर लिया गया है (परिषद की 1990-91, 1991-92 और 1993-94 की वार्षिक रिपोर्ट को इसके साथ अनुलग्न किया गया है।)''

7. मैं कहता हूँ और निवेदन करता हूँ कि दीपशिखा, राँची में मानसिक निशक्तता में शिक्षक प्रशिक्षण डिप्लोमा परिषद का एक मान्यता प्राप्त प्रशिक्षण कार्यक्रम है और अर्हता प्राप्त वृत्तिकों को प्राथमिक शिक्षक के तौर पर नियुक्ति के लिए विचार किया जाएगा। उक्त कोर्स में, एक उम्मीदवार विकलांग पर ध्यान देने के सभी पहलुओं और उनको पढाने के तरीके का प्रशिक्षण प्राप्त करता है। तथापि, सामान्य कोटि के शिक्षकों की तुलना में ये विशेष शिक्षक अधिक सक्षम होते हैं क्योंकि परिषद ने कार्यक्रम इस प्रकार तैयार किया है कि ये विशेष शिक्षक सभी पहलुओं में प्रशिक्षित हो ताकि वे विकलांग बच्चों और साथ-साथ सामान्य बच्चों पर भी ध्यान दे सके।

8. मैं कहता हूँ और निवेदन करता हूँ कि विकलांगता के क्षेत्र में प्रशिक्षण कार्यक्रम का विनियमन करने के लिए परिषद एक सांविधिक निकाय है और यह 1992 में अस्तित्व में आई थी जब एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ का कोई अस्तित्व नहीं था। इसलिए विशेष शिक्षक हेतु शिक्षक प्रशिक्षण कोर्स के लिए एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ के अनुमोदन की कोई आवश्यकता नहीं है, जो केवल परिषद की परिधि के भीतर है।

9. मैं यह भी कहता हूँ और निवेदन करता हूँ कि सामान्य कोर्सों के लिए ऐसे शिक्षकों की सक्षमता को अधिक फलदायी माना जाना चाहिए क्योंकि किसी भी स्थिति में अगर कक्षा में कोई विकलांग बच्चा है तो इस बच्चे की देखरेख करना कठिन नहीं होगा। सरकार की ''सर्व शिक्षा अभियान'' की नीति के अधीन यह आवश्यक है कि ''सभी के लिए शिक्षा'' में सरकारी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय में विशेष शिक्षक की नियुक्ति की जानी चाहिए।

10. यहाँ पर यह उल्लेख करना समीचीन है कि कुछ राज्यों ने विशेष शिक्षकों को पहले ही सामान्य कोटि के शिक्षको के समतुल्य घोषित कर दिया है। इस मामले में याची पूर्णरूप से एक योग्य उम्मीदवार है क्योंकि वह प्राथमिक शिक्षक भर्त्ती परीक्षा में सफल हुआ और प्राथमिक शिक्षक के तौर पर नियुक्ति के लिए उसके नाम की अनुशंसा की गई थी। इसलिए, उसकी सक्षमता के बारे में कोई संदेह नहीं है और सम्बद्ध प्राधिकारी को उसे अपनी प्रतिभा सिद्ध करने का अवसर देना चाहिए।''

इसलिए, उन्होंने निवेदन किया कि एक प्राथमिक शिक्षक विद्यालय के तौर पर अपीलार्थी की नियुक्ति के लिए उसके मामले पर विचार करने के लिए राज्य-प्रत्यर्थीगण को एक निर्देश निर्गत किया जाना चाहिए क्योंकि अपीलार्थी सामान्य छात्रों को पढ़ाने में भी सक्षम है। उन्होंने अपीलार्थी की ओर से 25.7.2008 को दाखिल शपथपत्र के पैरा 5 को भी यह कहते हुए निर्दिष्ट किया कि हजारीबाग जिला में मानसिक रूप से निशक्त बच्चों को नियमित शिक्षकों से पढ़ाने के लिए जिला शिक्षा अधीक्षक कैम्प प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन कर रहा है।

5. दूसरी ओर, राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले श्री टण्डन ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश **स्नेहलता कुमारी (उपर)** के मामले पर आधृत है, जो **2005 (2) जे॰ सी॰ आर॰ 293 (झारखण्ड)** में रिपोर्ट किए गए **दिलीप कुमार गुप्ता** के मामले में दिए गए खण्ड पीठ के निर्णय

पर आधृत है। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि चूँकि सामान्य विद्यालयों में प्राथमिक शिक्षकों की नियुक्ति के प्रयोजन के लिए दिए गए विज्ञापन के अनुसरण में नियुक्ति के प्रयोजन के लिए अपीलार्थी के पास आवश्यक प्रशिक्षण नहीं है। अत: उसके दावे को उचित रूप से ही खारिज किया गया था।

6. भारत संघ की ओर से उपस्थित होने वाले श्री खान ने प्रत्यर्थी संख्या 7 की ओर से दाखिल प्रति-शपथपत्र के पूर्वोक्त अनुच्छेदों को निर्दिष्ट करते हुए अपीलार्थी के पक्ष का समर्थन किया।

7. प्राथमिक शिक्षकों की नियुक्ति के लिए विज्ञापन के अनुसरण में याची ने आवेदन किया और उसे झारखण्ड लोक सेवा आयोग (JPSC) द्वारा चयनित किया गया; और हजारीबाग जिले के सामान्य कोटि में नियुक्ति के लिए अनुशंसा की गई, परन्तु इस आधार पर कि अधिकारी होने के बावजूद उसे नियुक्ति प्रदान नहीं की गई थी, उसने एक रिट याचिका दाखिल की जो डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ संख्या 5032 वर्ष 2004 था, जिसे सचिव, मानव संसाधन विभाग, झारखण्ड सरकार, राँची के समक्ष एक अभ्यावेदन दाखिल करने की याची को स्वतंत्रता देकर 27.9.2004 को निस्तारित किया गया, जिस पर एक दिए गए समय के भीतर विचार किया जाना था और एक अन्तिम निर्णय लिया जाना था। तद्नुसार, याची ने एक अभ्यावेदन दाखिल किया परन्तु उसे दिनांक 27.1.2005 के आदेश (परिशिष्ट-2) द्वारा इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि नियमावली के नियम 2(Kha) के अनुसार उसके पास प्रशिक्षण की अर्हता नहीं है।

उक्त आदेश को चुनौती देते हुए, याची ने प्रश्नाधीन रिट याचिका को दाखिल की। इसे 29.6.2005 को मुख्यत: इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि **स्नेहलता कुमारी (ऊपर)** के मामले में परिदत्त निर्णय द्वारा अपीलार्थी का मामला पूर्णरूप से आच्छादित होता है। यह आदेश इस अपील में चुनौती के अधीन है।

8. दिलीप कुमार महतो (उपर) के खण्ड पीठ निर्णय का निम्नांकित अंश सुसंगत है:-

> ''इसलिए नियमावली, 2002 के नियम 2(Kha) में यथा प्रतीत होने वाली ''मान्यता प्राप्त प्रशिक्षण संस्थान'' (मान्यता प्राप्त प्रशिक्षण संस्थान) अभिव्यक्ति के एक अन्य उपयुक्त अर्थान्वयन करके, मैं अवधारित करता हूँ कि अभिव्यक्ति ''मान्यता प्राप्त प्रशिक्षण संस्थान'' का अर्थ राज्य सरकार या भारत सरकार या सांविधिक निकायों जैसे N.C.T.E. या U.G.C. या संस्थानों द्वारा मान्यकृत या स्थापित एक प्रशिक्षण संस्थान से है, जो राज्य सरकार या केन्द्र सरकार द्वारा अनुरक्षित और नियंत्रित हो या एक विश्वविद्यालय द्वारा मान्यकृत या सम्बद्धीकृत एक प्रशिक्षण संस्थान या शिक्षक प्रशिक्षण कोर्स कराने वाले एक बोर्ड से है.....
>
> एक व्यक्ति, जिसने 31 जनवरी, 1996, यानि एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम, 1993 के प्रख्यापन के छ: महीनों के उपरांत राज्य सरकार या केन्द्र सरकार द्वारा अनुरक्षित और नियंत्रित संविधिक निकायों/संगठनों द्वारा मान्यकृत या स्थापित या शिक्षक प्रशिक्षण में शिक्षा प्रदान करने के लिए एक मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से सम्बद्धीकृत संस्थान से शिक्षक प्रशिक्षण कोर्स में डिग्री डिप्लोमा/सर्टिफिकेट प्राप्त किया है, प्राथमिक शिक्षक के पद पर नियुक्ति का पात्र है, अगर वह अन्यथा योग्य पाया जाय और.....

9. इस प्रकार, प्रत्यर्थी संख्या 7 द्वारा दाखिल शपथपत्रों में किए गए पूर्वोक्त प्रकथनों से यह प्रतीत होता है कि राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान, सिकन्दराबाद एक सांविधिक निकाय, आर॰ सी॰ आई॰ द्वारा मान्यकृत एक प्रशिक्षण संस्थान है। यह भी प्रतीत होता है कि एन॰ आई॰ एम॰ एच॰ से प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले उम्मीदवार सामान्य छात्रों को भी पढ़ा सकते हैं क्योंकि परिषद ने कार्यक्रम इस प्रकार

तैयार किया है कि इन विशेष शिक्षकों को सभी पहलुओं में प्रशिक्षित किया गया है ताकि वे विकलांग बच्चो और साथ-साथ सामान्य बालकों की भी देख-रेख कर सकें।

10. प्रत्यर्थी संख्या, के ऐसे पक्ष की दृष्टि में और नियमावली के नियम 2(Kha) में प्रशिक्षित उम्मीदवारों की दी गई सामान्य परिभाषा की दृष्टि में, जो अपीलार्थी जैसे प्रशिक्षित उम्मीदवार को वर्जित नहीं करता, राज्य सरकार को इसके संबंध में एक निर्णय लेने का निर्देश दिया जाता है कि क्या नियमावली के नियम 2(Kha) के अधीन अपीलार्थी को एक प्रशिक्षित उम्मीदवार माना जा सकता है।

यह अपेक्षित है कि इस आदेश की एक प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से दो महीनों के भीतर ऐसा निर्णय ले लिया जाएगा।

11. इन सम्परीक्षणों एवं निर्देशों के साथ, इस अपील का निस्तारण किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o vftr dekj flUgk] U;k;efrx.k

बोसको हेम्ब्रोम

बनाम

बिहार राज्य (अब झारखण्ड)

दां॰ अपील (डी॰ बी॰) संख्या 169 वर्ष 1992 (आर)। 15 जनवरी, 2009 को विनिर्दिष्ट।

सत्र विचारण संख्या 203 वर्ष 1989 में प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश शिविर सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 7.8.1992 के दोषसिद्धि के निर्णय और दण्डादेश के विरूद्ध।

(क) भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 304, भाग I—हत्या–अचानक प्रकोपन–गंभीर एवं अचानक प्रकोपन द्वारा अपीलार्थी स्व-नियंत्रण की शक्ति खो बैठा था जिससे मृत्यु का कारण सामने आया–मामला भारतीय दण्ड संहिता की धारा 300 के अपवाद-I के अधीन आएगा–दोषसिद्धि को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304 भाग-I के अधीन सम्परिवर्तित किया गया। (पैरा 8 एवं 9)

(ख) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 172—इकबालिया बयान–जब अभियोजन ने घटना की मंशा को छुपाया–अन्वेषण पदाधिकारी परीक्षित नहीं–केस डायरी को अभिलेख पर नहीं लाया गया–ऐसी परिस्थिति में, इकबालिया बयान की अनदेखी नहीं की जा सकती। (पैरा 8)

निर्णयज विधि.–AIR 1954 SC 51; AIR 1952 SC 354—भरोसा किया गया।

अधिवक्तागण.–Mr. Naveen Kumar Jaiswal, For the Appellant; Mr. Binod Singh, For the Respondents.

आर॰ के॰ मेराठिया, न्यायमूर्ति.–सत्र विचारण संख्या 203 वर्ष 1989 में प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश शिविर सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 7.8.1992 के उस निर्णय के विरूद्ध यह अपील निर्दिष्ट है, जिसमें भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि की गई एवं उसे आजीवन कारावास का दण्डादेश किया गया।

2. फर्दबयान में यथा प्रकट अभियोजन मामला निम्नांकित रूप से है:–

गुरवा हेम्ब्रम (सूचनादाता अ॰ सा॰ 4 ने पुलिस थाना में 11.11.1988 को लगभग 10:45 बजे रात में अपना फर्दबयान दर्ज किया कि लगभग 7:30 बजे शाम में उसका पिता झोरे हेम्ब्रम (मृतक) 'बाँधना' त्योहार में भाग लेने जा रहा था और जब वह मोना हंसदा (अ॰ सा॰ 2) के घर के निकट पहुँचा तो अपने दांए हाथ में तलवार और बांए कंधे पर धनुष अपने बाएं हाथ में तीर रखे हुए अपीलार्थी ने, उसके पिता के चेहरे पर तलवार की उपहति कारित की, जिसके कारण उसका पिता सड़क पर गिर

पड़ा और रक्त बहने लगा। फिर अपीलार्थी ने दुबारा उसकी गर्दन पर तलवार से वार किया जिसमें रक्तस्राव वाली उपहतियां कारित हुई, इसपर, उसने संत्रास किया परन्तु अपीलार्थी ने उपहतियाँ कारित करना जारी रखा। संत्रास करने पर, अ० सा० 2 एवं अन्य लोग वहाँ पहुँचे और उनको देखकर अपीलार्थी अपने हथियारों के साथ अपने घर की ओर भाग गया। वहाँ एकत्रित हुए व्यक्तियों ने अपीलार्थी को उपहतियां कारित करते हुए और भागते हुए देखा था। सूचनादाता ने घटना को तब देखा जब वह त्योहार का देखने के उपरांत अपने पड़ोसी के घर में सोने जा रहा था।

ऐसे फर्दबयान पर, प्राथमिकी (प्रदर्श 3) दर्ज की गई थी।

3. आरोप-पत्र दाखिल किया गया और भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन संज्ञान लिया गया। मामले को सुपुर्द किया गया था। आरोपों को विरचित किया गया, अपीलार्थी को हिन्दी में पढ़कर सुनाया गया और स्पष्टीकृत किया गया, जिससे उसने इन्कार किया।

4. अपीलार्थी का मामला यह था कि उसे झूठ-मूठ फँसाया गया था और उसने हत्या कारित नहीं की थी।

5. अभियोजन ने नौ गवाहों को परीक्षित किया। अ० सा० 1 धानु मांझी रक्त-रंजित मिट्टी के अभिग्रहण का गवाह है।

अ० सा० 2-मोना हंसदा ने जिसे पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया था, अन्य के साथ-साथ, यह कहा कि सूचनादाता के संत्रास पर जब वह अपने घर से बाहर आया तो उसने झोरे हेम्ब्रम को मृत पड़ा पाया था जिसकी गर्दन एवं चेहरे पर उपहतियां थी। सूचनादाता उपस्थित था परन्तु उसने इसको लेकर कुछ नहीं कहा कि उसके पिता को किसने मारा। उसने यह भी कहा कि सूचनादाता के आग्रह पर वह अन्य लोगों एवं सूचनादाता के साथ पुलिस थाना गया और प्रथम सूचना रिपोर्ट पर अपने हस्ताक्षर किया। उसने प्रथम सूचना रिपोर्ट के अन्य गवाह सुरेन्द्र मुर्मू और सोनू मुर्मू के हस्ताक्षर की भी शिनाख्त की। उसने यह भी कहा कि उसने प्रथम सूचना रिपोर्ट पर हस्ताक्षर किया क्योंकि पुलिस थाने में पुलिस द्वारा उसे ऐसा करने के लिए कहा गया था। उसने उसे न तो पढ़ा, न ही इसे उसको पढ़कर सुनाया गया था। उसने पुलिस के डर के कारण एक अन्य दस्तावेज पर हस्ताक्षर किया। उसने यह भी कहा कि पुलिस ने घटना की संध्या में अपीलार्थी को गिरफ्तार किया, जिसने अपना दोष कबूल किया जिस पर उसने हस्ताक्षर किया परन्तु स्वीकारोक्ति पुलिस के दबाव पर हुई थी। प्रति-परीक्षा में उसने कहा कि झोरे हेम्ब्रम का शव उसके घर के दरबाजे से लगभग 6-8 फुट की दूरी पर सड़क पर पड़ा हुआ था।

अ० सा० 3 कान्हू हंसदा को भी पक्षद्रोही घोषित किया गया। उसने कहा कि उसने अपने घर से लगभग 25-30 फुट की दूरी पर झोरे हेम्ब्रम के शव को सड़क पर देखा जिसकी गर्दन एवं चेहरे पर रक्तस्राव वाली उपहतियाँ थी। अपीलार्थी उपस्थित था। गांववाले भी एकत्रित हो गये। सूचनादाता ने उसे बताया कि अपीलार्थी भाग गया है। उसने कटघरे में अपीलार्थी की शिनाख्त की।

अ० सा० 4 गुरवा हेम्ब्रम सूचनादाता है। उसने अन्य बातों के साथ-साथ कहा कि त्योहार के पूर्व संध्या पर घटना के दिन लगभग 7 बजे शाम में, उसका पिता (मृतक) सड़क पर टहल रहा था। सूचनादाता सोने के लिए चमरू के घर जा रहा था। जब उसका पिता अ० सा० 2 के घर के निकट पहुँचा, तो अपीलार्थी वहाँ हथियारों के साथ आया और उसके पिता के चेहरे पर उपहतियाँ कारित की जिसके कारण वह रोड पर गिर पड़ा और तब उसने पुनः उसके गर्दन पर तलवार से उपहतियाँ कारित की, जिसके कारण उसकी मृत्यु हो गई। उसके संत्रास पर, गाँववाले जमा हो गए और उन्हें देखकर अपीलार्थी भाग गया। वह अ० सा० 2 एवं अन्य के साथ पुलिस थाना गया और प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई, जिसे उसे पढ़कर सुनाया गया और उसके द्वारा समझा गया और तब उसने हस्ताक्षर किया। उसने कटघरे में अपीलार्थी को शिनाख्त की। प्रति-परीक्षा में, उसने कहा कि जब उसके पिता पर हमला किया गया था, तो यह गवाह चमरू के घर के सामने लगभग 100 फुट की दूरी पर था। वह अकेला था। घटना अ०

सा० 2 के घर के सामने घटित हुई थी। उसने अपीलार्थी से यह नहीं पूछा कि क्यों उसने उसके पिता पर हमला कर रहा था। उसका पिता अपने चेहरे पर तलवार के प्रथम हमले से ही गिर पड़ा। वह डर के कारण, घटना-स्थल के निकट नहीं गया। जब अपीलार्थी ने उसके पिता की गर्दन पर दूसरा प्रहार किया तब भी वह चमरू के घर के आगे खड़ा था। चमरू अपने घर में खाना खा रहा था। अ० सा० 2 एवं अन्य लोग उसके संत्रास पर घटना-स्थल पहुँचे। चमरू नहीं आया। जब तक वह घटना-स्थल पहुँचा, उसका पिता मर चुका था। उसके पिता ने रात्रि का भोजन नहीं किया था परन्तु मदिरापान के उपरांत वह टहल रहा था। अपीलार्थी घटना की तिथि को अपने ससुराल वालों के घर गया था जो गॉव से 5-7 कि० मी० की दूरी पर था और शाम में लौटा था। घटना के पश्चात्, वह अपीलार्थी के घर नहीं गया। पुलिस एवं गॉववाले अपीलार्थी के घर गए परन्तु वह अपने घर में नहीं था। उसने इन्कार किया कि अपीलार्थी रात्रि में लगभग 12 बजे अपने घर लौटा था। उसने भूमि विवाद के कारण अपीलार्थी को झूठ-मूठ फँसाने से इन्कार किया।

अ० सा० 5 मान सिंह गोप जिसे भी पक्षद्रोही घोषित किया गया था, ने कहा कि उसने अन्यों से सुना कि अपीलार्थी ने मृतक को मार दिया था। अपीलार्थी के घर से तलवार बरामद की गई थी परन्तु इस गवाह ने तलवार की अभिग्रहण सूची पर अपने हस्ताक्षर करने से या इस बात से इनकार किया कि इसे अपीलार्थी की निशानदेही पर उसके घर से बरामद किया गया था।

अ० सा० 6 मंगल मांझी ने कहा कि सूचनादाता एवं अन्य ने उसे बताया कि अपीलार्थी ने उसके पिता को मारा था। उसका घर घटना-स्थल से 8-10 फीट की दूरी पर था। जब वह वहाँ पहुँचा तो उसने सूचनादाता, अ० सा० 2 एवं अन्यों को उपस्थित पाया।

अ० सा० 7 करन मुर्मू एक tendered गवाह है।

अ० सा० 8 डॉक्टर अरूण कुमार गुप्ता है, जिसने 11.11.1988 को लगभग 3 बजे अपराह्न में पोस्टमार्टम किया और निम्नांकित मृत्यु-पूर्व उपहतियां पाई।

> "(i) बांयी भौंह के ऊपर हड्डियों को शामिल करने वाला 6" x 2" x माप का विर्दीण घाव जो तिर्यक था।
>
> (ii) ठुड्डी के ठीक नीचे मांसपेशी की गहराई तक गया 4" x 2" माप का विर्दीण घाव।''

उसने यह भी गवाही दी है कि विच्छेदन पर उसने पाया कि पेरिटल अस्थि और फ्रोन्टल अस्थि बीच में कट गई थी। Maninges बीच में होकर कटे थे और मस्तिष्क के अवपत्र शामिल थे। उसने यह भी गवाही दी है कि वक्ष, उदर, पसलियाँ अक्षुण्ण थी, हृदय और फेफड़े भी अक्षुण्ण थे। पेट खाली था, थैली भी खाली थी और यकृत, वृक्क एवं प्लीहा अक्षुण्ण थे। उसने मत दिया कि उपहतियों में मस्तिष्क पदार्थ की अंतर्ग्रस्तता के कारण सदमे एवं रक्त-स्त्राव से मृत्यु हुई थी। उसने यह भी राय दी कि उपहति संख्या (i) एवं (ii) तीक्ष्ण धार वाले हथियारों से कारित की गई थी जो एक तलवार हो सकती थी और प्रकृति के समान अनुक्रम में उपहति संख्या (i) मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी। उसने अपनी पोस्टमार्टम रिपोर्ट भी सिद्ध की जिसे प्रदर्श-2 के तौर पर चिन्हित किया गया था। प्रति-परीक्षा में उसने गवाही दी कि उसने मृतक के शव पर केवल दो उपहतियाँ पाई थी जो संभवत: दो प्रहार करके कारित की गई है। प्रति-परीक्षा में उसने यह भी कहा कि उसने कोई अन्य उपहति नहीं पाई। उसने यह भी कहा कि तीक्ष्ण धारवाले पत्थरों से भी उपहतियाँ संभव थी।

6. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि स्वतंत्र गवाहों को पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है और अभियोजन ने मामले को सटीक रूप से सिद्ध नहीं किया है। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि मंशा सिद्ध नहीं की गई है और सूचनादाता ने सही वृत्तांत को छुपाया था।

7. अ॰ सा॰ 2, 3 एवं 5 को पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है। अ॰ सा॰ 6 एक अनुश्रुत गवाह है। अ॰ सा॰ 7 एक संदत्त गवाह है। अ॰ सा॰ 1 अभिग्रहण सूची का एक गवाह है। अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों से, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी ने मृतक पर तीक्ष्ण धारवाले हथियारों से, पहले उसके चेहरे पर, और जब वह जमीन पर गिर पड़ा तो उसकी गर्दन पर उपहतियाँ कारित की थी। अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3 एवं अ॰ सा॰ 8 ने अ॰ सा॰ 4 के साक्ष्य और उक्त उपहतियाँ का भी संपोषण किया है। अ॰ सा॰ 2 ने स्वीकार किया कि उसने और अन्य ने फर्दबयान पर अपने हस्ताक्षर किए थे। साक्ष्य में यह भी आया है कि घटना-स्थल पर, अपीलार्थी मौजूद था। विचारण न्यायालय ने उचित रूप से अवधारित किया कि अपीलार्थी ने मृतक की हत्या की थी।

8. यह सही है कि अपीलार्थी ने मृतक के शरीर के मर्मभूत हिस्सों पर तीक्ष्ण धार वाले हथियारों से बार-बार उपहतियाँ कारित की जिसके कारण वह मर गया, परन्तु यह जाँचना आवश्यक है कि क्या यह एक हत्या या आपराधिक मानववध का मामला है जो हत्या के समतुल्य नहीं है। दुर्भाग्यवश, इस मामले में अन्वेषण पदाधिकारी को परीक्षित नहीं किया गया है। विचारण न्यायालय ने इकबालिया बयान को महत्व नहीं दिया। यह सिद्ध नहीं किया गया था। यद्यपि, अ॰ सा॰ 2 ने कहा कि अपीलार्थी को इकबालिया बयान देने के लिए मजबूर किया गया था और यह कि इस गवाह ने उसपर पुलिस के कहने पर हस्ताक्षर किया था, परन्तु सत्य का पता लगाने के लिए, हमारे द्वारा इकबालिया बयान की सूक्ष्म जाँच की गई थी। अपने इकबालिया बयान में, अपीलार्थी ने स्वीकार किया कि उसने मृतक की हत्या की थी, परन्तु उसने यह भी कहा कि मृतक, जो उसका चाचा था, ने अपीलार्थी की माता के साथ झगड़ा किया था और जब उसने इसके बारे में बताया, तो अपीलार्थी मृतक के पास झगड़े के बारे में पूछने के लिए गया; और यह कि जब वह अ॰ सा॰ 2 के घर के निकट मृतक से मिला, तो मृतक अपीलार्थी पर लकड़ी से वार करना चाहता था; जिसपर अपीलार्थी अपने घर की ओर दौडा, तलवार ले आया और मृतक का पीछा किया एवं अ॰ सा॰ 2 के घर के सामने उस पर हमला किया, जिसके कारण उसकी मृत्यु हो गई; और यह कि गाँववालों को घटनास्थल की ओर आते देखकर वह भाग गया; और यह कि उसने एक सुनसान जगह पर अपनी तलवार फेंक दी; और यह कि जैसा कि उसे लोगों द्वारा सलाह दी गई थी, वह अपने घर की ओर लौट रहा था, जब उसे गिरफ्तार किया गया; यह कि वह अपने चाचा (मृतक) द्वारा अपनी माता को दी गई गालियाँ को सहन नहीं कर सका और इसलिए उसने उसे मार दिया। इस इकबालिया बयान पर अपीलार्थी द्वारा हस्ताक्षर किया गया था। अ॰ सा॰ 2 मोना हंसदा ने एक गवाह के तौर पर इसपर हस्ताक्षर किया है। किसी सानो मुर्मू और सुरेन्द्र मुर्मू ने भी गवाह के तौर पर इसपर हस्ताक्षर किए है। अ॰ सा॰ 2 ने स्वीकार किया है कि वह सानो मुर्मू और सुरेन्द्र मुर्मू के साथ-साथ वह भी सूचनादाता के साथ पुलिस थाना गया था। यह सही है कि उक्त स्वीकारोक्ति को सिद्ध नहीं किया गया है और यह कि अन्वेषण अधिकारी (I.O.) को इस मामले में परीक्षित नहीं किया गया है परन्तु मात्र उसी कारण से इकबालिया बयान की अनदेखी नहीं की जा सकती, विशेषकर जब अभियोजन ने घटना के पीछे मंशा को छुपाए रखा। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 172 (2) के परिधि के संबंध में **ए॰ आई॰ आर॰ 1954 एस॰ सी॰ 51-हबीब मोहम्मद बनाम हैदराबाद राज्य** में रिपोर्ट किया गया मामला सुसंगत है। उक्त मामले में अन्वेषण में, विलम्ब हुआ था और अन्वेषण अधिकारी द्वारा डायरी को अभिलेख पर नहीं लाया गया था। तथापि, विचारण न्यायालय ने इसकी मांग की और अभियोजन साक्ष्य का संपोषण करने के लिए इसका इस्तेमाल किया। निर्णय के पैराग्राफ 13 में, निम्नांकित रूप से सम्परीक्षित किया गया:-

> " धारा 172 प्रावधान करती है कि कोई दाण्डिक न्यायालय ऐसे न्यायालय में जांच या विचाराधीन एक मामले की पुलिस डायरी मंगवा सकता है ऐसी डायरी का और इसका उपयोग कर सकता है मामले में साक्ष्य के तौर पर नहीं बल्कि ''ऐसी जाँच या विचारण में इसकी सहायता करने के लिए''। हमें यह प्रतीत होता है कि विद्वान न्यायाधीश अपने निर्णय में पुलिस डायरी

का इस्तेमाल करने में और उन डायरियों में निहित कथनों से साक्ष्य के मूल्यांकन के प्रश्न पर अपनी मत की संपुष्टि इप्सित करने में त्रुटि पर थी। वे इन डायरियों का जो एकमात्र उचित उपयोग कर सकते थे वह दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 172 द्वारा अनुज्ञात है, अर्थात् विचारण के दौरान वह उन अग्रेतर विशदकारी विन्दुओं के साधनो को इंगित करके उनसे वह सहायता प्राप्त कर सकते थे जिन्हें और स्पष्ट करने की आवश्यकता थी और राज्य और अभियुक्त के बीच न्याय करने के प्रयोजन के लिए जो तात्विक हो सकता था।''

ऊपर नोट किए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों और विधिक स्थिति की दृष्टि में, हम वृत्तांत का स्पष्टीकरण करने और इस अपील में, जो विचारण के सतत्ता में है न्याय करने के लिए और एक सहायता/मदद के तौर पर अपीलार्थी के इकबालिया बयान का इस्तेमाल करने के इच्छुक हैं।

ए॰ आई॰ आर॰ 1952 एस॰ सी॰ 354 पलविन्दर कौर बनाम पंजाब राज्य में रिपोर्ट किए गए मामले में, यह अवधारित किया गया है कि स्वीकारोक्ति एवं संस्वीकृति को या तो पूरे तौर पर स्वीकार या पूरे तौर पर खारिज किया जाना अनिवार्य है और न्यायालय निरपराधी सिद्ध करने वाले भाग को खारिज करते समय केवल अपराध सिद्ध करने वाले भाग को स्वीकारने में सक्षम नहीं है। अपीलार्थी के इकबालिया बयान से, वर्तमान मामला आपराधिक मानववध जो हत्या के समतुल्य नहीं है का एक मामला प्रतीत होता है और यह भारतीय दण्ड संहिता की धारा 300 के अपवाद 1 के अधीन आता है। अ॰ सा॰ 4, जो मृतक का पुत्र है ने स्वयं कहा था कि मदिरापान करने के उपरांत मृतक टहल रहा था। इकबालिया बयान में, अपीलार्थी ने मृतक और उसकी माता के बीच झगड़े के बारे में बताया था और यह कि जब वह झगड़े के बारे में मृतक से बात करने गया तो मृतक को अपीलार्थी पर हमला करने की कोशिश करना बताया गया है; जिस पर वह अपने घर की ओर भागा, तलवार ले आया मृतक पर प्राणघातक उपहतियाँ कारित की। यह प्रतीत होता है कि गंभीर एवं अचानक उकसाए जाने से अपीलार्थी आत्म नियंत्रण की शक्ति से वंचित हो गया था। अभियोजन के मामले के अनुसार, अपीलार्थी का मृतक के साथ इस तथ्य की दृष्टि में कुछ झगड़ा हुआ था कि मृतक ने उसकी माता के साथ गाली-गलौज की थी, और जब अपीलार्थी ने इस पर आपत्ति की तो मृतक उससे झगड़ पड़ा और एक लाठी से अपीलार्थी पर हमला करने का प्रयास किया और गंभीर एवं अचानक उसकाये जाने और अपमानित महसूस करने पर अपीलार्थी अपने घर की ओर दौड़ा और, एक तलवार ले आया तथा मृतक पर जानलेवा चोटें कारित कर दी।

इस प्रकार यह एक आपराधिक मानववध का मामला है जो हत्या के तुल्य नहीं है क्योंकि गंभीर एवं अचानक रूप से भड़काए जाने के कारण अपीलार्थी आत्म नियंत्रण की शक्ति से वंचित हो गया था जिसके परिणामत: उकसाये जाने से मृत्यु का कारण उत्पन्न हुआ और इस प्रकार यह भारतीय दण्ड संहिता की धारा 300 के अपवाद-I के अधीन आयेगा और उसे भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304 भाग-I के अधीन दण्डादेश किया जाना चाहिए।

9. ऐसी परिस्थितियों में, हम दोषसिद्धि को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304 भाग I के अधीन दोषसिद्धि में सम्परिवर्तित करने के इच्छुक हैं।

दण्डादेश के प्रश्न पर, यह प्रतीत होता है कि घटना लगभग 20 वर्ष पहले घटित हुई थी। विचारण न्यायालय ने यह भी सम्परीक्षित किया कि अपराध को कारित करने के लिए पहले से कोई योजना नहीं थी और हत्या कारित करने की मंशा को अभिलेख पर नहीं लाया गया है। अपीलार्थी को चार वर्षों से अधिक जेल में रहने के उपरांत 15 वर्ष पहले यानि 24.3.1993 को इस अपील में जमानत प्रदान की गई थी। हमारे विचार में, और दण्डादेश भुगतने के लिए इस चरण में अपीलार्थी को जेल भेजना उपयुक्त नहीं होगा।

इन परिस्थितियों में, हम उसके दण्डादेश को पहले ही भुगत ली गई अवधि तक सीमित करने के इच्छुक हैं। परिणामत:, दोषसिद्धि एवं दण्डादेश में यथा पूर्वोक्त उपान्तरण के साथ इस अपील का निस्तारण किया जाता है। अपीलार्थी को उसके जमानत बन्धपत्र से उन्मोचित किया जाता है।

ekuuh; Kku lèkk feJk] e[; U;k;kèkh'k ,o Mhñ dñ flUgk] U;k;efr

फैज मुर्तजा अली

बनाम

सैयद अस्करी हादी अली ऑगस्टीन ईमाम एवं एक अन्य

सी॰ आर॰ संख्या 46 वर्ष 2008. 6 फरवरी, 2009 को विनिश्चित।

वसीयती उत्तराधिकार–सिविल पुनर्विलोकन–याची को प्रोबेट मामले में प्रतिवाद करने से इस आधार पर रोका गया था कि उसका केवियट हित नहीं था–अभिनिर्धारित, प्रश्नगत संपत्ति वसीयतकर्ता/वसीयतकर्ती की अनन्य संपत्ति नहीं थी, क्योंकि वह अविवाहित थी एवं इस प्रकार उसकी मृत्यु के पश्चात्, चूँकि उसकी अपनी माँ से पहले ही मृत्यु हो गयी थी, उसके शेयर को मात्र विधिक उत्तराधिकारी को ही प्रतिवर्तित किया जा सकता था–क्या उसका शेयर मुस्लिम विधि के अनुसार उसके भाई एवं तत्पश्चात उनके पुत्र को न्यागत होगा, यह सक्षम अधिकारिता के एक न्यायालय के न्यायनिर्णयन का विषय वस्तु होगा–वसीयत को प्रोबेट की मांग करने वाले वसीयती मामले में, याची को इसका प्रतिवाद करने के अवसर से वंचित नहीं किया जा सकता है, विशेषकर तब, जब वसीयत की यथार्थता एवं सत्यता को चुनौती दी गयी हो–एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश एवं एल॰ पी॰ ए॰ में पारित आदेश–अपास्त–पुनर्विलोकन अनुज्ञात। (पैरा 1 से 8)

अधिवक्तागण.–M/s S.S. Maheshwari, S.K. Dwivedi, For the Petitioner; Mr. P.K. Prasad, For the Respondents.

आदेश

पुनर्विलोकन हेतु यह याचिका याची को प्रोबेट मामले में प्रतिवाद करने से इस आधार पर रोकने वाले वसीयत केस सं॰ 1 वर्ष 2003 में 4.1.2008 को विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश साथ ही एल॰ पी॰ ए॰ संख्या 33 वर्ष 2008 में पारित 2.4.2008 के आदेश के विरूद्ध निर्दिष्ट है कि उसे केवियट सम्बन्धी कोई हित नहीं है।

2. प्रथम दृष्टया, हमने नोटिस किया है कि तथाकथित वसीयतकर्ता/वसीयतकर्ती शमीम अम्ना ईमाम ने यह संपत्ति अपने ससुरालवालों से विरासत में नहीं पायी क्योंकि स्वीकार्यत: वह अविवाहित थी एवं इस प्रकार, प्रश्नगत संपत्ति, जिसके बारे में शमीम अम्ना ईमाम द्वारा वसीयत निष्पादित किये जाने का अभिकथन किया गया है, उसका अनन्य या स्वअर्जित संपत्ति नहीं था, क्योंकि उसकी माँ, सईदा मेंहदी ईमाम, एवं माँ के भाई, अर्थात्, वसीयतकर्ती के मामा, स्व॰ (न्यायमूर्ति) सैयद मुर्तजा फजल अली अभिकथित वसीयतकर्ता/वसीयतकर्ती के जीवनकाल के दौरान जीवित थे, जो मुस्लिम विधि के अधीन एक शेयर का दावा कर रहे हैं।

3. वर्तमान याची फैज मुर्तजा अली स्व॰ (न्यायमूर्ति) सैयद मुर्तजा फजल अली के पुत्र, अर्थात्, वसीयतकर्त्ता/वसीयतकर्ती के प्रथम ममेरे भाई हैं।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण, सैयद अस्करी हादी अली ऑगस्टीन ईमाम एवं सैयद हसन फ्रांसिस ईमाम, जो शमीम अम्ना ईमाम द्वारा निष्पादित वसीयत के कारण संपत्ति में दावा कर रहे हैं, को आत्यंतिक रूप से उस संपत्ति से कोई लेना-देना नहीं था जो न केवल वसीयतकर्ता/वसीयतकर्ती शमीम अम्ना ईमाम की थी, अपितु उसकी माता, सईदा मेंहदी ईमाम की भी थी एवं मुस्लिम विधि के अनुसार उसके भाई स्व॰ मुर्तजा फैजल अली, जो सईदा मेंहदी ईमाम का भाई, अर्थात्, शमीम अम्ना ईमाम का

मामा था, की भी थी। इस प्रकार, संपत्ति मुस्लिम विधि के अधीन उत्तराधिकार द्वारा न केवल शमीम अम्ना ईमाम अपितु उसकी माता सईदा मेंहदी ईमाम को भी न्यागत हुई थी क्योंकि वसीयतकर्त्ता/वसीयतकर्ती अपनी माता एवं उनके भाई स्व॰ (न्यायमूर्त्ति) सैयद मुर्तजा फजल अर्थात् वसीयतकर्ता/वसीयतकर्ती के मामा के पूर्व ही दिवंगत हो गयी थी। इसलिए, प्रथम दृष्टया, प्रश्नगत संपत्ति, मुस्लिम विधि के अंतर्गत सईदा मेंहदी ईमाम, स्व॰ (न्यायमूर्ति) सैयद मुर्तजा फजल अली एवं वसीयतकर्ता/वसीयतकर्ती, शमीम अम्ना ईमाम को भी समान शेयरों में न्यागत हुई क्योंकि प्रश्नगत संपत्ति वसीयतकर्ता/वसीयतकर्ती शमीम अम्ना ईमाम की अनन्य संपत्ति नहीं थी। इस प्रकार, यदि प्रश्नगत संपत्ति तथाकथित वसीयतकर्ता/वसीयतकर्ती शमीम अम्ना ईमाम की अनन्य संपत्ति नहीं थी तब वसीयत के फलस्वरूप संपूर्ण संपत्ति एक तृतीय पक्षकार को स्थानान्तरित नहीं की जा सकती थी जो वसीयतकर्ता/वसीयतकर्ती के दादा स्व॰ सैयद हसन ईमाम की द्वितीय पत्नी के शाखा की थी। इस स्थिति को स्पष्टता से समझने के लिए निम्नरूप से एक वंशावली दी गयी है:–

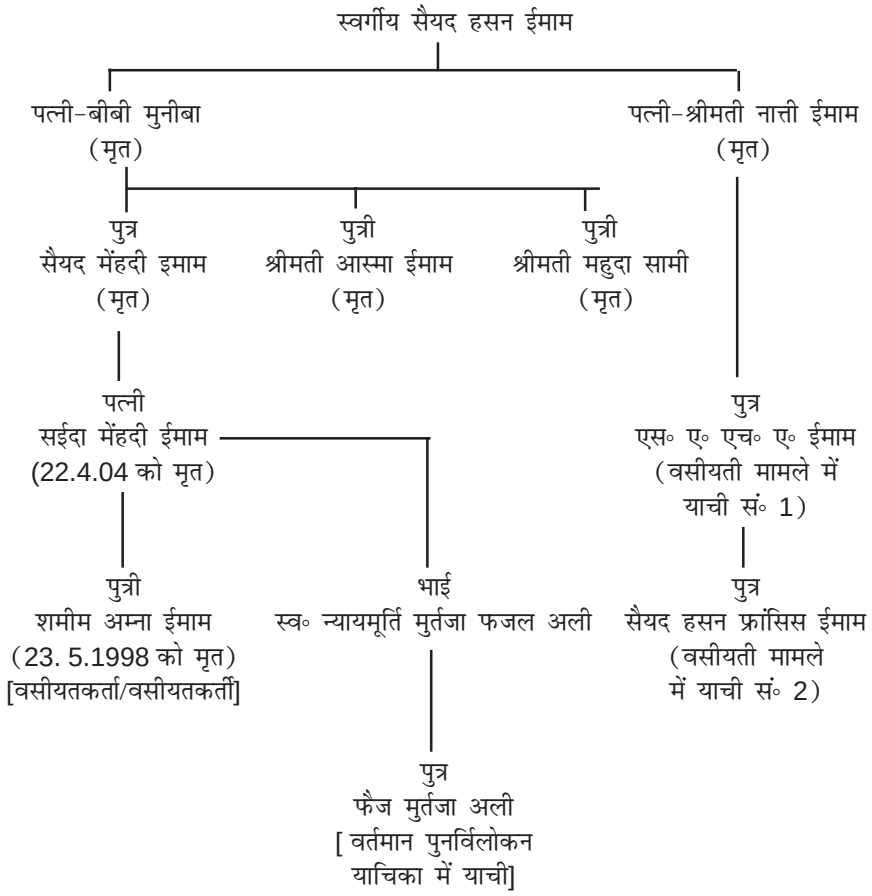

5. इस स्थिति की दृष्टि में, जैसा कि इसमें इसके पूर्व इंगित किया गया है, प्रथम दृष्टया यह अभिनिर्धारित करना संभव नहीं है कि याची का प्रश्नगत संपत्ति में, कैविएट हित नहीं है जिसे एक ऐसे वसीयत के माध्यम से प्रत्यर्थीगण के पक्ष में स्थानान्तरित किये जाने का दावा किया गया है जो शमीम अम्ना ईमाम द्वारा निष्पादित किया गया अभिकथित किया गया है। पुनरावृत्ति के जोखिम पर भी, हम इसे स्पष्ट करना न्यायोचित एवं समुचित समझते हैं कि प्रश्नगत संपत्ति वसीयतकर्ता/वसीयतकर्ती शमीम अम्ना ईमाम की अनन्य संपत्ति नहीं थी क्योंकि वह अविवाहित थी एवं इसलिए उसकी मृत्यु के

पश्चात–चूँकि उसकी मृत्यु अपनी माँ के पूर्व ही हो गयी थी, उसके शेयर को मात्र विधिक उत्तराधिकारी अर्थात् सईदा मेंहदी ईमाम को ही प्रतिवर्तित किया जा सकता था एवं क्या उसका शेयर मुस्लिम विधि के अंतर्गत उसके भाई स्व॰ (न्यायमूर्ति) मुर्तजा फजल अली को एवं तत्पश्चात् उनके पुत्र फैज फजल अली को न्यागत होगा, यह सक्षम अधिकारिता के एक न्यायालय के न्यायनिर्णयन का एक विषय वस्तु होगा, जहाँ याची पहले ही एक वाद दाखिल कर चुका है एवं इस प्रकार वसीयत के प्रोबेट की मांग करने वाले वसीयती मामले में, याची को इसका प्रतिवाद करने के अवसर से वंचित नहीं किया जा सकता है, विशेषकर, जब दिवंगत शमीम अम्ना ईमाम द्वारा अभिकथित तौर पर निष्पादित वसीयत की यर्थायता एवं सत्यता को भी चुनौती दी गयी है।

6. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस न्यायालय द्वारा किये गए सम्प्रेक्षण सक्षम अधिकारिता के न्यायालय के समक्ष प्रतिवादी पक्षकारों के मामले को प्रतिकूल प्रभावित नहीं करेगा क्योंकि वे मात्र प्रथम दृष्टया प्रकृति के हैं। यद्यपि, इस प्रक्रम पर यह अभिनिर्धारित करना न्यायोचित एवं उचित नहीं होगा कि याची का उस संपत्ति में कोई कैविएट हित नहीं है, जिसे शमीम अम्ना ईमाम द्वारा वसीयत के माध्यम से प्रत्यर्थीगण के पक्ष में हस्तांतरित किए जाने का दावा किया गया है, जो कि एक पूर्णत: भिन्न शाखा का है, जो कि इसमें इसके पूर्व दी गयी वंशावली तालिका के परिशीलन से सुव्यक्त होगा। इस प्रकार, विद्वान एकल न्यायाधीश का इस प्रभाव का निष्कर्ष किसी भी प्रकार से न्यायोचित या उचित प्रतीत नहीं होता है कि याची का कोई कैविएट हित नहीं है ताकि उसे प्रोबेट मामले में प्रतिवाद करने के अधिकार से वंचित किया जा सके।

7. इस प्रकार, वसीयती मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेश, इसमें यह अभिनिर्धारित करते हुए कि याची का उस संपत्ति में कोई कैविएट हित नहीं है, जिसके सम्बन्ध में वसीयत को निष्पादित किए जाने का अभिकथन किया गया है, प्रत्यक्षत: अभिलेख की त्रुटि होनी प्रतीत होती है एवं इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता है। वसीयत मामला सं॰ 1 वर्ष 2003 में पारित दिनांक 4.1.2008 के आक्षेपित आदेश एवं वसीयती मामले से उद्भूत एल॰ पी॰ ए॰ संख्या 32 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 2.4.2008 के आदेश को क्रमश: अपास्त किया जाता है एवं वसीयती मामले को ग्रहण करने वाले न्यायालय को मामले में याची को भी सुनने की अनुमति प्रदान करने का निर्देश दिया गया। उसे प्रोबेट मामले में पक्षकार प्रत्यर्थी के तौर पर पक्षकार बनाये जाने की भी अनुमति दी जा सकती है, यदि इस सम्बन्ध में कोई अन्य विधिक अड़चन एवं विवक्षाएँ न हों।

8. चूँकि आक्षेपित आदेशों को अपास्त किया गया है इसलिए याची को अड़चन/मध्यक्षेप के लिए नये सिरे से आवेदन दाखिल करने की छूट होगी क्योंकि वर्तमान में यह नोटिस किया जा सकता है कि याची को उस वसीयत के सम्बन्ध में वसीयत मामले में एक स्पष्ट कैविएट हित है जो शमीम अम्ना ईमाम द्वारा निष्पादित किया गया अभिकथित किया गया है।

इन परिस्थितियों में, पुनर्विलोकन आवेदन अनुज्ञात किया जाता है, परन्तु व्ययों के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं होगा।